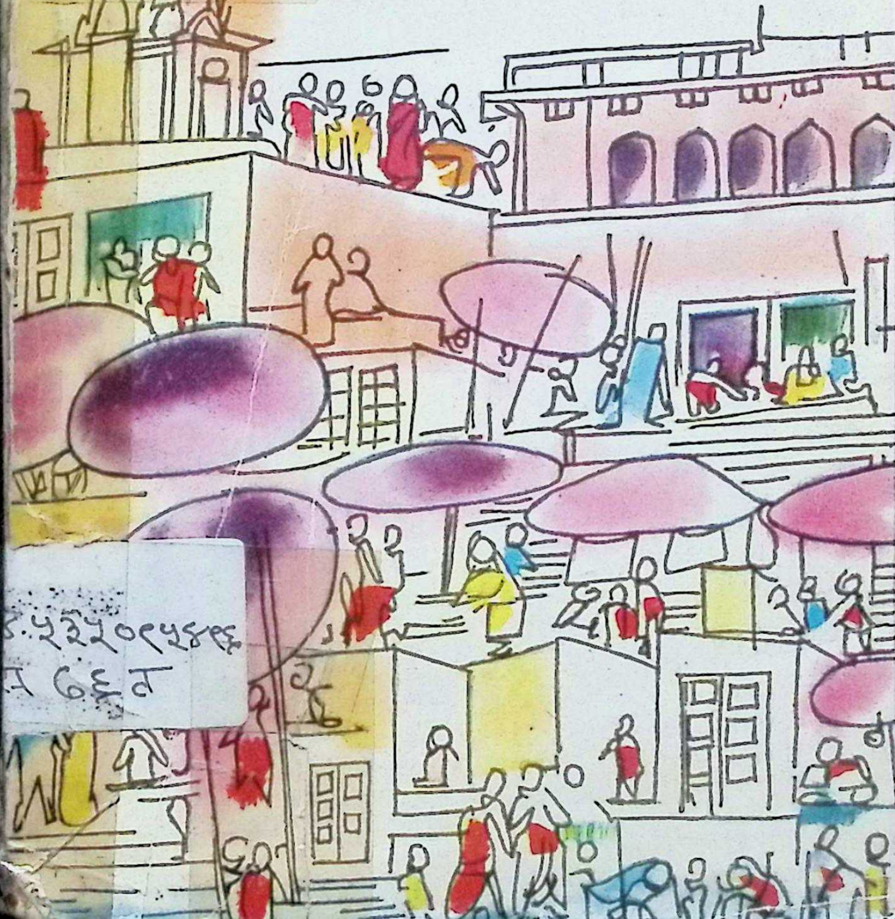
नदियों की कहानी

सरस्वती रामनाथ

गोदावरी



नदियों की कहानी

गोदावरी

सरस्वती रामनाथ

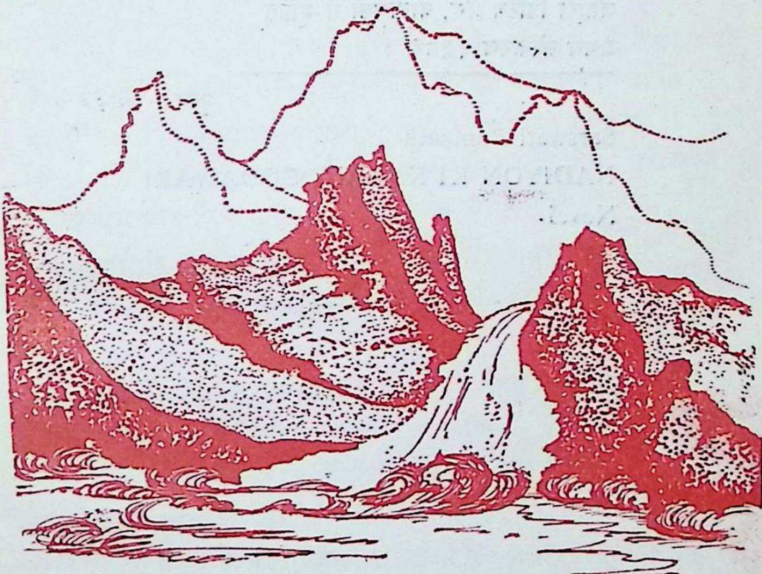
सरस्वती रामनाथ

७ सितम्बर १९२४ को कोयम्बटूर (तमिलनाडु) में जन्मी श्रीमती सरस्वती रामनाथ तमिल और हिन्दी की प्रख्यात लेखिका हैं। बहुभाषाविद हैं। मौलिक ग्रन्थों के अतिरिक्त इन्होंने अनेक तमिल पुस्तकों का हिन्दी में तथा हिन्दी, बंगला, गुजराती और मराठी का तमिल में अनुवाद किया है। सर्जनात्मक कथा साहित्य के अतिरिक्त बाल साहित्य की तीन सीरीज तथा पाँच स्वतन्त्र पुस्तकों का तमिल में आपने लेखन किया है। हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के उन्नीस उपन्यासों का भी आपने तमिल में अनुवाद किया है। तमिल में नदियों की कहानी सीरीज बहुचर्चित हुई है।

इनके कृति स्तम्भों में कम्बन रामायण का हिन्दी अनुवाद, प्रेमचन्द की जीवनी तथा महाभारत का तमिल अनुवाद है। अनेक पुरस्कारों से अलंकृत आपका संपूर्ण कर्तृत्व हिन्दी और तमिल का दृढ़ सेतु है।

सम्पर्कसूत्र
नं० १२ (अपस्टेयर्स)
बिलून गार्डेन, कोआपरेटिव हाउसिंग
सोसाइटी ले आउट,
लालजी नगर, बैंग्लोर ५६००३६

B: धर्म
K: हिन्दु धर्म, नदी



(नदियों की कहानी गोदावरी)

भारत के प्रथम बुक क्लब
प्रचारक बुक क्लब
हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो० बा० ११०६, पिशाचमोचन, वाराणसी
–२२१००१ के लिए

विजय प्रकाश बेरी द्वारा प्रकाशित तथा
जौहरी प्रिंटिंग प्रेस, वाराणसी में मुद्रित
प्रथम संस्करण १९८६

मूल्य : १०·००

Sarswati Ramnath
NADIYON KI KAHANI GODAWARI
Novel

गोदावरी की कहानी

अध्याय : १

मेरा नाम गोदावरी है। प्यार से मुझे 'गोदा' भी कहा जाता है। 'गोदा' अर्थात् पवित्र जल एवं उत्तम गायों को प्रदान करने वाली। मेरा एक नाम 'गौतमी' भी है। इसलिये गो-हत्या के पाप से मुक्ति के लिये गौतम ऋषि मुझे धरती पर लाये थे। मेरे जन्म से सम्बन्धित पौराणिक कथा जितनी रोचक है, उतनी ही प्रेरक भी।

ब्रह्मगिरि ! आज के महाराष्ट्र का एक गगनचुम्बी पर्वत—पौराणिक कथा के अनुसार ब्रह्मगिरि के रूप में ब्रह्मा ही शिव का एक शाप भुगत रहे हैं।

कहते हैं, एक बार कैलाश के हिमाच्छादित पर्वतों पर रहते-रहते शिव का दिल ऊब गया। भू-लोक में आकर मानवों के सुख-दुःख भरे जीवन को देखने और उनसे मिलने की उन्हें इच्छा हो आयी।

पार्वती शिव के मन की बात जानते ही तुरन्त 'माया' का रूप धारण कर ब्रह्मा के पास पहुँचीं। माया के प्रताप का क्या कहना ? ब्रह्मा बोल उठे, 'त्रिमूर्तियों में मैं ही श्रेष्ठ हूँ—सर्वं ब्रह्ममयम्। मुझसे बड़ा कोई नहीं।'

देवताओं ने पूछा, 'तब तो आपने जटाजूट शिव के चरणदलों का दर्शन किया होगा। उसका आदि और अन्त जानते होंगे।'

ब्रह्मा ने 'केवड़े' और कामधेनु को साक्षी बनाकर सिद्ध कर दिया कि उन्होंने शिव का दर्शन किया है।

उनके मिथ्या भाषण से क्रुद्ध होकर शिव ने उन्हें शाप दे दिया कि वे भू-लोक में एक पर्वत बन जायँ।

इस तरह ब्रह्मा शापवश ब्रह्मगिरि पर्वत बने और धरती पर आ गये। अपनी भूल पर पछताकर उन्होंने शिव से प्रार्थना की कि वे भी उनके साथ-साथ रहने की कृपा करें।

और—ब्रह्मगिरि की ऊँची चोटी त्रयंबक पर त्रिनेत्रधारी शिव आज भी एक मन्दिर में विराजमान हैं।

यहीं गौतम मुनि का भी आश्रम था। मुनि अपनी पत्नी अहिल्या के साथ बड़ी शांति से अपना दिन बिता रहे थे। कुछ वर्षों तक लगातार वर्षा न हुई। अनावृष्टि के कारण खेत सूख गये। अकाल पड़ गया। लोग हाहाकार कर उठे। लोगों के कष्टों की सीमा नहीं। गौतम मुनि से यह देखा न गया। उन्होंने वरुण को प्रसन्न करने के लिये घोर तपस्या की।

उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर वरुण ने उपाय बताया—'यहाँ पर एक तालाब खुदवाओ और उसके पानी से खेतों की सिंचाई करो।' उन्होंने यह भी आश्वासन दिया कि तालाब का पानी कभी न सूखेगा।

गौतम मुनि ने वरुण के आदेशानुसार तालाब खुदवाया और उसकी अजस्र धारा से खेतों की सिंचाई करने लगे। अब खेतों में हरियाली लहराने लगी। अच्छी फसल हुई। चारों ओर प्रसन्नता छा गई। लेकिन, आसपास के प्रदेशों में रहनेवाले मुनिजन गौतम मुनि के इस समृद्धि पर जल उठे। उन्होंने अपनी तपस्या के बल पर एक मायाविनी गाय को जन्म देकर गौतम मुनि के खेतों में चरने भेज दिया। गौतम मुनि यह देखकर चकरा गये। उनकी समझ में न आया कि क्या करें। गाय तो गो-माता ठहरी। उसे छड़ी से मार भगाना या मारना पाप है। उधर मायाविनी गाय उनके खेतों को नष्ट किये जा रही थी। आखिर तंग आकर गौतम मुनि ने एक कुश को उठाकर गाय की तरफ फेंका। कुश के लगते ही मायाविनी गाय

वहीं गिरकर मर गई। गो-हत्या के पाप के भय से गौतम मुनि घबराये। उनके दु:ख का ठिकाना नहीं। अब इस पाप से मुक्ति कैसे ?

सहसा शोकमग्न गौतम मुनि के समक्ष विघ्नेश्वर प्रकट हुए। विनायक के प्रति हम नदियों की बड़ी श्रद्धा है। देवलोक से हम नदियों को धरती पर लाने का सारा श्रेय उन्हें है। वे बोले, 'मुनि ! शिवजी की तपस्या करो। उनसे यह वर माँगो कि तुम्हें पापमुक्त करने के लिये वे गंगा को धरती पर लाएँ।'

उनके परामर्श पर गौतम मुनि महादेव की घोर तपस्या करने लगे। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर शिव उनके सामने प्रकट हुए। मुनि ने निवेदन किया तो शिव ने अपने जटाजूट की एक लट को जरा-सा झटक दिया। अगले पल उससे कल-कल करती गंगा की धारा बह निकली।

यह गंगा विशाल ब्रह्मगिरि पर्वत के दक्षिण-पश्चिम के हिस्से में बह निकली। गौतम मुनि आश्चर्य व आनन्द से झूम उठे। सोचा, 'अब इस पुनीत धारा में डुबकी लगाकर मैं पापमुक्त हो जाऊँगा।' लेकिन, यह क्या ? देखते ही देखते गंगा उनकी आँखों से ओझल हो गयी। घबराकर गौतम मुनि गंगा के पीछे-पीछे दौड़ पड़े। थोड़ी दूर पर वह फिर प्रकट हुई। इस स्थान को आजकल गंगा-द्वार कहते हैं। किन्तु यहाँ भी गौतम मुनि स्नान नहीं कर पाये, क्योंकि एक असुर मुँह बाये गंगा को निगलने को आ गया और वह पुनः अदृश्य हो गईं।

गौतम मुनि बड़े मनस्वी व धीर पुरुष थे। वे फिर से तपस्या करने बैठ गये। इस बार उन्होंने देवी कोलाम्बिका की तपस्या की। देवी ने उन पर दया करके उस असुर का वध कर डाला। अब गंगा निर्भय होकर ऊपर आई और तेजी से बहने लगी।

गौतम मुनि ने कुश से उसके तेज प्रवाह को जरा-सा रोका और उसमें गोता लगाकर गो-हत्या के पाप से मुक्ति पायी। यह स्थान आज 'कुशद्वार' के नाम से जाना जाता है। यहीं से जो धारा आगे

प्रवाहित होती है उसी को गोदावरी व गौतमी कहते हैं। भक्तजन गंगा में स्नानकर उसका पानी कलश में ले आते हैं और मुझे 'दक्षिणी गंगा' कहते हुए कलश का आधा पानी मुझमें प्रवाहित कर शेष कलश को फिर मेरे जल से भर लिया करते हैं। भारत की धार्मिक व सांस्कृतिक समन्वयता व एकता की यह कितनी प्रेरणादायी परम्परा है !

हम सब नदियाँ महादेव के जटाजूट से निकली गंगा मानी जाती हैं। महादेव की कृपा से इस धरती को समृद्ध करने और मानव-जीवन को सुखी बनाने के लिए हम उतर आई हैं। हम सप्त नदियों का उद्गम गंगाजी हैं, इसलिये हम भी पुनीत मानी जाती हैं। भक्त व श्रद्धालुजन हमारी धारा में डुबकी लगाकर तन-मन की मलीनता दूर करने के लिये विह्वल हो जाया करते हैं।

गाय के मुँह जैसे आकार के एक शिलाखंड से मेरी धारा निकल आती है, इसलिये मुझे 'गोमुखी' व 'गोदावरी' कहकर पुकारते हैं। 'गौतमी', 'गोमुखी', 'गोदा', 'गोदावरी' मेरे कितने ही नाम हैं !

गो-दा-वरा ·· नदी के रूप में धरती पर बहती मेरी पौराणिक कहानी दिलचस्प है न ? अरब सागर के तट से बंग सागर तक मैं अविरल बहती जाती हूं। मेरी इस लम्बी यात्रा के बीच में न जाने कितने नद, नदियाँ व नाले मुझे अपना जल देते रहते हैं। मेरे तटों पर विष्णु और शिवजी के अनेक सुन्दर मन्दिर हैं। मन्दिरों में बजते घड़ियालों की मधुर आवाज का श्रवण करती, दिल में असीम शांति का अनुभव करती हुई मैं बहती हूं। भावविभोर होकर लोग गदगद स्वर में मुझे 'गोदा माता' कहकर पुकार उठते हैं। अपने शीतल जल के स्पर्श से उन ताप-तप्त मानवों का सारा सन्ताप मैं दूर करने का प्रयत्न करती हूं। बड़े स्नेह से अपने आलिंगन में भर लेती हूं। लोगों का विश्वास है, सन्ततिहीन व्यक्तियों का दुःख मेरी धारा में स्नान करने से दूर हो जायेगा। सन्ततिहीन भाग्य से वंचित लोग दूर-दूर से मेरा दर्शन करने व स्नान करने आते रहते हैं। कहते हैं :

नदियों में महान है गोदावरी,
सुखद शीतल तरंगों वाली,
युग युगों से प्रवाहित होती,
हरती दिल के दुःख व पाप।

अध्याय : २

त्रयम्बक पर्वतमाला अरब सागर के तट से पचास-साठ मील की दूरी पर है। मैं बतला चुकी हूँ, यही पर्वतमाला मेरा उद्गम स्थल है। यहाँ से अरब सागर बहुत अधिक दूर नहीं फिर भी मैं अरब सागर में नहीं मिलती, बल्कि सुदूर १४६५ किलोमीटर की यात्रा कर बंगाल सागर में संगमित होती हूँ। कारण मैं अपने जल से अधिक से अधिक भू-भाग को समृद्ध बनाना चाहती हूँ।

मेरा मायका महाराष्ट्र है। दक्षिणी महाराष्ट्र को प्राकृतिक दृष्टि से चार भागों में बाँट सकते हैं—कोंकण का समुद्री किनारा, बम्बई, विदर्भ और मराठवाड़ा। महाराष्ट्र के पश्चिम में अरब सागर, उत्तर-पश्चिम में गुजरात, उत्तर में मध्य प्रदेश, दक्षिण पूर्व में आंध्र प्रदेश, दक्षिण में गोवा व मैसूर राज्य हैं। इस राज्य का कुल विस्तार ३०७,४७७ वर्ग किलोमीटर है।

पहले यह प्रदेश बंबई प्रेसिडेंसी कहा जाता था। वर्तमान महाराष्ट्र राज्य में २६ जिले हैं। तूलिया, जलगाँव, नासिक, अहमद नगर, पूना, सतारा, सांगली, शोलापुर, कोल्हापुर, ताना, कोलाबा, रत्नगिरि, बंबई, नागपुर, अकोला, भण्डारा, औरंगाबाद, परभणी, बीड, उसमानाबाद, नान्देड़, यवतमाल, अमरावती, वर्धा, बुलढाना, शान्द आदि जिलों में कुल २३ तालुके, २६६ शहर, १२ मुख्य नगर हैं। इस राज्य के समुद्री किनारे की लंबाई कुल ७२० किलोमीटर है।

इस राज्य की प्राकृतिक रचना निराली है। पश्चिमी घाटों के साथ-साथ सह्यात्रि पर्वतमाला समुद्री किनारे से लगभग अस्सी किलोमीटर के अंतराल में दूर तक फैली हुई है। उत्तर-दक्षिण की तरफ सह्यात्रि, पूरब-पश्चिम में पालघाट पहाड़ी श्रेणियाँ त्रिकोण के रूप में खड़ी हैं। पश्चिमी महाराष्ट्र के ७ जिले (मराठवाड़ा) इन दोनों के बीच में मैं कृष्णा, भीमा आदि के साथ प्रवाहित होकर सारे भू-प्रदेश को हरा-भरा रखती हूँ। पालघाट पर्वतमाला के दक्षिण में, नासिक से नान्देड़ तक मेरा मैदानी प्रदेश फैला पड़ा है। इस राज्य में मेरी और कृष्णा की घाटी उल्लेखनीय है। मेरी उप-नदियों वर्धा, वैनगंगा का तटवर्ती प्रदेश भी मेरी मैदानी घाटियों में सम्मिलित हैं। कृष्णा के मैदानी प्रदेश में ही सतारा, सांगली, कोल्हापुर, शोलापुर आदि जिले हैं।

भारत का पश्चिमी समुद्र तट केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक, गुजरात, महाराष्ट्र आदि तटवर्ती राज्यों की सीमा बना रहता है। पश्चिमी घाटी से निकलने वाली अनेक छोटी-मोटी नदियाँ अरब सागर में जा मिलती हैं। केवल मैं, भीमा और कृष्णा इनमें अपवाद हैं। यद्यपि हम सब इस राज्य में उत्पन्न होती हूँ फिर भी हमसे इस राज्य को अधिक फायदा नहीं होता है। इन दोनों से बढ़कर मैं ही महाराष्ट्र राज्य में बड़ी दूर तक बहती हूँ। कृष्णा अपने उद्‌गम से थोड़ी दूर पर कर्नाटक राज्य में प्रवेश कर फिर आंध्र में चली जाती है। भीमा भी आंध्र प्रदेश में जाकर कृष्णा से मिलती है।

नदियों और पहाड़ों से घिरे महाराष्ट्र राज्य को प्राकृतिक दृष्टि से चार-छः भागों में बाँटा जा सकता है और पहला विदर्भ जो 'पूर्णा' की संकीर्ण घाटी है। दूसरा है ताप्ती नदी की घाटी में खानदेश। इस प्रदेश को दक्षिणी पठार का उत्तरी हिस्सा मान सकते हैं। तीसरा है नागपुर प्रदेश, जो 'वर्धा' और 'वैनगंगा' नदियों के बीच की घाटी में है। इस प्रदेश के चारों तरफ पश्चिम में विदर्भ,

उत्तर और पूरब में मध्य प्रदेश की पहाड़ियाँ व जंगल, दक्षिण में तेलुंगाना के जंगल घिरे रहते हैं। चौथा है कोंकण प्रदेश। यह सँकरा मगर लंबा भू-भाग है। थाना, कोलाबा, रत्नगिरि जिले तथा पश्चिमी घाट इसके अन्तर्गत हैं। इस भू-भाग की प्राकृतिक सुषमा अति मनोरम है। यहाँ पर बस्तियाँ व जोतने योग्य प्रदेश कम हैं। एक तरफ लहरें मारता सागर, दूसरी तरफ पहाड़ी श्रेणियों के पश्चिमी ढालुआँ जमीन–बीच में पड़ा है प्यारा कोंकण प्रदेश। गहरी घाटियाँ, सिर तानकर खड़ी पर्वत श्रेणियाँ, आसुरी वेग से लहराती आती पहाड़ी नदियाँ, हरी चादर ओढ़े खड़े छोटे-छोटे टीले, ओह ! सचमुच नयनाभिराम दृश्य है यह। उत्तर कोंकण प्रदेश दक्षिणी हिस्से से जरा ऊँचा और चौड़ा है।

पाँचवें हिस्से में मेरे उपजाऊ तटवर्ती स्थानों को रखा जा सकता है। यह हिस्सा काफी लंबा-चौड़ा है। पश्चिम की तरफ पहाड़ियाँ तथा नासिक जिला। पूरब में ऊँचा शुष्क व सूखा मैदान तथा अहमद नगर, औरंगाबाद, बरबनी, नान्देड़ जिले हैं। छठवाँ तो कृष्णा की घाटी है। पश्चिमी घाट 'भीमा' और 'वर्णा' की घाटियाँ इसमें सम्मिलित हैं। सतारा, सांगली, कोल्हापुर से होकर 'कृष्णा' बहती है। दक्षिण का यह पठार अति प्राचीनतम माना जाता है। यहाँ की कई एक पहाड़ी श्रेणियाँ उम्र में हिमालय की अग्रज लगती हैं। बड़ी भारी, उन्नत चहारदीवारी-सी खड़ी इन पहाड़ियों को पर्वतों का पितामह कहें तो अत्युक्ति नहीं हो सकती। ये पहाड़ कई एक जीव नदियों के जन्मदाता हैं। ये नदियाँ दक्षिणी पठार व दक्षिण भारत को समृद्धशाली बनाती हैं। यही नहीं सहयात्री की श्रेणियाँ ऐतिहासिक महत्व भी रखती हैं। कई प्रसिद्ध दर्रे, पहाड़ी किले-बन्दियाँ, पहाड़ी दुर्ग, दुर्लंघ्य चहारदीवारी, इन श्रेणियों पर प्राकृतिक रूप से बने हैं। खानदेश के प्रदेश में जो 'कुंडाबारी' दर्रा है वह तो पुराने जमाने में बड़ा महत्व रखता था। भड़ौच और दक्षिण के बीच में

यही प्रधान व्यापारिक मार्ग था। बिम्प्री, बोराघाट, दलाघाट, काचाराघाट दर्रे भी मुख्य हैं।

सहयात्री पहाड़ियों से फूटी हुई तीन श्रेणियाँ पश्चिम व पूरब की तरफ से अहमदनगर जिले में प्रवेश करती हैं। काल सुभाख श्रेणी, बालेश्वर श्रेणी के अलावा हरिचन्द्रा घाट से तीसरी श्रेणी विभाजित होती है। इनमें यही सबसे लम्बी है। यह श्रेणी मेरे और 'भीमा' के बीच में पड़ी है। सहयात्री के पूरब की तरफ जो विशाल विस्तृत मैदानी भाग है, वह इस श्रेणी से उत्पन्न होकर पूरब की तरफ बहती नदियों में बँटी है।

उत्तर की तरफ जो सतपुड़ा पहाड़ी माला है, वह पूरब, पश्चिम को तरफ सीधी रेखा-सी खड़ी है। उत्तर पूरब की तरफ खड़ी सहयात्री पूरब पश्चिम की ओर चलती सतपुड़ा की श्रेणियाँ, ये दोनों उत्तर पश्चिममुखी बने तूलिया जिले में मिलती हैं। इन दोनों पहाड़ी श्रेणियों के मध्य में जो विस्तृत भू-भाग फैला पड़ा है वही दक्षिणी पठार कहा जाता है। नासिक के ऊपर उत्तर की तरफ सत-माला पहाड़ियाँ, बालाघाट पहाड़ियों के समानान्तर चलती हुई विदर्भा व मराठवाड़ा के पूरबी किनारे तक पहुँचती हैं। सतपुड़ा के उत्तर में बालाघाट के दक्षिण की तरफ इन दोनों के मध्य का भू-भाग तपती घाटी कही जाती है।

नक्शे पर देखें तो आपको पता चलेगा, महाराष्ट्र राज्य भर में सीमान्त रेखाओं के जैसे सहयात्री घूमती फिरती खड़ी है। उत्तर दक्षिण में इसकी लम्बाई लगभग ४०० मील है। इसकी कई एक ऊँची व नीची चोटियाँ लगभग २५०० फुट से ४००० फुट तक होती हैं। उत्तर की तरफ चलते-चलते इनकी ऊँचाई बढ़ती जाती है। मेरा उद्गम स्थल त्रयम्बक की ऊँचाई ४५०० फुट से ज्यादा है। बीचो-बीच एकाध दर्रों के अलावा यह श्रेणी कहीं खंडित नहीं हुई है। एक और विशेषता यह है कि इन श्रेणियों के ऊपर कई स्थानों पर विशाल

पठार व मैदानी प्रदेश होते हैं। जिसके फलस्वरूप कई एक पहाड़ी नगर, बस्तियाँ, किले वन्दियाँ आबाद हुए हैं। इसके अलावा, इन श्रेणियों से छूटी हुई कई एक छोटी श्रेणियों में, महादेव पहाड़ी श्रेणी 'कृष्णा' और 'भीमा' को विभाजित करती है। मेरे और 'भीमा' के मध्य में पालाघाट श्रेणी है। सतवाला और अजन्ता पहाड़ियाँ मेरे तटवर्ती प्रदेश से तप्ति और पूर्णा को अलग कर देती हैं।

इस राज्य का ऊँचा पठारी हिस्सा समुद्र तक एकदम ऊँचा होकर २००० फुट ऊँचाई पर रहता है। चारों तरफ टीले, छोटी पहाड़ियाँ विखरी पड़ी हैं। इनमें मावली पहाड़ियाँ, गिरनार पहाड़ियाँ, महाबलेश्वर पहाड़ियाँ उल्लेखनीय हैं। घने आरण्य और जंगलों का इस राज्य में कोई अभाव नहीं। महाबलेश्वर, खण्डाला, लोनवाला पहाड़ियों पर आच्छादित वन संपत्ति अतुलनीय है।

पहले महाराष्ट्र का क्षेत्रफल केवल २७ हजार वर्गमील ही था। भाषावार प्रांतों के विभाजन के उपरान्त यद्यपि इसका क्षेत्रफल बढ़ा था, फिर भी १९६० में ही आज के महाराष्ट्र का जन्म हुआ है। इस राज्य के लोगों ने कई एक संघर्ष और आन्दोलनों के उपरान्त कई एक प्रदेशों को अपने राज्य में मिला लिया है। फिर भी इसकी सीमा सम्बंधी समस्या का हल अब तकन हींहु आ है। यही नहीं, प्राणदायिनी हम नदियों के पानी को लेकर भी गरमागरम विवाद और चर्चा चल रही है। भौगोलिक व क्षेत्रफल की दृष्टि से इस राज्य का विशेष महत्त्व है। यह राज्य अपनी आवश्यक चीजों की दृष्टि से स्वावलंबी है। चिरकाल से लेकर यूरोपीय देशों से इसका वाणिज्य सम्वन्ध रहा है। आर्थिक दृष्टि से भी यह राज्य सम्पन्न व समृद्ध है।

अध्याय : ३

ब्रह्मगिरि पर्वत की एक बार परिक्रमा करें तो अठारह मील चलना होता है। इस पर्वत को देवता मानकर पूजने वाले भक्तजन इसकी

परिक्रमा करते रहते हैं। चघोजात, नामदेव, अघोर, ईशाण, तत्पुरुष नामक इसकी पाँचों चोटियाँ लिंग के आकार की लगती हैं। त्रयंबक—अर्थात् तीन शिखरों वाले पर्वत से मैं उत्पन्न होती हूं। इस पर्वतीय अंचल की वनश्री का कहना ही क्या ? ग्रीष्म ऋतु में भी यहाँ हरियाली लहराती रहती है। यहाँ का मौसम बड़ा सुहाना है।

'त्रयम्बक' एक छोटी-सी बस्ती है। यहाँ से नासिक १८ मील है। मेरे उद्गम स्थान का दर्शन करने की उत्सुकता से प्रेरित होकर लोग पहाड़ों पर चढ़ आते हैं। चढ़ाई बड़ी तीखी है। मेरी धारा अगोचर होने से बड़ी दूर तक लोग मुझे देख नहीं पाते। फिर भी मेरे उद्गम का दर्शन करने में असंख्य कष्ट झेलते हैं। यहाँ पर सीढ़ियाँ बनी हैं। कुल ७५० सीढ़ियाँ हैं। इन पर चढ़ना भी आसान नहीं। मगर यात्रीगण जरा भी नहीं हिचकते। 'गोदा माता', 'गोदा माता' का नारा लगाते हुए सीढ़ियाँ तय कर लेंगे। चढ़ने-उतरने में छः मील लगता है। यहाँ पर पहाड़ी ढाल से पतली धाराओं में झरती हुई मैं एक छोटे-से कुण्ड में आ मिलती हूँ। पहले-पहल यहीं प्रकट होने से लोग इसी को मेरा उद्गम मानते हैं। लेकिन असली उद्गम और ऊँचाई पर है, जहाँ की पहुँच कठिन है।

यहाँ पर खड़े होकर पहाड़ों से घिरी हुई इस जगह के अनिध्य सौन्दर्य का दर्शन करते ही यात्रा की सारी थकावट दूर हो जायेगी। गम्भीरता से खड़े शिखरों पर दृष्टि पड़ते ही भ्रम होगा—यही कैलाश पर्वत है। इस स्थान को 'गंगद्वार' कहते हैं।

जिस चट्टान से मेरा पानी निःसृत होता रहता है वह गोमुखी के आकार का है, इसलिये इसका नाम 'गोमुखी' पड़ा है। इससे जरा ऊँचाई पर गंगा देवी की एक छोटी-सी प्रतिमा है। लोग इसकी पूजा करते हैं। यहीं पर मेरी एक मूर्ति भी प्रतिष्ठित है। मेरा नाम 'गोदाम्बिका' है। यह बड़ा पुनीत व पापनाशक तीर्थ माना जाता है। इससे थोड़ी दूर पर मैं छिछली धारा बनी बह निकलती हूं।

इधर चारों तरफ के पहाड़ों और चट्टानों में कई गुफाएँ व तीर्थ हैं। एकान्त के अभिलाषी तथा तपस्वी लोग यहाँ पर आया करते हैं। योग-साधना व तपस्या के लिये यहाँ का वातावरण स्पृहणीय है। नाथ सम्प्रदाय के आचार्य गोरखनाथ यहीं पर एक गुफा में तपस्यारत थे। आज भी लोग उस गुफा का दर्शन करने जाते हैं। इसके अलावा कई छोटे मन्दिर और देव-देवियों की शिलाएँ यहाँ पर प्रतिष्ठित हैं।

दक्षिण-पश्चिममुखी बने जहाँ मैं प्रकट होती हूँ उसे 'कुशावर्त तीर्थ' कहते हैं। यहीं पर गौतम मुनि ने मेरी वेगवती धारा को कुश घास से रोका था। यहाँ पर एक बड़ा तालाब बना है। काफी लम्बा-चौड़ा होने से यहाँ पर स्नान कर सकते हैं। इस तालाब को पुनीत तीर्थ मानने से आठों पहर यात्रियों की भीड़ लगी रहती है। तालाब के चारों तरफ पक्की सीढ़ियाँ बनी हैं। यात्रियों के ठहरने के लिये धर्मशालाएँ, सराएँ आदि की सुविधाएँ हैं। धार्मिक क्रिया-कर्म इस तालाब में किये जाते हैं।

एक जमाने में 'त्रयम्बक' जंगली प्रदेश था। जन-संचाररहित इस प्रदेश में विशेष पर्व के दिनों में आनेवाले यात्रियों के अलावा और कोई न आते थे। लेकिन आजकल यहाँ पर एक छोटी-सी बस्ती आबाद हो गयी है। कई तालाब और कई कुंड हैं। बस्ती में प्रवेश करते ही त्रयम्बकेश्वर जी का भव्य मन्दिर आपका स्वागत करेगा। भारत में स्थित बारह ज्योतिलिंगों में यह भी एक है। मन्दिर बहुत बड़ा और गंभीर है। अन्य तीर्थों के जैसे यहाँ पुजारी, पंडे सब रहते हैं। चारों तरफ की चहारदीवारी विशाल और ऊँची है। मन्दिर का स्वर्णकलश सूर्य की रोशनी में जगमगा उठेगा। मन्दिर एक ऊँचे टीले पर होने से सीढ़ियों पर चढ़ना होता है। नाना साहब ने १७४० में इस मन्दिर का पुनर्निर्माण करना शुरू किया जो १७६० में पूरा हुआ। कई धनाढ्य लोग मन्दिर के निर्माण और संरक्षण कार्य में योग दे रहे हैं।

यहाँ का ज्योतिर्लिंग स्वयंभू है। मन्दिर का गर्भगृह छः फुट नीचे एक गड्ढे में बना है। इसकी बनावट ऐसी निराली है कि कहीं अन्यत्र ऐसा गर्भग्रह आप देख न पायेंगे। गर्भग्रह के बीच में स्वयंभू ज्योतिर्लिंग की मूर्ति प्रतिष्ठित है। यहाँ की खासियत यह है कि शिवलिंग मूर्ति की पीठ नहीं है। कोरी लिंग मूर्ति मात्र है। लिंग के सिरोभाग पर तीन कलियों-सी तीन छोटे-छोटे लिंग हैं। इसे ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि त्रिमूर्तियों का प्रतीक मानते हैं। इसीलिए यहाँ पर ईश्वर को त्रयम्ब-केश्वर महादेव कहते हैं। गर्भ ग्रह में स्वयम्भू लिंग के चारों तरफ मेरा पानी बूंद-बूंद करके निःसृत होता रहता है।

मेरे स्रोत का पानी मन्दिर के पीछे के एक छोटे से कुण्ड में से बह निकलता है। 'गौतमालया', 'गंगसागर' ये दोनों काफी बड़े जल-कुण्ड हैं। दोनों में स्नान करने की सुविधा है। इसके अलावा, बिल्व तीर्थ, इन्द्रतीर्थ, विश्वनाथ तीर्थ, प्रयाग घाट, वराह तीर्थ, अहल्या नामक पहाड़ी झरने का मेरे साथ संगम होने के घाट आदि पर भक्त लोग स्नान करते हैं। पास खड़े नील पर्वत के ऊपर नीलाम्बिका देवी का मन्दिर है। कुशावर्त, गंगद्वार, बिल्वतीर्थ, मणिकर्णिका, कनकल आदि तीर्थों पर श्राद्ध, दानपुण्य तथा पितृकर्म की क्रियाएँ की जाती हैं। यहाँ पर भी मेरे और गंगाजी के छोटे-छोटे मन्दिर हैं। लोग मुझे 'गंगगोदा' कहकर पूजते हैं। आजकल कृष्ण-मन्दिर, लक्ष्मी-नारायण-मन्दिर, परशुराम-मन्दिर ऐसे कई नये-नये मन्दिर भी बने हैं।

गंगसागर का तालाब बस्ती से उत्तर की तरफ है और कुशावर्त तीर्थ बस्ती के बीचोबीच है। भक्त लोग सबसे पहले यहाँ पर स्नान करके मन्दिर में आते हैं। कुण्ड में मेरा पानी हमेशा लबालब भरा रहेगा। न उमड़कर बह निकलता, न कम होता है। इन कुण्डों के आगे जो धारा बह निकलती है उसी को 'गोदावरी' कहते हैं।

एकादशी, शिवरात्रि, कुम्भ मेला आदि पर्व के दिनों यहाँ पर आनेवाले यात्रियों की कोई गिनती ही नहीं। कठिन पहाड़ी यात्रा

की सारी तकलीफें उठाकर, मुझमें स्नान करने, त्रयम्बकेश्वर का दर्शन करने आते इन भक्तों को देखते ही मेरे हृदय में आनन्द उमड़ने लगता है। जैसे हमारी अविरल धारा लहरें उठाती, उमगती चलती हैं, वैसे ही इस भारत भूमि में भक्ति की पवित्र स्रोतस्विनी युग-युग से जनता को अपनी ओर खींचकर, अपनी अमृत-पयोधिनी में डुबो रही है। चातुर्मास्य का समय बिताने साधु लोग यहाँ पर आते हैं। युग-युग से यह प्रदेश साधुओं को आकर्षित करता रहा है। महाराष्ट्र के साधु निवृत्तिनाथ की तपस्यास्थली है न यह! बारह साल में एक बार जब सिंह राशि पर गुरु और सूर्य आते हैं, यहाँ पर कुम्भ मेला मनाया जाता है।

इसके आगे चक्रतीर्थ में प्रकट होकर मैं धीरे-धीरे पहाड़ी गोद से उतरकर 'नासिक' में आती हूं। यह एक सुरम्य शहर है। गंगा के किनारे पर पुण्यधाम काशी जैसे मेरे तट पर नासिक पुण्यक्षेत्र है। यह अति प्राचीनतम नगरी है। चन्देर, अजन्ता, अकोला, पालाघाट पहाड़ी श्रेणियों के बीच में मैंने नासिक मैदान को रूप दिया है। नासिक जिले में मैं और गिरजा प्रवाहित होती हैं। त्रयम्बक किले के दक्षिण-पश्चिम की तरफ से बहती वैतरणी भी इस जिले के एक छोटे से हिस्से को पानी देती है। लेकिन यह सहयात्री पहाड़ियों को भेदकर निकलती और अरब सागर में जा मिलती है। यह बड़ी गहरी व वेगवती नदी है। इसके तटों पर सागौन के वन अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। वैतरणी नदी की कुल लम्बाई ९० मील है।

त्रयम्बक नगरी को पार करने के उपरान्त मैं पूरबमुखी हो जाती हूँ। चट्टानी टीलों को भेदकर उन्हीं से होकर बहती हूँ। सात मील पर 'गिग्वी' नामक पहाड़ी नदी आ मिलती है और तीन मील पूरब की तरफ बहने पर जालपुर जिले को जल प्रदान करती हुई 'आनन्दी' आकर अपना सारा पानी मुझे दे देती है। मुझसे मिलने के सौ गज पहले तीस फुट ऊपर से छोटे प्रपात के रूप में यह गिरती है।

यह स्थान बड़ा सँकरा और करारी ढालू होने से बड़ी आवाज निकलती है।

मेरा प्रवाह एक-सा नहीं है। पथरीला चट्टानी मार्ग होने से नीचे की ओर बहते समय, कई जगहों पर बड़े वेग से द्रुतगति भरती आती हूँ। कहीं-कहीं इठलाती आती हूँ। मेरे किनारे ज्यादातर ऊँचे होते हैं। नासिक जिले के पहाड़ी प्रदेशों में लगभग ३७ पहाड़ी दुर्ग हैं। ये सब ऐतिहासिक महत्त्व के हैं। यहाँ के अधिकतर भू-भाग में ऊँची जमीन है। यद्यपि इस जिले का पश्चिमी हिस्सा पहाड़ी प्रदेश है, पूरबी हिस्सा उपजाऊ व समृद्ध है। 'गिरना' और उसकी उपनदियाँ 'तप्ती' में मिलती हैं। विजयपुर, गंगापुर, पैठन, अम्बात, कालवान, पाकलान, मालगाँव, नन्दगाँव आदि तालुके इस जिले के अन्तर्गत हैं। मेरे और 'तप्ती' के बीच की अजन्ता पहाड़ियाँ एक अच्छे जलग्रह क्षेत्र हैं। इस जिले में सहयात्री उत्तर-दक्षिण दिशा में चलती है। उत्तरी कोने पर सेलवारी श्रेणियाँ नासिक और तूलिया तालुके की सीमा बनती हैं। ठीक ऐसे ही छोटी-बड़ी पहाड़ियाँ दिनदोरी तालुका और नासिक को विभाजित करती हैं।

मैं नासिक और निपाद तालुकाओं से गुजरती ६० मील दूर की यात्रा तय कर लेती हूं। नासिक नगरी से एक मील की दूरी पर 'अंजनेर' टीलों से आती 'नासरडी' मुझसे मिलती है। छोटी होने पर भी यह अपार जलराशि को वहन कर आती है। नासिक से पन्द्रह मील की दूरी पर इक्तपुरी के दक्षिण में एक मील पर सहयात्री की एक चोटी से यह बड़े वेग से हहराती आती है। 'तरना' तो करीब पचास मील घूम-फिरकर मुझसे आ मिलती है। इसमें पानी का बहाव अपार होता है। कई पहाड़ी नाले दिल खोलकर इसे अपना सर्वस्व दे डालते हैं। इस दृष्टि से देखा जाय तो नासिक जिले में मुझसे मिलने वाली उपनदियों में यह उल्लेखनीय है। 'चिनार' हिस्से को पानी देकर आती जंगली नदी 'देव' मेरे बाएँ किनारे पर आ

मिलती है। 'निपाड' तालुका में 'नन्दूर', 'माडमेश्वर' के आगे दस मील पर 'कदवा' आकर अमित जलराशि मुझे भेंट करती है।

नासिक नगर मेरे दक्षिण किनारे पर है। देवी सती की नासिका यहाँ पर गिरने से इसका नाम 'नासिक' पड़ा है। ऐसा पुराणों में आपने पढ़ा होगा। 'पद्मनगर', 'त्रिकंटक', 'जनस्थान' ऐसे इसके कई नाम हैं। रामायण काल में इस नगर की बड़ी प्रसिद्धि थी। मेरे दाहिने किनारे पर नासिक है तो बाएँ किनारे पर पंचवटी है। इन दोनों के बीच में प्रवाहित मेरी धारा पर एक पुल है। यहाँ पर मेरा तटवर्ती प्रदेश अति रमणीय है। अकथनीय प्राकृतिक शोभा व असीम शान्ति से युक्त पंचवटी में सघन वृक्षावलियों की सुखद शीतल छाया है। मानों प्रकृति की सुषमा पुंजीभूत हो गयी हो, उतना मनोरम है। चाँदनी रात में यहाँ की बहार निराली है। मुनि अगस्त्य ने श्रीराम को अपने वनवास के शेष दिनों को शान्ति से बिताने के लिए सुझाव दिया था। पाँच वट-वृक्षों की छाया में बनी पर्णकुटी शूर्पणखा का आगमन ये सारी कथा आपको मालूम है। मुनि अगस्त्य ने कहा था– हे राम! यह पंचवटी का प्रदेश रंग-बिरंगे फूल व फल देनेवाले वृक्षों से भरा रमणीय अरण्य है। चौकड़ी भरनेवाले हिरण, विविध पक्षी-गण यहाँ क्रीडा करते रहते हैं। नैसर्गिक सुषमा व फूलों के मादक गन्ध से सुवासित इस प्रदेश में बड़ी शान्ति है, और क्या कहूँ?

लक्ष्मण को यह स्थान बहुत प्रिय लगा। सोचा, मनमोहक प्राकृतिक दृश्य और एकान्त वातावरण राम-सीता के वनवास के योग्य है। कल तक निनाद करती मेरे तट पर विशाल मैदानी घाटी, सुगन्धित पुष्पों से भरे उपवन, नन्दन कानन-सा दैवी सौन्दर्य, सफेद कमलों से भरे कुण्ड, स्फटिक धारा-सी बहती निर्झरिणियाँ, मन्द-मन्द गति से विचरते हंस, विरह विह्वल चक्रवाक आदि देखकर श्री रामचन्द्र का मन भी उल्लसित हो उठा।

हरी-भरी शाखाओं व लताओं से पर्णशाला सज गई। अनुज से स्नेहपूर्ण सेवा, राम-वैदेही का आनन्दमय दाम्पत्य-जीवन, रात में

प्रहरी-से उनींदे बैठे लक्ष्मण की भ्रातृभक्ति ! ओह ! वे दिन कितने स्पृहणीय थे। आज भी मैं उन्हें भूल न पाती। राम वैदेही के जीवन के सुनहले दिन थे। सारी शरद ऋतु मिलन के मादक सुख में बीते। मेरी वेगवती धारा में जल-क्रीडाएँ करते वे कितने उल्लसित हो उठते थे। हूँ ·· यहाँ से चले जाने पर उन अमर प्रेमियों के जीवन में मिलन के वे रम्य दिन आये कहाँ ? चिर विरह से अभिशप्त उस जनककुमारी की याद करते ही मेरा हृदय दुःख से भारी हो जाता है। हाय ! यदि शूर्पणखा इधर न आती, राम के सौन्दर्य पर मोहित न होती तो क्या रामायण घटता ? शायद इसी के कारण ही क्यों न हो पंचवटी का आकर्षण आज भी दर्शकों को अपनी ओर खींचे बिना न रहता।

पंचवटी और नासिक के बीच में जो पुल है वह १८९५ में बना है। इसके पहले लोग नावों पर यहाँ आते थे। आज की पंचवटी में दर्शनीय मन्दिर कई एक हैं। राम की गुफा, सीता की गुफा, ऐसे बहुत से स्थान हैं जहाँ पर सीता, राम और लक्ष्मण की मूर्तियाँ हैं। मारीच वध के मन्दिर में बड़े-बड़े मिट्टी के चित्रों में वह घटना चित्रित है। अन्य प्रतिमाओं में भी कम नहीं।

पाँच वट-वृक्षों के पास ही 'कालाराम' का मन्दिर है जिसे सरदार ओढेकर ने बनवाया। यह १७७८ में शुरू होकर १७९० में बनकर तैयार हुआ था। इन बारहों साल हर दिन हजारों मजदूर व कारीगर अथक काम करते थे। कहते हैं, २३ लाख रुपये लगे थे। हाँ ! ओढेकर ने अपनी सारी सम्पत्ति इस पर लुटा दी। शिल्पकारी व चित्रकारी आपको कहीं नजर न आयेगी, फिर भी काले पत्थरों से निर्मित यह आलीशान मन्दिर बड़ा भव्य है। मन्दिर में प्रतिष्ठित राम-सीता की मूर्तियाँ काले पत्थर की होने से कालाराम मन्दिर कहते हैं। सभा मण्डप का इतना विस्तार है कि एक साथ हजारों व्यक्ति इसमें बैठ सकते हैं। मन्दिर के स्वर्णकलशों की छटा निराली

है। इसकी एक और विशेषता है। मेष और तुला संक्रान्ति के दिन प्रात:कालीन सूर्य की सुनहरी किरणें गर्भ गृह में प्रतिष्ठित मूर्तियों पर पड़ती हैं। यदि मैं हर मन्दिर का इस तरह वर्णन करती जाऊँ तो वह लम्बी कथा बन जाती। अच्छा! सुनिए, कपालेश्वर मन्दिर, नारोशंखर मन्दिर, हनुमान मन्दिर आदि कई एक मन्दिर हैं। नारोशंखर मन्दिर में एक बहुत भारी घण्टा है जिसकी टन-टन की ध्वनि दो मीलों तक सुनाई देती है।

तपोवन के बारे में कहे बिना रहती कैसे? यहाँ से करीब दो मील पर वह सुन्दर प्रदेश है। चिन्तन व मनन के योग्य तपोभूमि है यह। यहाँ पर मेरा घाट सँकरा होने से गहराई अधिक है। बड़ी-बड़ी चट्टानों को काटती रहने से मेरे प्रवाह में जोश अधिक है। लेकिन नासिक में मैं बिल्कुल शान्त हूँ। बीच-बीच में बड़ी चट्टानें मेरे वेग को कम कर देती हैं, इसलिए मेरा घाट बहुत छिछला है। दोनों तरफ पक्की सीढ़ियाँ हैं। मेरी धारा में लगभग १२ कुंड हैं। बड़े-बड़े घाट और छोटे-मोटे मन्दिर हैं। नासिक में मेरा तट दर्शनीय है। मेरी धारा में राम कुंड, सीता कुंड, लक्ष्मण कुंड, हनुमान कुंड जैसे बहुत से पावन तीर्थ हैं। राम कुंड सबसे बड़ा तीर्थ है। ३ फुट लम्बा, ४० फुट चौड़े इस कुंड में गोता लगाना, पितरों को पिण्डदान देना तथा श्राद्धादि कर्म करना पवित्र माना जाता है। इसलिए यहाँ हमेशा भीड़ लगी रहती है। दूर-दूर से लोग अस्थि विसर्जन करने आते हैं। अधिक गहरी न होकर पथरीली तहों पर बहने से यहाँ पर मेरा पानी गंदला न होकर साफ रहता है। चाहें जितनी भी भीड़ लगे स्नान करने की कोई तकलीफ नहीं होती। महात्मा जी का भस्म जहाँ पर मेरे पानी में बहा दिया गया वहाँ उसकी स्मृति में एक मण्डप का निर्माण हुआ है।

नासिक को मन्दिरों की नगर कहें तो अत्युक्ति नहीं। यद्यपि मुगल सम्राट् औरंगजेब ने कई एक भव्य मन्दिरों को मिट्टी में मिला

दिया फिर भी लगभग ६० मन्दिर इस पुण्य धाम की शोभा बढ़ा रहे हैं। नासिक में मैं दक्षिणमुखी होकर बाद में पूरब की तरफ घूमती हूँ। इसलिए नगर मेरे पश्चिम और दक्षिण की तरफ आबाद हुआ है। किनारे से सटकर मेरा मन्दिर खड़ा है। माघ महीने में इसे खोलते हैं। हाँ, मेरे दोनों किनारे मन्दिरों से सजे हैं। इनमें सुन्दर नारायण का मन्दिर शिल्प व चित्रकला की दृष्टि से उत्कृष्ट है। कितने मन्दिरों का वर्णन करूँ मैं? सुनिए—गोराराम मन्दिर, श्री बालाजी का मन्दिर, महाकाली मन्दिर उल्लेखनीय है। और जो असंख्य मन्दिर हैं वे भी कम महत्व के नहीं। १७८२ में बना गोराराम मन्दिर का प्रधान द्वार मेरी तरफ खुलता है। लगभग चालीस सीढ़ियाँ चढ़ने पर मन्दिर में पहुँच सकते हैं। संगमरमर की मूर्तियों के कारण 'गोरा राम' नाम पड़ा है। इस मन्दिर के प्रधान द्वार पर खड़े होकर देखें तो नासिक नगरी के पूर्ण सौंदर्य का दर्शन मिलेगा। छिछलाती बहती मेरी धारा, पक्की घाट पर बनी सीढ़ियाँ, मन्दिर से गुंजित घंटियों की मधुर निनाद, भक्तजनों की भीड़ आपको आत्मविस्मृत कर देगा।

यहाँ के मन्दिर-निर्माण की कला और प्रान्तों से भिन्न होती है। खासकर गोपुर की बनावट में निरालापन है। पुरानी नगरी तंग व सँकरी गलियों से भरी है। नई बस्ती आधुनिक ढंग से बसायी गयी है। यहाँ की आबोहवा स्वास्थ्यकर होने से लोग यहाँ आया करते हैं। वर्षा के दिनों में मेरा ठिकाना नहीं। 'श्री बालाजी' मन्दिर का द्वार भी मेरी तरफ होने से बाढ़ के दिनों में बन्द हो जायगा। लोग डरते-डरते मेरी धारा में स्नान करेंगे। इस नगरी के चारों तरफ आपको हरियाली ही हरियाली नज़र आयेगी। किनारों पर घनी झाड़ियाँ रंगीन फूलों का चादर ओढ़ खड़ी रहती हैं। बागानों की कोई कमी नहीं। यहाँ के अंगूर बड़े स्वादिष्ट लगते हैं। यह नगरी पहाड़ियों से घिरी रहती है न? नौ शिखरों के कारण इसे 'नवशिखर' भी कहा करते थे। मुगलों ने इसको गुलशनाबाद का नाम दिया था।

काशी के जैसे यह नगरी भी एक जमाने में बड़ी विद्या-केन्द्र थी। दूर-दूर से ज्ञान-पिपासु विद्यार्थी व आचार्य, संस्कृत विद्या, वेद-वेदान्त-दर्शन व शास्त्रार्थ का अध्ययन करने यहाँ आया करते थे। इस क्षेत्र का केवल धार्मिक मुख्यत्व ही नहीं आर्थिक महत्व भी है। आश्चर्य होता है न आपको ? हाँ, यहीं पर आज के जीवन का प्राण··· रुपयों के नोटों का छापाखाना है। अलावा पोस्ट-कार्ड, लिफाफे, डाक टिकट आदि भी यहीं छापे जाते हैं। नगर से पाँच मील की दूरी पर प्राचीनकाल के बौद्ध बिहार, चैत्य व गुफाएँ हैं। ठीक वैसे ही उत्तर की तरफ चार मील पर जैन धर्म सम्वन्धी गुफा मन्दिर है।

नासिक में मेरे पुल पर खड़े हो जाइए। देखिए, दोनों तरफ के किनारों पर जगमगाते कलशों को धारण किये खड़े भव्य मन्दिरों को। विशेषकर उदय की बेला और सन्ध्याकाल में इनकी शोभा निराली होती है। जैसे किसी के जादूभरे हाथों ने सोने का मुलम्मा लगाया हो। सुनहरी आभा में रंगे ये मन्दिर आपको मुग्ध कर देंगे। नासिक को छोड़ने का मेरा मन न रहता। धीरे-धीरे बहो री गोदा 'भूल न जाना अपना महान उद्देश्य' ऐसे कोई मेरे कानों में फुसफुसाते हैं। भारी मन से आगे बढ़ती हूँ।

गगनचुम्बी जंगली वृक्ष, तटों पर मंडित झाड़-झंखाड़, ऊँची खड़ी चट्टानें, निश्चिन्त होकर चरने वाले चौपाये, गायों के दल··· सबको निहारती हूँ, फेन उड़ाती बहती मुझसे तपोवन के निकट 'कपिला' आ मिलती है।

नासिक जिले के उपरान्त मेरे बाएँ किनारे पर औरंगाबाद, पर्बनि, नान्दोद जिले और दाएँ किनारे पर 'बीर नान्देड़' जिले हैं। नान्देड़ जिले के बीचो-बीच में मैं बहती हूँ। बाँदा तट पर बैजापुर, गंगापुर, पैठन, अम्बात आदि मुख्य नगर हैं। पैठन, अहमदाबाद से २८ मील पर है। सातवाहन के जमाने में इसे राजधानी बनने का सुयोग प्राप्त था। अपने नाम पर एक शताब्दी को जिन्होंने खड़ा

किया था वह सातवाहन वंश कितना महिमामय था। विद्या व कला का केन्द्र बने इस नगरी में महान चिन्तक और विचारक लोग निवास करते थे। संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित, तत्वदर्शी, वेदान्ती और धार्मिक आचार्य यहाँ रहे। पाटन नगरी सुदूर प्रदेशों तक फैली थी। इस मिट्टी में धर्म संस्कृति, आध्यात्मवाद, वाणिज्य और राजनीति सभी क्षेत्रों में सर्वोन्नत रहा।

सन्त रामनाथ, ज्ञानेश्वर जैसे कई साधु महापुरुष यहाँ जन्मे थे। उन्होंने इस उपजाऊ मिट्टी में भक्ति का जो बीज बोया था वह आज तक अक्षुण्ण रहता है। सन्त चक्रन्धर जिन्होंने कृष्णभक्ति की रसमय धारा बहायी थी, जाति-धर्म के भेदों को न माना था। जाति मतभेदों को इन्होंने हटा दिया। विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा का विरोध करते हुए इन्होंने धार्मिक कर्मकाण्डों व साम्प्रदायिक परिपाटियों का खण्डन किया। इनके नये सिद्धान्तों ने लोगों को आकर्षित किया। इनके सम्प्रदाय में भक्ति ही प्रधान थी। संस्कृत भाषा में उपदेश देना छोड़कर इन्होंने जनभाषा मराठी को अपनाया। सच कहती हूँ, यह उनका साहसिक कदम था। अपढ़ जनता संस्कृत क्या जानती ? अंध विश्वास के दलदल में फँसी जनता को इन्होंने ऊपर उठाकर, सत्पथ पर जाने की प्रेरणा दी। जनता इन उपदेशों के पीछे पागल हो गयी। उतने सरल, सीधे शब्दों में उन्होंने जनता का पथ-प्रदर्शन किया। इनके दिखाए मार्ग को और कितने ही सन्तों ने अपनाया था। उनमें सन्त एकनाथ भी एक हैं। सन्त ज्ञानेश्वर के गीत बड़े मीठे व मधुर हैं। आज भी कोई उनको गाता जाए, मैं अपने को भूल जाती हूँ। प्रवरा, मूला और पूर्णा मेरी उपनदियाँ हैं। अहमद नगर जिले में अकोला, संगमनेर, श्रीरामपुर, गोपरगाँव, नेवासा आदि तालूका मेरे सिंचन क्षेत्र के अन्तर्गत हैं। मेरे उपनदी 'मूला' और 'प्रवरा' इन जिलों को पानी देते हैं। अलावा मैं भी इन जिलों की उत्तर-पूरबी सीमा रेखा सी बहती हूँ। अहमद नगर जिले में तो उसकी उत्तर-पूरबी सीमा के रूप में भीमा बहती है। मैं तो 'गोपरगाँव' तालूका से

होकर श्रीरामपुर, नेवासा, सोवागाँव की सीमा बनी प्रवाहित होती हूँ। 'प्रवंरा' बड़ी अच्छी है। यह 'अकोला' में उत्पन्न होकर शंखमनेर तालूका में बहती हुई श्री रामपुर की सीमा के साथ-साथ बहती 'नेवासा' तालूका में मुझसे आ मिलती है। इसी को 'प्रवंरा संगम' कहते हैं। मूला, आडुली, टेरा, मकालुकी आदि प्रवंरा को अपना पानी देती हैं।

अहमदनगर के वाद है 'भीड' जिला। यह तो दक्षिण पठार की ढालू में स्थित है। मेरी धारा इसकी उत्तरी सीमा बनी है। पाला-घाट श्रेणियाँ इस जिले के बीचो-बीच पश्चिम से पूरब को चलती हैं। चिन्तपणी, कुण्डलिका, बाज आदि कई नाले यहाँ पर मुझसे मिलते हैं। इसी जिले में भडोड़ा तालूका की पहाड़ियों में उत्पन्न होकर 'मंजीरा' इस जिले की दक्षिणी किनारे से होती बहती आती है। यहाँ से 'उसमानाबाद' तथा मैसूर राज्य के बीडार जिले में आकर फिर आन्ध्र प्रदेश प्रवेश करके 'नान्देड़' की पूरबी सीमा पर मुझसे मिलती है। मंजीरा की धारा के ऊपर ही प्रसिद्ध निज़ाम सागर वाँध बना है। 'मजेड़ा' तालूका से निकलती 'चिन्तपान' इसी जिले के 'मंजिलेगाँव' में मुससे मिलती है। 'कैजू' तालूका में पाला-घाट श्रेणी के दक्षिणी हिस्से से 'वॉन' उत्पन्न होकर पूरबमुखी बने मोसीनाबाद तक आती है और टीलों को पारकर मुझसे आ मिलती है।

इसके बाद आता है नान्देड़ जिला। इसके उत्तर-पूरबी सीमा पर 'वैनगंगा' बहती है। इस जिले के मध्य भाग में मैं बहती हूँ। मंजीरा, मान, सरस्वती, वैनगंगा, आसना, सीता, लेण्डी आदि सहायक नदियाँ मुख्य हैं। इस जिले के पश्चिम दिशा में प्रवेश करके मैं पूरब की तरफ बहती हूँ। मेरे एक तरफ मुकेत, दिक्लूर तालूके और दूसरी तरफ बिलोली तालूका है। 'वाकघाट' पहाड़ी से निकलती 'सरस्वती' इस जिले के पूरबी हिस्से में प्रवाहित होकर 'माकुन्ता' गाँव

के निकट मुझसे मिलती है। 'आसना' नान्देड़ नगर से दो मील पर और 'लेण्डी' 'दिक्लूर' तालूका में मुझसे जुट जाती हैं। 'मानेर' इसी जिले की सीमा पर 'मंजीरा' को अपना पानी देती है। वैणगंगा जो इस जिले की उत्तरी सीमा बनी है, पूरब की तरफ बहकर 'यवत्माल' जिले में वर्धा से मिलती है।

अब अपने बाएँ तरफ के जिलों को देखें–नासिक के आगे औरंगाबाद जिले का दक्षिणी हिस्सा मेरी जलराशि से लाभ उठाता है। अजन्ता पहाड़ी श्रेणी इस जिले के उत्तर पश्चिम कोने में प्रवेश करके उत्तरी सीमा रेखा के समानान्तर अजन्ता गुफाओं तक चलती है। मैं तो लगभग १३७ मीलों तक इस जिले की दक्षिणी सीमा बनी अहमद नगर को वीड जिले से विभाजित करती हूँ। 'कानाट' पहाड़ी से आती 'सिवना' दौलताबाद के निकट से आती 'टेण्डा' औरंगाबाद के पूरवी पहाड़ियों से दौड़ी आती, 'दूधना' औरंगाबाद तालूके से वह आती 'खान' बैजपुर तालूका से होकर प्रवाहित होती, 'दिगु' पैठन तालूका से आती है। 'एरपाटरा' अम्बात तालूका से आती, 'काहाडी' आदि उपनदियाँ मेरे जल भण्डार को अपने अमूल्य जलराशि से भर लेती हैं। 'पूर्णा' ही मेरी सबसे बड़ी उपनदी है। यह 'कानाड' पहाड़ी से उत्पन्न होकर इस जिले के उत्तरी हिस्से से होकर गुजरती हुई मुझसे मिलती है। केलना, गिरिजा, दूधना आदि पूर्णा की उपनदियाँ हैं। इसकी कुल लम्बाई १०० (एक सौ) मील है।

वैजापूर में खान, पैठन में वैणगंगा, शिवभण्डारा, नागजुकारी आदि नाले मुझे अपना जल देते हैं। अम्बात तालूका में 'काडी', 'मूसा' का अर्घ्य स्वीकार करती हुई 'परबानी' जिले में कदम रखती हूँ। इस जिले के दक्षिणी हिस्से के सिंचन में मेरा पानी काम में आता है। यह प्रदेश काफी उपजाऊ और हरा-भरा है। लगभग ११२ मील की दौड़ लगाने पर, थकी-माँदी नान्देड़ में आती हूँ।

मैं अपनी मुख्य उपनदियों के बारे में आपको सुनाना चाहती हूँ। वैणगंगा, मराठी भाषा जहाँ बोली जाती है उन प्रदेशों को महाराष्ट्र

के साथ जोड़ती है। वर्धा और वैणगंगा विदर्भ प्रदेश को बम्बई व दक्षिण के साथ मिलाते हैं। मैं और मेरी उपनदियाँ इस राज्य में ताना-बाना बने बहती चलती हैं। पश्चिम और दक्षिण-पश्चिमी किनारे के तटवर्ती प्रदेश को कई एक नदियाँ अपने प्रवाह से खंडित करते बहने के कारण नासिक से जरा पूरब की तरफ और 'संगमनेर' में चौड़ी घाटियाँ बन गई हैं। पश्चिमी हिस्से में मेरा प्रवाह-क्षेत्र, जो शुरू-शुरू में सँकरा रहता है, क्रमशः चौड़ा होता जाता है। अलावा वैणगंगा प्रवाह-क्षेत्र मेरे ऊपरी हिस्से पर है। नासिक और अहमद नगर जिले के उत्तरी हिस्से के सिंचन को प्रर्वरा पानी देती है।

वर्धा, नागपुर, भण्डारा, यवतमाल, चाँद आदि जिले वैणगंगा के प्रवाह-क्षेत्र के अन्तर्गत हैं। मराठवाड़ा प्रदेश के 'औरंगाबाद', 'पर-बानी', 'बीड', 'नान्देड़', 'उसमानबाद' आदि जिलों को समृद्ध बनाने तथा अकालग्रस्त होने से बचाने के लिए कई योजनाएँ कार्यान्वित हुई हैं। मेरी उपनदी 'धरना' के ऊपर जल संचयन बाँध बना है। नान्दूर माधमेश्वर में एक और बाँध निर्मित है। गंगापुर बाँध सिंचाई की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। 'प्रर्वरा' की उपनदी है 'मूला'। यह बालेश्वर पहाड़ियाँ तथा हरिश्चन्द्रा घाट श्रेणियों के बीच में बहती है। मूला के पानी को भी एक जगह पर एकत्रित करके सिंचन के काम में लाते हैं।

'मंजीरा' कम महत्व की नहीं है। इसकी कुल लम्बाई ३५७ मील है। 'उसमानाबाद', 'बीडार', 'मेडक' जिलों से दक्षिण-पूरब की तरफ प्रवाहित होकर, 'कालापगूर' के निकट दस मील पर एका-एक मुड़ जाती है। इस सीधी मोड़ के उपरान्त उत्तरमुखी बने 'नान्देड़', 'इन्दौर' जिलों की सीमा के साथ-साथ बहती हुई मुझमें आ मिलती है।

मेरे उपनदियों में 'प्राणहिता' ही सबसे बड़ी है। वर्धा, बेनगंगा, वैणगंगा, ये तीनों मिलकर 'प्राणहिता' बनती हैं। इसका प्रवाह क्षेत्र

तथा सिंचन क्षेत्र काफी विस्तार का है। मेरी समतल घाटी में इसका मुख्य स्थान है। विदर्भ प्रदेश में बेनगंगा, वर्धा, वैणगंगा, पेंच, कनकन आदि उल्लेखनीय नदियाँ हैं। 'यवत्माल' जिले के एक हिस्से को बेनगंगा जल प्रदान करती है। अलावा वर्धा, नागपुर, भण्डारा, चान्द जिले भी इसके पानी का फायदा उठाते हैं। 'प्राणहिता' की कुल लम्बाई ३६० मील है। यह 'बुलढाना' जिले की पश्चिमी सीमा पर उत्पन्न होती है। फिर यवत्माल जिले की पश्चिमी सीमा बनकर लगभग २०० मील प्रवाहित होकर 'वून' तालूके के दक्षिण पूरब में जूघाट में 'वर्धा' से मिलती है। यद्यपि यह पूरबमुखी होकर बहती है फिर भी 'बूसात' तालूका के दक्षिण-पूरबी हिस्से में आते वक्त एकाएक उत्तर की तरफ मुड़ जाती है। यहीं पर प्रसिद्ध जलप्रपात 'सकर प्रपात' है। इस सीधी मोड़ के उपरान्त उफनती आती इसकी छटा निराली है। इसके दोनों किनारे पर के रम्यवनप्रदेश दर्शनीय हैं। इस जिले में पूछ, अरुणावती, आदवा, वाकाडी, कुकली, विदर्भा आदि इसकी उपनदियाँ हैं।

'वर्धा' बिटूल जिले के मुल्तान पठार से उत्पन्न होती है। शुरू में दक्षिण दिशा की ओर फिर दक्षिण-पूरब की तरफ बहती हुई 'वैणगंगा' को गले लगा लेती है। बीमपका, निरकुडा, वेनगंगा आदि इनको अपना सर्वस्व भेंटकर देने से इसकी जल सम्पत्ति अपार होती है। चाँद जिले में 'वैणगंगा' के साथ इसका संगम होता है। 'वूना' इसकी प्रधान उपनदी है। वर्धा जिले के उत्तर व पश्चिम की सीमा बनी बहती यह अमरावती, यवत्माल जिलों से वर्धा जिले को विभाजित कर देती है। चाँद जिले को वर्धा, वैणगंगा तथा इन्द्रावती आदि तीनों अपना पानी दिल खोल के देती हैं।

'वैणगंगा' की लम्बाई ३६० मील है। सतपूड़ा पहाड़ियों में मुंडारा गाँव के निकट इसका उद्गम स्थान है। यह 'सिनेय' तालूका में है। इस जिले की सीमारेखा कई मीलों तक बहने के उपरान्त यह

पालाघाट श्रेणी में प्रवेश करती है। इसके बाद नीचे की ओर हहराती हुई उतर आती है। तूफानी गति से बहती यह ढेरसारी मिट्टी को भी साथ बहा ले आती है। यह वेगवती ही नहीं, इसमें काफी गहराई भी है। एक छोटी-सी नदी 'दानवट' से मिलने के पहले सीधी ढालू से होकर गहरी खाई में इतनी तेजी से आ गिरती है कि इसका मतवालापन आपको मोह लेगा। झाग उड़ाती, फेन उगलती चट्टानों में उछल-कूद भरती इसे पहाड़ी नाले व नदियाँ अपना पानी दे देती हैं।

चाँद जिले के दक्षिण पश्चिम कोने पर वर्धा से संगमित होने के बाद ही इस नदी को 'प्राणहिता' का नाम मिलता है। अर्थात् वर्धा, वेनगंगा और वैणगंगा इन तीनों की सम्मिलित धारा है 'प्राणहिता'।

अध्याय : ४

महाराष्ट्र की सीमा पर आते-आते चाहे जितनी भी तेजी से कदम उठाऊँ, उतनी ही अतीत की स्मृतियाँ, जिन्हें मैंने अपने आँखों से देखा व हृदय से अनुभव किया है, जो मेरी धारा में पड़े हुए पत्थरों के जैसे चाहे कितना भी उनके ऊपर पानी बहे, अविचल रहते हैं। मुझे अनजाने ही महकते फूलों से घेर लेती हैं। उस तीखे सुगन्ध की मादकता मुझे बरबस उस अतीत की ओर ले जाती है।

एक जमाने में 'महाराष्ट्री', 'दक्षिणपाता' कहा जानेवाला यह प्रदेश मेरी बहन नर्मदा और कृष्णा के बीच का प्रदेश था। सुदूर दक्षिण में कुमारी अन्तरीप तक के भूभाग को दक्षिण देश कहा जाता है। आजकल तो भाषावार प्रान्तों का बँटवारा हुआ है न? इसके अनुसार मराठी भाषा-भाषियों का देश महाराष्ट्र बना है। ओह! इन बँटवारों पर मेरा दिल कितना दुखी है? जाति व धर्म को लेकर मेरे सन्तान जो लड़ते-झगड़ते रहे, आज भाषा को लेकर, सीमा को

लेकर आपस में लड़ रहे हैं। धरती, पानी, भाषा, जाति जैसे छोटे-छोटे दायरों में बन्द रखनेवाले इन लोगों का अज्ञान दूर होनेवाला दिन कब आयेगा ?

इस देश के लोग क्या एक भाषा, एक बोली बोलते हैं? इस राज्य में तथा आन्ध्र प्रदेश में मैं प्रवाहित होती हूँ। मेरी इस लम्बी यात्रा में मेरे कानों में न जाने कितनी बोलियाँ, कितनी भाषाएँ पड़ती रहती हैं। स्थान-स्थान पर बोल-चाल की भाषा नव-नव रूप लेती रहती है। खानदेश में अकिरनी बोलते हैं, कोंगण की कोंगणी और गोवा में बोली जानेवाली कोंगणी में कितना फरक है ? बिहार और नागपुर में 'वरगति' प्रचलित है। कृष्णा की घाटी के दक्षिणी हिस्से में 'कोल्हापुरी' बोली जाती है। आजकल जिसे 'पैठन' कहते हैं। वह नगरी एक जमाने में 'परिस्थान' के नाम पर कितनी प्रसिद्ध थी। सातवाहनों की राजधानी बनी यह नगरी विद्याकेन्द्र थी। सातवाहनों को सगरराजा कहा करते थे और ये लोग अपने को 'आन्ध्र भृत्य' कहते थे। इनकी भाषा ही 'प्राकृत महाराष्ट्री' थी। सातवाहन, शालुक्य, नालवाडियर, कदम्ब, वाकाटक, राष्ट्रकूट जैसे राजवंश यहाँ पर राज करते आये। राष्ट्रकूटों के बाद आये यादववंश के शासनकाल में मराठी भाषा अंकुरित हुई। यादव महाराजाओं ने इस भाषा को राजकीय संरक्षण प्रदान कर इसे राजभाषा बना दिया। फिर क्या मराठी भाषा खूब फूली-फली।

कोंगण में मौर्य, कदम्ब व शिलाकर वंशों ने राज किया। वाकाटकों का प्रदेश, पूर्ण, वर्धा, वैणगंगा का मैदानी भाग जिसे बाद में विदर्भा कहा करते थे। नागपुर के पूरबी हिस्से से लेकर 'भण्डारा' तक का भू-भाग गोण्ड राजा के अधीन था। खानदेश प्रदेश के शासकों में अहीर, अबीर का वंश प्रधान रहा।

सातवाहन वंश ने बिलकुल ३०० साल अर्थात् दूसरी शताब्दी तक राज करते थे। इनको ही सच्चे अर्थ में महाराष्ट्रीय राजा कह सकते हैं। वाकाटकों के युग में इस राज्य की सीमा का विस्तार

हुआ। ये विद्या, कला-कौशल के प्रेमी थे और इनकी राजव्यवस्था उच्चकोटि की थी। कलचूरी वंशवाले अधिक दिनों तक अपनी जड़ें जमा न पाये। लेकिन इनके बाद में आये शालुक्यों ने अपने को महाराष्ट्र नरेश के रूप में घोषित करते हुए लोगों को प्रभावित कर दिया। दीर्घकाल तक यहाँ पर इनकी धाक जमी रही। सातवाहन, वाकाटक, शालुक्य इन तीनों के शासनकाल में कला का खूब विकास हुआ।

नौवीं शताब्दी में ही मराठी जो बोल-चाल की बोली थी, परिमार्जित सुसंस्कृत साहित्यिक भाषा बनी। १३ वीं सदी में ज्ञानेश्वर, नामदेव, मुकुन्दराज जैसे संतों ने मराठी भाषा में अपनी भक्ति काव्यों की रचना की। उनके भक्ति प्रधान गीत सुमधुर, सरल मराठी भाषा में गाये गये। मराठी भाषा के विकास में इनकी सेवा महत्वपूर्ण है। इनके हरिकीर्तनों से दिशाएँ गूँज उठीं।

महानुभव सम्प्रदाय वालों ने भक्ति का प्रचार मराठी भाषा में किया। जनमानस की बोली में बड़ी सरल भाषा मे ईश्वर की महिमा गायी गयी। रूढ़ियों में जकड़ी हुई जनता को मुक्त कर, जात-पाँति के बन्धन को झूठा बताया गया। ये सन्त लोग बड़े उदार विचार के थे। विभिन्न धर्मवालों ने इस सम्प्रदाय की दीक्षा ली थी। जो भी हो, जनता में एक नया धार्मिक जागरण आया, भक्ति-शीलता व संस्कार फूली-फली, यही मेरे लिए सन्तोष की बात रही। हाँ, इन्होंने अपने सम्प्रदायों के प्रचार में कटुता का सहारा न लेकर प्रेम व दया का आश्रय लिया था। विभिन्न धर्म व प्रदेश के लोग यहाँ आकर आबाद हुए थे। बौद्ध, जैन धर्म का बोलबाला भी यहाँ रहा तो भी वह स्थायी न रह पाया।

विन्ध्य पहाड़ों के उस पार से मुगल सत्ता ने यहाँ पर अपना आधिपत्य जमाने में बहुत-सा समय लगाया, यह तो आश्चर्य की बात है न? लगभग दो सौ सालों के उपरान्त ही १४ वीं सदी में दक्षिण की तरफ कदम बढ़ाया। इस भू-भाग को अपनी अधीनता में लाना

भी उतना आसान न रहा। कोंगण, मावली प्रदेश और इस राज्य में आपसी फूट ज्वालामुखी से जब तक न फूटी तब तक यहाँ आने का साहस उन्हें न हुआ। आपसी बैर, फूट और खूनी हत्याकाण्डों द्वारा इन लोगों ने अपना सर्वनाश खुद कर लिया था। फूट की आग ने उनकी आजादी को जला-भुनाकर भस्म कर डाला। १५ वीं सदी के मध्य तक मुगलों का झण्डा यहाँ न फहरा। पतनोन्मुख मराठों की वीरता और साहस व देश-भक्ति का यही ज्वलन्त उदाहरण है।

जीजाबाई की याद आते ही मेरी छाती फूल उठती है। जब हिन्दू साम्राज्य के महान् निर्माता वीर शिवाजी की महान् विजय में जीजाबाई का बड़ा हाथ है। शिवाजी के जन्म के पूर्व ही मराठों में जागरण आ गया था, मगर एकता न थी। अपनी आजादी को सुरक्षित रखने के लिये वे निरन्तर लड़ रहे थे। देश की आर्थिक दशा बड़ी सोचनीय थी। इस महाराष्ट्र देश में जल-संपत्ति का कोई अभाव नहीं। हम कई एक नदियाँ इस धरती को उपजाऊ बना रही हैं। फिर भी यहाँ बीच-बीच में भारी अकाल पड़ जाता है। आपसी कलह और परस्पर युद्धों के अलावा पुर्तगीजों के हमले व कूटनीति के कारण शान्ति न रही। जनता चैन की नींद न सो पाई। आये दिन संघर्ष चलते रहे। 'गोवा' से लेकर 'मिराज' तक के हिस्से में पुर्तगीजों का इतना आतंक मचा हुआ था कि लोग आक्रान्त हो उठे थे। इनकी लूट की बाजार गर्म थी। लोगों की आपसी फूट का इन लोगों ने पूरा-पूरा लाभ उठाया। व्यापारी बनकर जो आए, एक हाथ में बन्दूक लिए आये थे कि सौदा करना क्या? लूट-पाट मचाना, बहू-बेटियों की इज्जत लूटने से भी बाज न आये। देश की बरबादी के लिए और क्या चाहिए ?

अजस्र धाराओं की अपार जल-राशि का वरदान पाकर भी महाराष्ट्र इससे पूरा लाभ उठाने से वंचित रह जाता है। कारण, हम

नदियों के किनारे काफी ऊँचे हैं और पथरीले भी। सिंचाई की सुविधाओं के लिए नहर, नाले व झील उचित मात्रा में नहीं। ऐसी हालत में अकालग्रस्त रहें तो आश्चर्य कैसे? आजकल हम नदियों द्वारा सिंचाई की सुविधाएँ वन रही हैं। हूँ -- राजनैतिक दृष्टि से भी इसका भाग्य अच्छा न रहा। सोलहवीं शताब्दी के बीच में महाराष्ट्र के कई हिस्सों में सुल्तानों का राज्य था। हाँ, यह सुन्दर प्रदेश कई टुकड़ों में बँट गया। गोलकुण्डा, वीजापुर, बीडार, अहमद नगर ऐसे कितने ही राज्य थे।

महाराष्ट्र के वीर, बहादुर, सरदार, सेना नायक, पंडित, विद्वान् आदि के लिए इन सुल्तानों का आश्रय लिए बिना कोई चारा नहीं। देश-भक्ति और आजादी का प्यास दिल ही दिल में ज्वालाग्नि-सी घुमड़ती रही। इस अन्तर्दाह को प्रकट करने का साहस नहीं। सच कहती हूँ – पेट, आजादी का सबसे बड़ा शत्रु है। अलावा लोगों में एकता कहाँ थी? शिवाजी का पिता शाहूजी किसी न किसी सुल्तान का सेनापति बने घूमता रहता है। कहीं टिकता नहीं।

१६२७ अप्रैल का महीना है। शिवनेरी किले में शिवाजी का जन्म हुआ। जीजाबाई वीर की बहू ही नहीं, वीरवंश की लाडली पुत्री थी। देखने में सुन्दर न लगती थी मगर उदार हृदयवाली थी। बड़ी गुणवती और शीलवती थी। एक पुरुषोचित धीरता, दृढ़ता व अपनी बात पर डटे रहने की हठ उसमें गजब की थी। शाहूजी की उससे एक न चली। शाहू और जीजाबाई का दाम्पत्य जीवन बड़े सुख से बीता ऐसा कह न सकते। पति का प्यार उसे न मिला मगर पत्नी की हैसियत से उसकी आदर बनी रही। शाहू के अनिश्चित जीवन के कारण दोनों अधिक दिनों तक एक साथ, एक जगह पर रह न पाए। बीच-बीच में शाहू घर लौटेगा। अपने बेटे से उसे प्यार था। राजनैतिक बातों को लेकर पति-पत्नी में वड़ा मतभेद हुआ करता था। जीजाबाई की दृष्टि पैनी थी। राजनीति के दाँव-पेचों से

अधिक परिचित न होने पर उसमें दीर्घदर्शिता थी। जीजाबाई अपने पिता तथा पति दोनों के विचारों का समर्थन न करती थी। इन दोनों की सहायता के बिना ही स्वयं अपने पैरों पर खड़े होकर, दादा कोण्डदेव की मदद से उसने अपने एकलौते बेटे को महान वीर योद्धा बनाया था। जीजाबाई की इस हिम्मत व स्वाभिमान पर मैं मुग्ध थी। पूना के आस-पास जागीर पहाड़ों पर ही शिवाजी का लड़कपन बीता। शिवाजी को आराम का जीवन कहाँ मिला था। माँ के साथ एक किले से दूसरे किले में जाता रहता था। उसके पिता तो अहमद नगर सुलतान का सेना में मनसूबेदार थे। शिवाजी के घर व परिवार की परिस्थिति तथा बचपन व लड़कपन के वातावरण का उसके वीर बनने में हाथ था। हाँ, परिस्थिति ने ही उसे विद्रोही बना दिया।

मुगलों के प्रति उनके अन्यायपूर्ण व्यवहारों के कारण शिवाजी के दिल में कटुता की भावना जो अच्छी तरह पैठ गई थी, अन्त तक दूर न हुई। सुलतानों का चरण धोकर, उनकी खुशामदी करके, सुख भोगमय जीवन बिताने से बढ़कर उनका विरोधी बनकर भूखे-प्यासे जीना बेहतर है। यही शिवाजी का विचार था। जीजाबाई बेटे के इस विद्रोही भावना का समर्थन करती थी।

उसका बचपन व लड़कपन पहाड़ियों की गोद में बीता था न? प्रकृति की पहाड़ी सौन्दर्य ने उसके युवा हृदय में जादू की मोहिनी मंत्र फूँक दी थी। उसकी काव्यात्मक सौंदर्य पर वह अकसर आत्मविस्मृत हो जाया करता था। सिर ऊँचा किये खड़े पहाड़ों व चट्टानों-सा वह निर्भीक था। खुले आकाश के जैसे वह किसी वन्धन को न मानता था। चट्टानों पर उछल-कूद करती, वेगवती जंगली नदी के जैसे उसका जीवन बिल्कुल स्वच्छन्द व स्वेच्छापूर्ण था न?

बालक शिवाजी की नस-नस में वीरता को भरकर, उसके हृदय कभी न बुझनेवाली अनादि के प्यास को जगाने वाली उसकी माँ जीजाबाई को भारतवासी भूल नहीं सकते। छत्रपति शिवाजी को

महान् योद्धा बनाने का सारा श्रेय उसी को मिलना है। बेटे के लिए एक महत्वपूर्ण भविष्य का निर्माण करने से न रुकी, उसकी पथ-प्रदर्शिका भी बनी रही। दादा कोण्डदेव ने अद्भुत कार्यकुशलता, अदम्य साहस व कूटनीति का तो पाठ पढ़ाया था। उसी ने इतिहास के पृष्ठों में उसे अमर बना दिया।

सुल्तानों के शासन का पिछले अंश में देश में अशान्ति का बोल-बाला हो गया। शासन के बागडोर को थामने में असमर्थ सुल्तान गद्दी पर आसीन थे। तख्त बदलते, सुल्तान बदलते और अधिकारी वर्ग की मनमानी चलती। फिर क्या ? चारों तरफ हाहाकार मच गया। हिन्दुओं की दशा पर क्या कहूं ? दयनीय दशा में रहते हुए भी इनमें एकता न रही। किसी बात पर एकमत होकर कार्य करने की क्षमता नहीं।

इस विकट परिस्थिति में ही शिवाजी राजनीति के रंगमंच पर आया। बिखरी हुई शक्तियों को एकत्रित किया। पतनोन्मुख हिन्दुओं में नई जान फूँकी। हिन्दुओं को हिन्दू धर्म के नाम पर सबसे पहले उसी ने एक झंडे के नीचे लाने का साहसिक कदम उठाया था। मराठे कायर न थे। प्राकृतिक दष्टि से सुगठित शरीर व गजब की चुस्ती उनमें थी। स्त्री-पुरुष दोनों बड़े मेहनती हैं। महाराष्ट्र की स्त्रियाँ बड़ी सुन्दर व आकर्षक हुआ करती हैं।

इनकी सबसे बड़ी विशेषता इनकी जातीयता व देशभक्ति है। संकीर्ण होने पर भी अपने प्रदेश के लिये प्राण की बाजी लगाने को तैयार रहेंगे। हाँ, ये लोग बड़े भावुक हैं। बड़ी जल्दी भाववेश आ जायेंगे। आडम्बरहीन सादा व सरल जीवन है इनका। इनका रहन-सहन, आचार-विचार, इतना ही क्यों इनके अस्त्र-शस्त्र भी बिना टीमटाम के सादा व सरल होते हैं। इनको लड़ाकू व युद्धप्रिय जाति कहना भी उपयुक्त होगा।

इस राज्य की प्राकृतिक बनावट इनकी लड़ाकू प्रवृत्ति के उपयुक्त है। कोरिला युद्ध में ये लोग बड़े चतुर हैं। पहाड़ी दुर्ग, टीले, पहाड़ी किले, पहाड़ी प्रान्तर प्रदेश, पर्वतीय मैदान व घाटियाँ कोरिला युद्ध के लिए बड़ी सुविधाजनक हैं। शिवाजी की युद्ध प्रणाली निराली थी। उनको 'पहाड़ी चूहे' कहा करते थे ? लुक-छिपकर छापा मारने में वह चतुर था। अपने सेना को भी इस ढंग से तैयार किया था। शिवाजी के पिता शाहू भी वीरता में कम न था, मगर शिवाजी को 'हिन्द साम्राज्य' उसके लिए कोरा अर्थहीन सपना-सा लगा। शिवाजी की 'आजादी की प्यास' व महत्वाकांक्षा को समझने की शक्ति उनमें न थी। वह चाहता था कि उसका बेटा भी उसी के जैसे 'बीजापुर सुल्तान' के दरबार की शोभा बढ़ानेवाला एक सामन्त बन जाए और एक छोटी टुकड़ी का राजा बने। शाहू की यह चिर कामना पूरी न हुई। हर छोटी-मोटी बातों में पिता-पुत्र में संघर्ष चलता रहा कि वे कभी एक न हो पाये।

इन पश्चिमी घाटों के सघन वनों की हरी-भरी घाटियों में उस महावीर योद्धा ने कितने ही रातों को उनींदे बिताया है। भूखे-प्यासे दिन-रात एक करके सेना का संगठन किया है। रातों में उनकी आँखों पर नींद उतरती कहाँ ? युद्ध के दाँव-पेचों की योजनाएँ उसके मस्तिष्क में बनती रहती थी। इन पहाड़ों में उसे आश्रय ही नहीं, यहाँ के मावलियों की सहायता भी प्राप्त हुई। अपने जागीर में उसने मावलियों को सामरिक शिक्षा दी थी। उस लड़ाकू जाति को सामरिक शिक्षा द्वारा उसने अप्रतिम वीर योद्धाओं के रूप में बदल दिया था। वीर शिवाजी को कौन भूल सकता था ? अपने इस योग्य सुपुत्र पर मुझे बड़ा गर्व है। जिस हिन्दू साम्राज्य के निर्माण करने का सुनहला सपना देख रहा था, उसे अपने जीवन काल में ही सत्य व साकार बना दिया था न ?

१६६२ में कल्याण किले से गोवा तक लगभग ३०० मील तक फैले कोंगण प्रदेश को अपनी काबू में कर लिया था कि उसकी अप्रतिम कूटनीति व बहादुरी पर मैं चकित-सी रह गई।

शिवाजी के शासन-काल में देश में खुशहाली रही। कई साधु, सन्त व महात्मा अवतरित हुए। इनमें शिवाजी के गुरु समर्थ रामदास ने चिन्तन को एक नई मोड़ दी। वास्तव में अद्भुत प्रतिभा थी उनमें। बुरा न मानिये ·· इस देश में भक्ति-मार्ग से ज्यादातर निवृत्ति मार्ग मानने वाले लोग ही अधिक हैं। हिन्दुओं के पराजय और राजनैतिक पतन का यह भी एक सबसे बड़ा कारण है। अन्यथा बाहर से आये मुट्ठी भर लोग इन पर हावी होते कैसे ?

राजा तो स्वार्थी, निठल्ले और संकुचित दृष्टि वाले ठहरे ! प्रजा को तो इसका बोध ही न रहा कि यह देश उनका है। अलावा, धार्मिकता के नाम पर जात-पाँत की कट्टरता व छुआछूत की भावना बढ़ती गई जो देश की एकता के लिए घातक बन गई। महाराष्ट्र के सन्त-महात्माओं ने इस दिशा में जो सेवा की, वह स्तुत्य है। उन्होंने इस संकीर्णता व कट्टरता से लोगों को ऊपर उठाकर जो पथ-प्रदर्शन किया था वह अविस्मरणीय है। समर्थ गुरु रामदास बड़े वेदान्ती व तत्त्वदर्शी थे। बिखरे व टुकड़ों में बँटे महाराष्ट्र समाज को अपने उपदेशों द्वारा एक सूत्र में बाँध दिया था और देश की आजादी के लिये संघर्ष करने की प्रेरणा उनमें भर दी।

इन साधु-सन्तों ने महाराष्ट्र के लोगों को जो सदुपदेश दिये थे, वही उनके नवजागरण व राजनैतिक जागृति की सशक्त नींव बन गई। यह जीवन क्षणभंगुर है, बुलबुले के जैसा अस्थिर है, नाशवान है—ऐसे वैराग्य प्रधान उपदेशों द्वारा जीवन के प्रति उपेक्षा व देश के प्रति विमुखता का भाव इन सन्तों ने उत्पन्न नहीं किया, उलटे पहले से अधिक जागरूकता से धार्मिक दृष्टिकोण लिये शीलता, न्याय, सत्य व सच्चरित्रता को अधिक महत्व देने में लग गये। भक्ति-आन्दोलन ने

लोगों को सुसंगठित ही नहीं किया; राजनीति, कला, संस्कृति, साहित्य सभी क्षेत्रों में उनको सर्वोच्च शिखर पर पहुँचा दिया था।

सत्रहवीं शताब्दी महाराष्ट्र का स्वर्णयुग था। लेकिन शिवाजी का वह महान साम्राज्य उसके उपरान्त पतन की ओर अग्रसर हुआ।

हूं महाराष्ट्र-जीवन के उदय को मैंने देखा था, अब उसके अस्तमन को भी बोझिल मन से देखा।

अब तो महाराष्ट्र की सीमा पीछे छूट गयी, आंध्र प्रदेश में प्रवेश कर रही हूँ। १६१ कि०मी० तक 'चान्द', 'बस्तार' जिलों को विभाजित करती हूँ। सुन्दर व सुहावना 'सिरौंचा' गाँव को पार करने के उपरान्त ही 'प्राणहिता' का मुझसे संगम होता है। इसके बाद ४८ कि०मी० में 'बस्तार' से आती 'इन्द्रावती' बड़ी शोर मचाती आती है। इसके बाद मध्य प्रदेश से 'ताल' आती है। इन सब के मिलन के उपरान्त मेरी जलराशि ही नहीं, मेरा पाट भी विशाल हो जाता है। कहीं-कहीं तो एक मील, दो मील विस्तार के रेतीले तटों को आप पा सकते हैं। यहाँ पर मेरी गति बड़ी धीमी है। १८५४ में मेरी धारा रोककर दिशा-परिवर्तन की कोशिशें की गयीं, नहरें निकालना भी चाहा था, मगर न जाने क्यों कोई योजना कार्यान्वित न हुई।

महाराष्ट्र की कन्या मैं, आंध्र की बहू हूं। मायके से ज्यादा मैं अपने ससुराल को सम्पन्न व समृद्ध बनाती हूँ। मुझे अपने पानी से समृद्ध करने वाली अधिकांश उपनदियाँ यद्यपि महाराष्ट्र में जन्म लेती हैं, बड़ी दूर से दौड़ी आती इस राज्य में ही मुझसे मिलती हैं। आंध्र प्रदेश के भाग्य का क्या कहना? इस राज्य में कुल ३५ (पैंतीस) नदियाँ हैं। इनमें पाँच के अलावा बाकी सब की सब जीवन्त नदियाँ हैं। विशाल भू-भाग और अपार जल-सम्पत्ति से युक्त आंध्र प्रदेश को प्रकृति का विशेष वरदान प्राप्त है।

मैं कृष्णा, पेण्णै, वामसदारा, नागवल्ली आदि पश्चिम से पूरब की ओर या उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूरब की ओर प्रवाहित होकर पूर्वी घाट को काटती चलती हैं। हमारी तलछट व गाद मिट्टी इस प्रदेश के तटीय प्रदेशों को उपजाऊ बना देती है। महाराष्ट्र के 'महाबलेश्वर' में उत्पन्न होने वाली कृष्णा तथा भीमा और तुंगभद्रा के बारे में फिर विस्तार से सुनाऊँगी। नागवल्ली, वामसदारा दोनों उत्तर-पूरबी कोने में 'विजयनगरम्', 'श्रीकाकुलम्' जिले में बहती हैं। नागवल्ली का 'लाँगूला' ऐसा एक नाम है। यह तो उड़ीसा प्रान्त की पहाड़ियों में उत्पन्न होकर उस प्रान्त में ६० मील बहने के उपरान्त आन्ध्र प्रदेश में प्रवेश कर दक्षिण-पूरब की तरफ १२० मील बह आने पर 'श्रीकाकुलम्' के निकट 'बंग सागर' में मिलती है। 'वामसदारा', 'उड़ीसा' के पूरबी पहाड़ियों से उत्पन्न होकर ६० मील उस राज्य में बहने के बाद श्रीकाकुलम् जिले में ८० मील बहकर अन्त में सागर में मिलती है। ये दोनों जीवन्त नदियाँ हैं। इनकी धारा कभी नहीं सूखती।

आन्ध्र प्रदेश का क्षेत्रफल २,७५,२०९ वर्ग किलोमीटर है। इस राज्य के दक्षिण व उतर में उड़ीसा, मध्य प्रदेश, पश्चिम में महाराष्ट्र, मैसूर, दक्षिण में तमिलनाड, पूरब में बंग सागर आदि प्राकृतिक सीमाएँ हैं। इस समुद्र तट की लम्बाई लगभग ६०० मील है। इसके अन्तर्गत बीस जिले हैं। महबूब नगर, हैदराबाद, मेडक, निजामाबाद, आदिलाबाद, करीम नगर, वरंगल, खम्मम, नलकोण्डा, श्रीकाकुलम्, विशाखापट्टनम्, पूर्वी गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी, कृष्णा, गुण्टूर, नेल्लूर, चित्तूर, कडप्पा, कर्नूल, अनन्तपुर आदि में पहले के नौ जिलों को तेलंगाना और कर्नूल, कडप्पा, अनन्तपुर, चित्तूर आदि को 'रायल सीमा' कहा करते हैं। श्रीकाकुलम् से नेल्लूर तक समुद्री तट की सीमा है। यह समुद्रतटीय प्रदेश ही मेरे और कृष्णा का डेल्टा प्रदेश भी है। यह डेल्टा प्रदेश खलिहानों का भंडार है। यह सोना उगलने वाली भूमि है। विजयवाड़ा, गुण्टूर,

राजमहेन्द्रपुरम्, काकिनाडा, एलूरु आदि नगरों की उन्नति द्रुत गति से हो रही है।

समुद्रतटीय मैदानी प्रदेश के बाद मेरे और कृष्णा के बीच में १०० मील के विस्तार के अलावा मेरे उत्तर में व कृष्णा के दक्षिण में पहाड़ व टीले फैले हुए हैं। पूरबी घाट के सिलसिले में भी एकरूपता नहीं। बीच-बोच में टूटी व बिखरी पड़ी हैं। उत्तर-पूरब की ओर से दक्षिण पश्चिम की तरफ चलती पहाड़ी मालाओं की ऊँचाई समुद्र तल से २००० फुट से लेकर ४००० फुट तक है। कृष्णा के उस पार इस पहाड़ी श्रेणी को फिर से देख पाएँगे। नल्लमलै, एरामलै, शेषाचलम्, पालकोण्डा कही जाने वाली श्रेणियाँ गहन वनों से आच्छादित हैं। इन पर्वतमालाओं के ऊपर तथा प्रांचल प्रदेशों में आदिवासी लोग आबाद हुए हैं। यह आश्चर्य की बात है कि इतनी जल सम्पत्ति के होते हुए भी तेलंगाना प्रदेश तथा कर्नूल व अनन्तपुर जिले उतने उपजाऊ नहीं दीखते। इन जिलों में वर्षा की बड़ी कमी है।

समुद्रतटीय मैदानी प्रदेश की उत्तरी सीमा पर है श्रीकाकुलम्। दक्षिणी सीमा नेल्लूर जिला है। उत्तरी सीमा पर यह मैदान सँकरा है। महेन्द्रगिरि पहाड़ी और समुद्र के बीच में १२ फुट का खुला स्थान है। लेकिन दक्षिण की तरफ विशाल होते जाते इस मैदानी प्रदेश में विशाखापट्टनम् जिले में पूर्वी घाट आड़े आते हैं। विशाखापट्टनम्, एरोडा पहाड़ियों का सिलसिला समुद्र को भेदकर भी चलती हैं कि सीधी खड़ी चट्टान बनी 'डालपिन नाक' कही जाती है। यही विशाखापट्टनम् का प्राकृतिक बन्दरगाह बना है। किन्तु गहराई न होने के कारण इतने लम्बे समुद्र तट पर बन्दरगाह अधिक नहीं। इस मैदानी प्रदेश के बाद का भू-भाग काफी विशाल व विस्तार का है। कृष्णा और मेरे डेल्टा प्रदेश में बुनी हुई जाल-सी नहरें निकाली गई हैं। इसके बाद गुण्टूर व नेल्लूर जिले आते हैं। 'पेण्णै' का डेल्टा भी यही है। इस विशाल आन्ध्र प्रदेश की समुद्रतटीय सीमा 'पुलीकट झील' के साथ-साथ खत्म हो जाती है।

आमतौर पर आन्ध्र प्रदेश को पर्वतमालाएँ ऊँची नहीं हैं। सिंहाचल, विशाखापट्टनम्, मंगलगिरि और तिरुपति में ऊँचे पर्वत-शिखर हैं। इन पहाड़ों के शिखरों पर कोई न कोई देवता का मन्दिर है। हम नदियों के प्रवाह से आप जान सकते हैं कि भूमि का ढाल पश्चिम से पूर्व की ओर है। मेरे और कृष्णा के पूर्वी घाट की शृङ्खला न दीखती। पूर्वी समुद्र से हटकर पूर्वी घाट की श्रेणी शुरू होती है। पहाड़ी शृङ्खला और समुद्र के बीच की भूमि उपजाऊ है।

तेलंगाना में छोटी-छोटी पहाड़ियाँ हैं। पहाड़ी दुर्गों में पैनुगुण्डा, कोण्डवीडु, राचककोण्डा, भुवनगिरि जैसे दुर्ग इतिहास-प्रसिद्ध हैं। ओह ! एक बात कहना मैं भूल ही गयी। आन्ध्र राज्य में घने जंगल अधिक नहीं मिलेंगे। लेकिन तेलंगाना के वारंगल, नलगोण्डा तथा रायल सीमा के नल्लमल प्रांत तथा बस्तर में जो जंगल हैं उनमें वन्य पशु-पक्षी अधिक मिलेंगे।

तेलगू भाषा-भाषियों के इस राज्य को आजकल आन्ध्र प्रदेश कहते हैं। हजारों-हजारों साल पहले जब ये लोग नदी तटों पर आबाद होने लगे थे न ? वैसे ही मेरे और कृष्णा के तटों में जो लोग आबाद हुए वे ही आन्ध्र कहे जाते हैं। हम नदियों ने इस आन्ध्र की संस्कृति व साहित्य के विकास में महान् योग दिया है।

'अवंत्र देश' अत्यन्त प्राचीन काल से इस प्रदेश का नाम था, जो बदलते-बदलते आन्ध्र देश बन गया है। मेरे और कृष्णा के तटों पर लोगों की भाषा के कारण 'तलंगाना' कहा गया जो अब तेलंगाणा बन गया है। अलावा इसको त्रिलिंग क्षेत्र भी कहा करते हैं। काकतीय राजागण इसे एक शासन के नीचे लाये थे। बाद में यह कई भागों में बँट गया था। आजादी के बाद १९५३ में आन्ध्र राज्य का जन्म हुआ और १९५६ में विशाल आन्ध्र राज्य का निर्माण हुआ। अब तो पूर्व आन्ध्र के ११ जिले, तेलंगाना के नौ और हैदराबाद राज्य का गुबर्गा, बीदर ज़िले के कुछ तालूके इसके अन्तर्गत आ गये हैं।

यह दक्षिणी पठारी प्रदेश प्राचीनतम माना जाता है। भारत का ही नहीं, संसार भर में प्राचीनतम है। साधारण रूप से इसका ढाल उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर है। इसलिए ज्यादातर नदियाँ बंगाल की खाड़ी में जा गिरती हैं। वैसे ही पश्चिमी भाग में पश्चिमी घाटी पहाड़ों का खड़ा ढाल होने से कई एक छोटी-मोटी द्रुतगामिनी नदियाँ अरब सागर में भी गिरती हैं। उत्तरी-पूरबी दक्खिन को, दक्षिणी दक्खिन से मेरी विशाल घाटी अलग करती है। इस भू-भाग की जलवायु भी भारत के अन्य भागों से भिन्न है। वर्षा कम होती है और ताप अधिक है। दक्षिणी पठारी प्रदेश में मैं, कृष्णा तथा पेण्णै बहती हैं। मध्यवर्ती प्रदेश तो पर्वतीय प्रदेश है। तटीय मैदान तो डेल्टा प्रदेश है।

इनकी भाषा तेलगू है। इस प्रदेश के निवासियों को 'तेलगुलु' कहा करते थे। इस भाषा को 'आंध्र', 'तेनगू' भी कहा करते हैं। आजकल एक विशेष जाति को सूचित करने वाला बन गया है। पूर्व-काल में इस प्रदेश में प्राकृत भाषा का प्रयोग चलता था। राज-कार्य तथा साहित्य भी प्राकृत भाषा में ही लिखा गया। बौद्धधर्म का प्रचलन इसका एक कारण है। अलावा वैदिक भाषा तथा संस्कृत का भी बोलवाला रहा।

समय के साथ-साथ कितने राजनैतिक, धार्मिक व सामाजिक हेर-फेर होते गये। परिस्थिति ने तेलगू भाषा को जन्म दिया, जो आगे विकसित होती गयी। छठीं व सातवीं सदी में इसकी पूरी उन्नति हो गयी। संस्कृत और प्राकृत का प्रभाव होने पर भी यह द्रविण परिवार की भाषा मानी जाती है। यह बड़ी मीठी व मधुर है।

आंध्र में सबसे पहला सुसंगठित राज्य सातवाहनों का था। सातवाहन वंश का नाम इतिहास-प्रसिद्ध है न ? मौर्यकाल में ही यहाँ सुशासन की नींव पड़ गयी थी। अशोक के साम्राज्य के अन्तर्गत रहा यह प्रदेश शातवाहन काल में स्वतन्त्र हो गया। इस वंश के ३०

राजाओं ने लगभग ४५० साल तक राज्य किया। इनमें 'शातकर्णी', 'कुंतल', 'पुलोमावि' उल्लेखनीय हैं। इनके राज्यकाल में व्यापार की खूब उन्नति हुई थी। सुदूर पूर्व टापुओं के साथ समूही व्यापार चलता था। इन नरेशों ने साहित्य को प्रश्रय दिया। वैदिक धर्म और संस्कृत भाषा के प्रेमी होते हुए भी अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णु थे।

विस्तृत विशाल भू-खण्ड, अजस्र धारा बहाती नदियाँ, हरी-भरी पहाड़ियाँ, रम्य वन प्रदेश, सोना उगलने वाली मिट्टी तथा उदार सहृदय प्रजा आगन्तुकों को आकर्षित किये बिना रहती कैसे? जो भी आये, आंध्र माता ने अपनी वात्सल्यमयी गोद में स्थान दिया। बौद्धधर्म का सन्देश लिये कितने ही बौद्ध भिक्षु व साधु यहाँ आये। सातवाहनों में अन्तिम नरेशों ने बौद्धधर्म को स्वीकार किया था। उनमें प्रसिद्ध थे नागार्जुन। इन्होंने महायान सम्प्रदाय का प्रचार किया। यह सम्प्रदाय कर्मकाण्डों का विरोधी न था। इसलिए लोगों ने इसका विरोध नहीं किया।

हम नदियों के तटवर्ती प्रदेशों में हरियाली लहराती थी। तटीय प्रदेशों के पहाड़ी गुफाओं में रहते हुए आत्म-चिन्तन में लग गये थे। तपस्यारत उन भिक्षुओं को यहाँ एकान्त व शान्ति मिली। भिक्षुओं ने साहित्य, शिल्प, चित्र, दर्शन आदि सभी क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। कितने भव्य बिहार, चैत्र व मठ-मठालय यहाँ बने थे। नागार्जुन कोण्डा के अद्‌भुत शिल्प व स्थापत्य को देखने वाले आज भी चकित रह जाते हैं न?

सातवाहनों के उपरान्त इक्ष्वाकु कुल का राज्य पचास साल रहा। इसके पश्चात् पल्लव और विष्णुकुंडिन ने राज्य किया। सातवीं सदी में चालुक्यों का प्रभुत्व यहाँ जम गया। सत्याश्रयी पुलिकेशी का नाम आज भी विख्यात है न? ये नरेश बड़े पराक्रमी व प्रतापी थे। इन्होंने अपने राज्य का खूब विस्तार किया। निरन्तर युद्ध चलते रहे। बाद में आये काकतीय वंश ने लगभग तीन सौ साल तक

राज्य किया। सातवाहनों के उपरान्त, सैकड़ों सालों के बाद, सारा आंध्र राज्य एक राजा के शासन में आया था। मैंने भी चैन की साँस ली।

आन्ध्र प्रदेश में मेरे बाएँ किनारे पर आदिलाबाद जिला है। इसे पार करने पर मैं मध्य प्रदेश और उड़ीसा की सीमा पर चलती हूँ। पूर्वी गोदावरी, काकिनाडा जिले भी मेरे बाएँ किनारे पर हैं। दाएँ किनारे पर निजामाबाद, करीम नगर, वरंगल, कम्मम, पश्चिमी गोदावरी जिले हैं। आदिलाबाद जिले में मुडुतोल, खानापुर, लाक्सिडिपेट, चिन्नूर तालूके मेरे तटीय प्रदेशों में हैं। चिरपुर तालूके में 'प्राणहिता' मुझसे संगमित होती है। खानापुर तालूके में 'गटम' नामक एक छोटी नदी मुझे अपना पानी देती है। निर्मल तालूके से 'सिद्धा' दौड़ी आती है। इस जिले की दक्षिण सीमा के रूप में मैं और उत्तरी सीमा के रूप में 'वेनगंगा' बहती है। मेरी धारा के एक ओर आदिलाबाद है, तो दूसरे पर निजामाबाद है। मेरी धारा इन दोनों जिलों को विभाजित करती है।

पुराना इन्दूर ही आज का निजामाबाद अलाउद्दीन खिलजी के आक्रमण के बाद पानिनी सुल्तान, फिर कुतुबशाह, मुगल अन्त में निजाम के शासन में यह रहा। निजामाबाद, कामारेडी, एल्लारेडी, बान्सफाडा, वोतन, आरमूर तालूके इसके अन्तर्गत हैं। प्रशासकीय सुविधा की दृष्टि से निजामाबाद जिले का निर्माण हुआ है। १९५६ तक यह निजाम की रियासत में था। प्रान्तों के पुनर्गठन के समय यह आन्ध्र प्रदेश में मिला लिया गया। मंजीरा के अलावा कण्डुकुरत्ती, मूलंग जैसे एक दो पहाड़ी नाले मुझे पानी देते हैं। निजाम सागर बाँध इस जिले का विशेष अंश है। मेरी सहायक नदी मंजीरा को रोककर यह विशाल बाँध तैयार किया गया है। तेलंगाना को इससे बड़ा लाभ है।

करीम नगर जिले में मेडपल्ली, जिकदयाल, सुलतानाबाद, मनतानी तालूके मेरे किनारे पर हैं। मेडपल्ली तालूके से होकर मैं बहती हूं। जगदयाल तालूके में 'वेद्ववाडु' से मेरा मिलन होता है। मेरे पश्चिमी किनारे पर धर्माप्पुर है। करीम नगर और आदिलाबाद की मेरी धारा प्राकृतिक सीमा बनी है। यहाँ का नृसिंहस्वामी मन्दिर अति प्राचीन है। एक जमाने में यह प्रदेश वरंगल राज्य के आधीन था। कई राजाओं के शासन के उपरान्त आखिर निजाम के आधीन में आ गया।

सुलतानाबाद तालूके में प्रवेश करते ही 'कप्परोपेड' आता है। मेरे तट पर कोटिलिंग क्षेत्र के कोटिलिंगेश्वर आलय है। इस करीम जिले में मैं लगभग १७६ मील बहती हूँ। इस जिले से मध्य प्रदेश के चान्द, बस्तर जिलों को मैं अलग करती हूँ। पश्चिम से पूरव की तरफ बहती 'मानेर' कारलकुण्डा में अत्तरमुखी हुए मन्दानी तालूके में मुझसे मिलती है।

मेरे दाएँ किनारे में रमणीय स्थल है 'मुर्रमुल'। यह तपोभूमि मानी जाती है। तपस्वी, मुनि व साधु लोग यहाँ पर रहा करते थे। इस स्थल पर मेरा जल अति पवित्र माना जाता है। पूरब व उत्तर की दिशा में बहती मैं इस गाँव को दोनों ओर से घेरती हुई उत्तर वाहिनी बनती हूँ। यहाँ पर पुष्कर का मेला धूम-धाम से मनाया जाता है। शिवरात्रि के दिन बड़ी भीड़ लग जाती है। उस दिन मेरी धारा में गोता लगाने को लोग उत्सुक रहते हैं। मेरे तट पर सघन वनस्थली है। तीनों जिलों का यहाँ पर मिलन होता है। मेरे तट पर स्थित कालेश्वर दक्षिण काशी मानी जाती है।

इसके बाद है वरंगल जिला। मुलुगु तालूके से होकर गंगावरम् गाँव के उत्तर में मैं आ जाती हूँ। फिर दक्षिणमुखी बने इस जिले की पूर्वी सीमा बने 'बूरकमबेड़ू' को पार करके 'कम्मम' जिले में आती हूं। मुलुगु तालूके में 'लखनावरम् नाला' आकर पानी देता है। 'बूरक-

मबेडु' तालूके में मेरे तट पर जो मन्दिर हैं उनकी गिनती नहीं। गंभीर खड़े मन्दिर, जगमगाते कलशों का दर्शन करती हुई मैं बहती हूं। इसी जिले में किन्नरसेनी नामक एक छोटी नदी मुझसे मिलती है। मेरे इस किनारे पर ब्रुरकमपाडू तालूका और उस पार भद्राचलम् तालूका है।

वरंगल जिला ऐतिहासिक दृष्टि से प्रसिद्ध है। मन्दिर, देवालय, झीलें आदि यहाँ बहुतायत में मिलेंगे। यात्रियों के लिए यह जगह मनोरंजक है। आजकल औद्योगिक प्रगति की दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण बना है। वरंगल जिला अपने अतीत की कीर्ति का अक्षुण्ण प्रतीक है। मुगल शासकों की पकड़ ढीली होने पर आन्ध्र प्रदेश में कितने ही छोटे-बड़े राज्यों ने सिर उठाया था। इनमें पूरबी, उत्तर-पूरबी किनारे के प्रादेशिक राज्य ही मुख्यत्व रखते थे। तेलंगाना राज्य के लिए 'वरंगल' राजधानी बनी थी। रानी रुद्रम्मा ने यहाँ शासन किया था। बड़ी प्रतिभाशील, विलक्षण नारी थी वह।

आज का सम्मम जिला पहले वरंगल का एक हिस्सा बना था। हाल में ही महाचलम्, नगू तालूके खम्मम जिले के साथ मिलाये गये हैं। इसके उत्तर में वरंगल, दक्षिण में कृष्णा, पूरब में मैं, पश्चिम में नरकोण्डा जिलों की सीमा है। जंगली प्रदेशों में 'गोया' जाति के पूर्वी लोग अधिक रहते हैं। खम्मम, मादिरा, एलान्दु, पलवनसा, भद्राचलम्, बूरकमपाडू आदि तालूके इसमें हैं। इस जिले में टीले और छोटी-मोटी पहाड़ियाँ और जंगली प्रदेश अधिक हैं। भद्राचलम् के बाद ही 'शबरी' मेरे बाएँ किनारे पर आ मिलती है। हमारा यह संगम बड़ा पुनीत व पवित्र माना जाता है।

ड्रम्मकूट से भद्राचलम् पन्द्रह मील है। राजमहेन्द्रपुरम् से १०० मील की दूरी पर है। भद्राचलम् के यात्री ज्यादातर कुम्बनेर (बूर-खम्बाडू तालूका) के दक्षिण किनारे से नावों पर भद्राचलम् जाया करते हैं। 'भद्राचलम् रोड' के नाम पर एक रेलवे स्टेशन है। यहाँ से

बूरखम्बाडू सबी मील पर है। मेरे तट पर स्थित भद्राचलम् में भगवान् राम का मन्दिर पावन-स्थल है। रामनवमी के अवसर पर श्रद्धालु भक्तों की भीड़ लग जाती है। पहले तो मुझे पार करके ही यहाँ आना पड़ता था। नावें, स्टीम बोट आदि चलते हैं। देश भर से यात्री यहाँ आते रहते हैं।

यहाँ पर मेरा पाट सँकरा है। टीलों, बड़ी-बड़ो चट्टानों और शिलाखंडों से होकर मुझे गुजरना पड़ता है। कहीं-कहीं मेरा पाट २०० सौ गज चौड़ा है। सर्पाकार घूमती-फिरती चलती हूँ। मगर यहाँ पर मेरी गहराई काफी अधिक है। इसलिए यहाँ पर जलयात्रा खतरे की है। नावें चट्टानों से टकराकर डूब जाएँगी। दुर्घटनाओं की कमी नहीं रहती, सैकड़ों लोग मेरी धारा में जल-समाधि ले चुके हैं। यहाँ पर मेरे तटवर्ती प्रदेशों में आदिवासी गोण्ड जाति वाले रहते हैं। यहाँ की पहाड़ी चोटियों पर भद्र ऋषि तपस्या करते थे। इसीलिए उन्ही के नाम पर इसे भद्राचलम् कहते हैं।

सीताराम स्वामी का मन्दिर एक ऊँचे टीले पर है। मन्दिर में पहुँचने के लिए सीधी खड़ी सीढ़ियों पर चढ़ना होता है। इस टीले के आसपास २४ देवालय हैं जो इस मन्दिर की शोभा बढ़ा देते हैं। मन्दिर का प्रधान द्वार मेरी तरफ खुलता है। कुल ५०० सीढ़ियाँ हैं। इस मन्दिर के निर्माण की कथा बड़ी रोचक है। सत्रहवीं शताब्दी में इस प्रदेश में 'दामल दामक्का' नामक एक महिला रहा करती थी। बड़ी गरीब, मगर सच्ची भक्तिन थी। उसे एक दिन सपने में मालूम हुआ कि इस टीले के ऊपर मिट्टी के गर्भ में रामचन्द्र जी की मूर्ति दबी पड़ी है। वह गरीबिन अकेले ही इस चोटी पर चढ़ आयी और उस स्थान का पता लगाया और मिट्टी खोदकर मूर्ति को बाहर निकाला! उस बेचारी के पास मन्दिर-निर्माण के लिए धन-सम्पत्ति कहाँ? उसने ईंट व कच्ची मिट्टी से एक छोटा-सा मन्दिर खड़ा किया और उसमें अपने आराध्य देव श्री रामचन्द्र जी की मूर्ति को प्रतिष्ठित

किया। इसी मन्दिर को बाद में गोपन्ना नामक रामदास ने इसका पुनर्निर्माण किया। जहाँ तक दृष्टि पड़े, प्रकृति हरी चादर ओढे बड़ी रम्य दीखेगी। सुषमापूर्ण इस वनस्थली में गुजरते वक्त आपको जरा भी थकावट नहीं लगेगी। शीतल बयार आपके माथे पर उभरते श्रम-कणों को पोंछ देगी। वर्ण-वर्ण के फूलों का सुवास आपको मस्त कर देगा।

राम, सीता व लक्ष्मण ने अपने वनवास का थोड़ा समय यहाँ भी बिताया था! आज भी इनके नाम पर कई एक स्थानों को आप यहाँ पा सकते हैं। गोपन्ना यहाँ का तहसीलदार था और बड़ा रामभक्त भी था। जीर्ण अवस्था में पड़े इस आलय को देखते ही उसके नव-निर्माण करने की इच्छा उसे हो गयी। बस, आगा-पीछा कुछ न सोचा, निर्माण शुरू कर दिया। अपने तहसील के मालगुजारी का जो रुपया पड़ा था उसे पूरा-पूरा इसमें लगा दिया।

गोलकुण्डा का सुल्तान तानीशा बड़ा ही उदार व गुणी था। फिर भी उसकी अनुमति के बिना गोपन्ना ने मालगुजारी के रुपये उड़ा दिये। यह जानकर उसकी क्रोधाग्नि भभक उठी। उसने धन के दुरुपयोग के अपराध पर गोपन्ना को गोलकुण्डा के किले में कैद कर दिया। रामभक्त गोपन्ना इस पर जरा भी न घबराया। राम पर उसकी भक्ति अटूट थी। बन्दीगृह में भी वह उन्ही के ध्यान में लीन रहता था। उन्ही का गुण गाता रहा। आज भी उसके भक्तिरस से पूर्ण गीतों को सुनने वाले झूम उठते हैं। रामदास गोपन्ना की वह भक्ति, उसकी श्रद्धाभक्ति, रसपूर्ण गीत, १२ साल बन्दीगृह में बिताये उसके जीवन को कोई भूल न पायेगा।

भक्तों पर सदय न होनेवाला कोई भगवान है? रामदास की भक्ति बेकार न हुई। उन्हें भगवान का दर्शन मिला। आश्चर्यजनक ढंग से मालगुजारी का पैसा चुका दिया गया कि सुलतान दंग रह गया। वह स्वयं बन्दीगृह में आया और रामदास को मुक्त कर दिया।

यही नहीं, महाचलम् मन्दिर के निर्माण के लिये दिल खोलकर धन दिया। मन्दिर के नाम पर बहुमूल्य धन-दौलत, गहने-आभूषण भी चढ़ा दिये। रामदास का शेष जीवन श्रीराम की सेवा में बीता। आज भी उन बातों की याद आते ही मैं पुलकित हो उठती हूँ।

गोलकुण्डा के राज्य के पतन के बाद यह मन्दिर मुगल शासन में आया, बाद में निजाम के राज्य के अन्तर्गत आ गया। फिर भी वार्षिक अनुदान व भेंट में कोई बाधा न पड़ी। मैसूर के महाराजा की तरफ से भी भेंटें मिलती हैं। इसके गहने अति पुरातन व बहूमूल्य हैं। इस प्राचीन मन्दिर का जीर्णोद्धार आंध्र प्रदेश के सरकार ने की है। बड़ी भव्यता से खड़े गोपुर का दर्शन करती हुई मैं बहती जाती हूँ। आजकल नावों के जरिये आने की जरूरत नहीं। सड़क के मार्ग से बसें, मोटर-गाड़ियाँ सीधे महाचलम् में आ जाती हैं।

महाचलम् से दक्षिण-पश्चिम की तरफ थोड़ी दूर पर गरम पानी का एक स्रोत है। चारों तरफ ठंडा शीतल पानी मिलेगा। लेकिन इस जगह पर जहाँ भी आप थोड़ी-सी मिट्टी निकालें– गरम पानी का स्रोत उफन कर आयेगा। इसको 'शेषावरम्' कहते हैं। महाचलम् तक पूरबमुखी फिर दक्षिणमुखी बनी मैं इस गरम पानी के स्रोतों के उपरान्त मुड़ जाती हूँ। अब तो उत्तर दिशा की ओर 'पापिकोण्डालू' तक प्रवाहित होती हूँ। इसके उपरान्त ही पूरब की तरफ घूमती हूँ। इस पुनीत तीर्थस्थली को मेरा प्रवाह तीनों ओर घेरता हुआ प्रदक्षिणा सा करता है। मेरे तटों पर और कितने ही मन्दिर और तीर्थ भरे पड़े हैं।

महाचलम् के बाद 'शबरी' किन्नावर के पास मुझसे आ मिलती है। महाचलम् तालूका मेरे बाएँ किनारे पर स्थित है। यह पूर्वी गोदावरी जिले के अन्तर्गत है। 'शबरी' को आलिंगन में लेकर मैं निश्चिन्त-सी होकर, प्रकृति के सौन्दर्य का आनन्द लूटती हुई आगे बढ़ती हूँ। जैसे मैंने पहले ही कहा था, यहाँ पर मेरा पाट काफी

विशाल हो जाता है। मैं अब अखण्ड गोदावरी हूँ। कहीं-कहीं मेरा पाट ढाई मील विस्तार का है। दूर क्षितिज पूर्वी घाट की श्रेणी मजबूत चहारदीवारी-सी कितनी सुन्दर दीखती है! लीजिये, मैं कितने निकट आ गई हूँ। मेरे दोनों बाजुओं में पूर्वी तथा पश्चिमी गोदावरी जिले हैं। पूर्वी घाट को काटती हुई मैं गहरी घाटी में बह निकलती हूँ। आगे-आगे तीखे-करारी ढाल हैं, खड़ी चट्टाने हैं, छोटे-मोटे झील हैं। मुझे अपनी पूरी शक्ति लगाकर बहना होता है। फिर मेरी गति का क्या पूछना! वर्षा के दिनों में कराल कालिका-सी विफरा जाती हूँ।

पूर्वी गोदावरी जिले में १२ तालूके हैं। रामचूडावरम्, राजमहेन्द्रपुरम्, कोत्तपेडा, रसूल तालूकों से मैं गुजरती हूँ। आंध्र प्रदेश में मैं ४५० मील बहती हूँ। मेरी कुल लम्बाई ९३७ मील है न? इस जिले का क्षेत्रफल १०८२१ वर्ग कि०मी० है। मेरे मुहाने पर होने से यह बड़ी उपजाऊ है। लेकिन इस जिले के उत्तरी हिस्से इसके विपरीत पहाड़ी प्रदेश हैं। जमीन पथरीला है और इधर-उधर भारी चट्टानें व टीले बिखरे पड़े हैं। जहाँ देखो लहराते खेत, हरे-भरे मैदान दीखते हैं। नारियल के बागान, बाग-बगीचे, ईख व गन्ने के खेत, धान के खेत अत्यन्त सुहावने हैं। तमाखू भी यहाँ खूब पैदा होती है।

इस जिले में ही सर आर्थर काटन का बनवाया 'धवलेश्वर बाँध' है। इस बाँध से अनेक नहरें निकाली गयी हैं। उनमें एक नहर मेरी एक शाखा को 'ज्ञानावरम्' में पार करके जाती है और सिंचन-कार्य में बड़ी मदद पहुँचाती है। धवलेश्वर बाँध से यह प्रदेश खूब फायदा उठाता है। 'कोणडिरु', 'पामुलरु', 'पोलावरमवारु' आदि नदियाँ इस जिले में मुझे पानी देती हैं। इस जिले में पूर्वी घाटी की श्रेणियाँ भी फैली पड़ी हैं। 'रसूल', 'अमलापुरम्', 'कोत्तपेडा' आदि डेल्टा तालूकों से होकर मेरी शाखाएँ प्रवाहित होती हैं। इस जिले में प्रवेश करने के पहले, मैं पूर्वीघाट की श्रेणियों को काटकर प्रवाहित होती

हूँ, ऐसा कहा था न ? उस गहरी घाटी को 'पापिकोण्डलु' कहते हैं। यहाँ पर मेरा दृश्य विमुग्धकारी है। इस गहरी घाटी के दोनों तरफ दीवारों-सी खड़ी पहाड़ी मालाएँ उत्तरी-पूरबी किनारे से शुरू होकर, इस जिले के उत्तरी सीमा की तरफ चलती हैं। अमित जलराशि, विद्युत शक्ति, अधिक उत्पादन की दृष्टि से यह जिला सारे आन्ध्र प्रदेश में सर्वोत्कृष्ट है। आजकल उद्योग-धंधों और कुटीर-उद्योगों का विकास भी खूब हो रहा है।

बाँस, शीशम और सागौन के वनों का कोई अभाव नहीं। पहाड़ भी नंगे व वीरान नजर न आयेंगे। वे भी वनों से आच्छादित हैं कि प्रकृति रूपसी लगती है। प्रकृति के वरदान के रूप में मिले इन अमूल्य भेंटों को बड़े गर्व से धारण करती हुई मैं इस भयंकर ढलान में उछल-कूद मचाती मैदान की ओर उत्साह के साथ आती हूँ। ग्रीष्म के ताप में, बसन्त की मादकता में तथा हेमन्त की मधुरिमा में इस गहरी गहन घाटी में मेरा सौंदर्य देखते बनता है। दूर-दूर से पर्यटक व प्रकृति प्रेमी यह मनोमुग्धकारिणी शोभा देखने आते हैं तो मैं मन्द-मन्द लहरें उठाती, उमग-उमगकर उनका स्वागत करती हूँ।

मेरे दोनों तरफ ऊँची खड़ी चट्टानें हैं। हाँ, भयानक रमणीयता है मुझमें। ढलान पर मेरे प्रवाह का सख्त उतार है। कई नुकीली चोटियाँ हैं। इन पहाड़ी दीवारों के मध्य में मेरा प्रवाह तेजी से लहराता हुआ निकलता है। अरुणोदय की सुनहली किरणें जब मुझे धीरे-धीरे आलिंगन में भरने लगती हैं उस हल्की गरमाहट में कितना अलौकिक सुख है ? मैं आत्म विस्मृत-सी हो जाती हूँ। मेरी नस-नस में एक अभूतपूर्व, अनाभूत सुख का संचार होने लगता है कि मैं मदमस्त होकर चट्टानों पर उमड़ती, हुलस नृत्य करती, बल खाती लहराती आती हूँ।

मेरा तटीय प्रदेश रेतीला नहीं है, बिल्कुल ऊबड़-खाबड़ व कंकरीला है। पहाड़ी माला के उस पथरीली उपत्यका से लिपटती

हुई तेजी से सरक आती हूं। उन मोटे कठोर हाथों में मेरा दम घुट जाता है। अपने को उस कठोरालिंगन पाश से छुड़ाती हुई दौड़ लगाती हूं। यहाँ पर मेरी धारा में स्टीम बोट चलते हैं। अचानक मेरे दोनों तरफ के पहाड़ हट जाते हैं कि मेरा घाट खुल जाता है। इसलिए कई छोटी-मोटी झीलें, टापू और ढेऊ निकल आते हैं। यहाँ पर लोगों की बस्तियाँ अधिक नहीं, इधर-उधर आदिवासियों के बसेरे मिलेंगे।

मेरे दूसरे तट पर 'पश्चिमी गोदावरी' जिला है। मैं इनकी पूर्वी सीमा बनी हूं। ३०१५ वर्ग मील विस्तार के इस जिले में आठ तालूके हैं। पोलावरम्, कोऊर, तणुक्कु, नरसापुर तालूकों से गुजरती हुई अन्त में समुद्र से मिलती हूं। दामिलेरु, एर्रकालवा, बीनेरु, कोवडा कालवा, जालेरु, गुण्डेरु आदि छोटी नदियाँ इस जिले में मुझे अपना पानी देती हैं। 'पोलावरम्' टीलों और भारी चट्टानों से घिरा हुआ है। इस तालूके को रेल का रास्ता नहीं है। सबसे पहले मैं पोलावरम् तालूके में ही प्रवेश करती हूं। यहाँ पर मेरे दाएँ किनारे पर श्रीराम का मन्दिर है। तट भर कई देवालय, धर्मशालाएँ, मठ-मठालय भरे पड़े हैं। रामगिरि, लक्ष्मणपुरम्, गन्धमादनम्, पम्पा-तीर्थ, लक्ष्मणगिरि, नन्दी ग्राम—ऐसे कितने पावन स्थलों का नाम कह सकते हैं ··· कोई गिनती नहीं।

'पोलावरम्' से दो मील की दूरी पर 'पट्टीसम्' नामक पुण्य स्थल है। यह अति प्राचीन शैव व वैष्णव पुण्य क्षेत्र है। पादि टीले के सामने की तरफ देवमण्ड पर्वत नामक टीले पर बसे इस पुण्य धाम की भव्यता वर्णनातीत है। 'वीरभद्र स्वामी', 'भवनारायण स्वामी' आलय मुख्य हैं। पंच महाशैव क्षेत्रों में यह एक है न? काशी, केदार-नाथ, श्रीशैलम्, काकहस्ती, पट्टीसम् ··· ये अति पावन पंचमहाशैव क्षेत्र माने जाते हैं। इनमें तीन अर्थात् श्रीशैलम्, कालहस्ती व पट्टीसम्, आन्ध्र प्रदेश में है। यह कितने गौरव की बात है?

मेरी धारा के बीचोबीच 'महानन्दी' विराजमान है। महाशिवरात्रि के दिन यहाँ भक्तों की अपार भीड़ लग जाती है। खामोशी में डूबा हुआ यह सारा प्रदेश कोलाहलमय बन जाता है।

बहुत पहले मैं सप्त धाराओं में बँटकर समुद्र देव के चरणों में जा मिलती थी। कश्यपा या तुलाभागा, अत्रि, गौतमी, भारद्वाजा, वसिष्ठा, विश्वामित्रा, जमदग्नि ऐसे सप्त ऋषियों का नाम धारण करती मेरी शाखाएँ सागर में संघमित होती थीं। यात्री लोग 'सप्त-सागर यात्रा' करते हुए इन सातों धाराओं में गोता लगाया करते थे। लेकिन आज ! आप 'विश्वामित्र' और 'जगदग्नि' को देख न पाएँगे। फिर पहले वे जहाँ सागर में मिला करती थीं उन स्थलों पर यात्री उनका नाम लेकर स्नान करते हैं।

पोलावरम् के उपरान्त मैं दो शाखाओं में बँट जाती हूँ। उन्हें 'गौतमी गोदावरी', 'वसिष्ठ गोदावरी' कहते हैं। कई धाराओं में बँट जाने से इस डेल्टा प्रदेश में कई एक सुन्दर छोटे-छोटे ढेऊ व टापू उभर आये हैं जो बड़े आकर्षक हैं। यहाँ पर जलमार्ग प्रधान है। नावों, बोटों आदि की अटूट शृङ्खला बनी रहेंगी। इस प्रदेश को पूर्व में 'सप्तगोदावरी प्रदेश' कहा करते हैं। १९२५ में ही इन जिलों का निर्माण हुआ। पुराना कृष्णा जिले से एजेन्सी तालूका 'पोलावरम्' १९४२ में ही पूर्वी गोदावरी जिले से पश्चिमी गोदावरी को दिया गया। पोलावरम् तालूका पूर्वी घाट की श्रेणियों से बिखरी पड़ी 'राबी कोण्डा' टीलों से बना है। इसके 'पोडकोण्डा चोटी' की ऊँचाई ४,४७६ फुट है। यहाँ पर पहाड़ी जाति वाले ही अधिक मात्रा में रहते हैं। मेरी धारा के बीचोबीच उभरे हुए टापुओं को 'लंका' कहा करते हैं। बहाकर लाई गई मिट्टी से बने ये टापू बड़े उपजाऊ हैं। पोलावरम्, तनुक्कु, कोऊर, नरसापुर आदि उर्वरा होने से समृद्धि के भण्डार हैं।

समुद्र में मिलने के ४० मील पहले विजेश्वर में 'गौतमी' और 'वसिष्ठा' मुझसे अलग हो जाती हैं न ? इनमें 'गौतमी' इस जिले की

दक्षिणी सीमा बनी, पूर्वी गोदावरी जिले से इसे विभाजित करती है। अखण्ड गोदावरी रूप में जब मैं थी, विजेश्वर में धवलेश्वर के ठीक सामने मेरे दाएँ किनारे पर जो बाँध बना है वह आर्थर काटन की अद्भुत क्षमता व प्रतिभा का परिचायक है। मेरी नहरें नरसापुर, बीमावरम्, तनुक्कु, एल्लूरु, ताडेपेल्लीकूडम्, कोऊर आदि का सिंचन करती हैं।

'कोऊर' गोपाद क्षेत्र है न? यह तो पश्चिमवाहिनी बनी 'गौतमी' के दाएँ किनारे पर है। यह नावों की घाट है। डोंगी, नाव, स्टीम बोट यहाँ आते हैं। धवलेश्वर के बाद 'वसिष्ठा' अलग होती है। यहाँ पर राजमहेन्द्रपुरम् और भद्राचलम् को स्टीम बोटें चलती हैं। इस जलमार्ग द्वारा तटीय व्यापार भी होता है। रेलमार्ग या बसें न होने से तटीय ग्रामों, बस्तियों व टापुओं की तथा कोत्तपेडा आदि तालुकाओं की नावों द्वारा ही यात्रा करनी है। दो-एक स्नानघाट भी हैं। मेरी धारा के इस पार कोऊर क्षेत्र है, तो उस पार राजमहेन्द्रपुरम् है।

तनुक्कु, नरसापुर तालूके वसिष्ठ गोदावरी के तट पर हैं। यहाँ से ६ मील पर यह समुद्र में जा मिलती है। यहाँ मदनगोपाल स्वामी का मन्दिर है। एक जमाने में यह नगरी प्रसिद्ध समुद्रतटीय शहर थी। कंपनी के राज्यकाल में यहाँ के बन्दरगाह पर जहाज लंगर डालते थे। कपड़ों का आयात बड़ी मात्रा में होता था। जहाजों की मरम्मत यहाँ की गयी। लेकिन एकाएक ज्वार-भाटे से यह सुन्दर नगरी बह गई। जब कभी समुद्र देव तैश में आ जाते ··· यहाँ हाहाकार मच जाता था। क्या करना ? मुहाने पर के हर नगरी का भाग्य ही कुछ ऐसा है न ? १८३९ में एक भयंकर तूफान व बवंडर आया था। उसके बाद इसका महत्व घट गया। आजकल इसकी कोई पूछ नहीं। आदिकेशव स्वामी, कपिलमल्लेश्वर स्वामी, राजगोपाल स्वामी, कनकदुर्गा आदि मन्दिर अपनी प्राचीन गरिमा के साक्षी बने आज भी भक्तों को अपनी ओर खींच रहे हैं। हाँ, एक जमाने में डच, फ्रान्सीसी और कंपनी की बस्तियाँ यहाँ थीं।

कोत्तुप्पेहै आदि तालूका जैसे गौतमी और वसिष्ठा के बीच में है; वैसे ही रसूल तालूका के एक तरफ वसिष्ठा और दूसरी तरफ उसकी शाखा 'वैंतन्या' घेरती चलती हैं। यहाँ भी कई पुण्य-क्षेत्र व तीर्थ-स्थल हैं। ज्ञानवरम्, मानेपल्ली, मुममुडीवरम्, गरुड़ावरम् ऐसे कितने ही पुण्यधाम यहाँ पर मेरी शाखाओं के तटों पर तथा सागर-संगमस्थलों पर अपनी कीर्ति पताका फहरा रहे हैं। सप्तसागर यात्रा करनेवाले यहाँ आने से नहीं चूकते।

वसिष्ठ गोदावरी जहाँ पर सागर से मिलती है वहाँ 'अन्तर वेदी' है। रसूल से यह पन्द्रह मील पर है। सप्तसागर यात्रा में इसका मुख्यत्व है। इसे 'दक्षिणी काशी' कहते हैं। इसका धार्मिक महत्व ही नहीं, वाणिज्य की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण बन्दरगाह था। कंपनी के माल यहाँ पर उतरते थे। मेरी शाखा वसिष्ठा के सागर-संगम स्थल पर एक छोटी-सी बस्ती है। यहाँ पर लक्ष्मीनारायण का आलय है। नव नरसिंह क्षेत्रों में यह भी एक है।

इन दोनों गोदावरी जिलों में जल-मार्ग ही प्रधान हैं। नहर और नाले दूर-दूर तक चलते हैं। आजकल मेरी शाखाओं के मुहाने मिट्टी के पट जाने से बेकार हो गये हैं। पण्डामूर लंका, इंज्जारम्, माड-पोलम्, पालगोल आजकल अपना मुख्यत्व खो चुके हैं। भद्राचलम् तालूके के बाद अखण्ड गोदावरी बनी मैं रामचूडावरम्, राजमहेंद्र-पुरम् से होकर बहती हूँ। धवलेश्वरम् के बाद मुझसे गौतमी अलग होती है न ? वह तो रामचन्द्रापुरम्, काकिनाडा तालूके से होकर समुद्र में गिरती है। मिलन के इस स्थान को 'गोदावरी पाईन्ट' कहते हैं।

राजमहेन्द्रपुरम् मेरे तट पर स्थित महानगर है। बड़ा ही सुन्दर नगर है। यहाँ पर मेरे ऊपर एक बड़ा लम्बा पुल है। इस नगर की प्राकृतिक बनावट अनोखी है। चारों तरफ से छोटी पहाड़ियाँ इस शहर को घेरे हैं। बस्तियाँ टीलों और छोटी पहाड़ियों पर बसी हैं।

ऊँचे किनारों व कगारों पर मकान, इमारतें और शानदार बँगले खड़े हैं। यह कोटिलिंग क्षेत्र माना जाता है और यहीं पर मेरी अखण्ड धारा शाखाओं में बँटती है। यहाँ पर मैं दोनों किनारों को छूती हुई बहती हूँ। सारा दृश्य बड़ा प्यारा लगेगा। मेरा अखण्ड प्रवाह, असम तटवर्ती प्रदेश, दोनों तरफ पहाड़ियाँ मीलों तक फैली पड़ी हैं। हाँ ··· एक प्रकार का विराट सौंदर्य है यहाँ।

ग्रीष्म ऋतु में मेरा प्रवाह थोड़ा-सा सूखने लगता है, तो मेरी निचली सतह पर असंख्य लिंग मूर्तियों को देख पायेंगे। यहाँ पर कई घाट हैं। कोटिलिंग घाट, पुष्पगिरि, श्रद्धानन्दा घाट आदि मुख्य हैं। जगह-जगह पर पक्की सीढ़ियाँ, स्नानघाट बड़े सुविधाजनक हैं। दीपालंकार के समय सारा वातावरण सचमुच बड़ा हृदयग्राही लगता है। भक्त लोग हल्दी, कुंकुम, अदिना, नारियल, केले का फल, पैसे इत्यादि को एक कपड़े में बाँधकर मेरी धारा पर भक्तिभाव से चढ़ाते हैं। जैसे पहले ही कहा था, इस पार राजमहेन्द्रपुरम् है, तो उस पार कोऊर है।

मेरे तटीय प्रदेश को मन्दिर मान लें तो यह नगरी गर्भ गृह है। छोटे-छोटे टीलों से बनी जो श्रेणियाँ इस नगरी को घेरे रहती हैं, इनमें खेदगिरि, शेषगिरि, पुष्पगिरि, पद्मगिरि, रामगिरि, आनन्दगिरि, धवलगिरि आदि उल्लेखनीय हैं। वैसे ही कोटिलिंग तीर्थ, शेष तीर्थ, पुष्पतीर्थ, पद्मतीर्थ, रामतीर्थ, आनन्दतीर्थ, मणिकर्णिका घाट आदि स्थलों पर लोग गोता लगाते रहते हैं। धवलेश्वरम् में ज्ञानपाद घाट है। कमलाचला, पुष्पगिरि, वेदगिरि आदि टीलों पर नई वस्तियाँ बसाई जा रही हैं। यहाँ पर मेरी धारा प्रधान जलमार्ग है। नावें, बोटें, स्टीम लांच निरन्तर मेरी धारा को चीरती हुई आती-जाती रहेंगी। यात्रियों की भीड़ की कोई कमी नहीं। जो अपने सन्तान खो चुके, जिन्हें सन्तान-भाग्य नहीं रहा, वे मेरी शीतल धारा में स्नान करके अपना मानसिक ताप खोने के लिए वड़ी उत्सुकता से

आते हैं। हर शुक्रवार को मेरी धारा में डुबकी लगाने से दुखमोचन मिलेगा ··· यही उनका विश्वास है।

बारह साल में एक वार जब सिंह राशि में गुरु आता है, यहाँ पर 'पुष्कर उत्सव' चलता है। यह वड़ा विशेष पर्व माना जाता है। दूर-दूर से लोग इसमें भाग लेने आते हैं। पुष्कर के दिन कोटिलिंग घाट पर गोता लगाना पुण्य माना जाता है। पहले यहाँ स्नान करके कोटि-लिंगेश्वर का दर्शन करेंगे फिर गौतमी घाट पर डुबकी लगायेंगे। यहाँ पर के आलयों की गिनती ही क्या? मार्कण्डेय स्वामी आलय, मदन-गोपाल स्वामी आलय, जनार्दन आलय, अगस्त्य मन्दिर, वीरभद्र स्वामी मन्दिर ·· आदि उन्नत कलश धारण किये वड़ी गम्भीरता से खड़े लोगों के मन को अपनी ओर आकर्षित करते रहते हैं। इनमें कई आलय व मन्दिर मुसलमानों के आक्रमण के समय नष्ट-भ्रष्ट कर दिये गये। कई तो मस्जिद के रूप में बदल दिये गये हैं।

आजकल स्टेशन के पास जो मस्जिद है वह पहले शिवालय था। नगर के वीचोवीच मार्कण्डेय का मन्दिर है। कुछ लोगों का विश्वास है कि यह राजेन्द्र चोलन का बनवाया है। नहीं, वह आलय कब का मिटा दिया गया था। उस मन्दिर को तोड़कर लिंग को मेरी धारा में फेंक दिया था। सालों बाद एक भक्त ने मेरी धारा में से उसे उठाकर प्रतिष्ठित किया था। ओह! मैं जितना भी इस नगर की कथा सुनाऊँ वह थोड़ी है। इस नगरी ने भी काशी के जैसे महान् परिवर्तनों और हेराफेरों को देखा है। सर्वनाश के तूफान और भयंकर बरबादियों का सामना किया है।

हजारों साल पहले की वात है—यह नगरी महोन्नत दशा में थी। कई नरेशों ने इसे अपनी राजधानी मान ली थी। हाँ ···· कई नरेशों के लिए यह युद्ध का मैदान भी बना था। देवालयों की घंटियों की मधुर-मधुर निनाद, तन-मन को दैवी भावना से स्फुरित करने वाली मधुर गुंजन तथा लपलपाती तलवारों की टकराहट, तन-मन को कँपा

देने वाली तोप-बन्दूकों की आवाजें मैंने सुनी है। न जाने कितने लोगों का खून लाल धारा बना मेरे प्रवाह में मिला है।

पूर्वी चालुक्यों के शासनकाल को एक तरह से मैं शान्ति का काल मानती हूं। लगभग ४५० वर्ष इन्होंने आन्ध्र देश पर शासन किया था। प्रजा निर्भय व निश्चिन्त थी। उद्योग-व्यवसायों में ही नहीं सांस्कृतिक क्षेत्र में भी खूब उन्नति हुई। उन दिनों भी देशी भाषा तेलगू को प्रोत्साहन मिला था। चालुक्यों के पतन के उपरान्त दशा बदल गयी थी मगर महाराज नरेन्द्र को मैं भूल न पायी। इन्होंने तेलगू साहित्य की बड़ी उन्नति की। दक्षिण के चोलों के साथ इनका विवाह-सम्बन्ध हुआ। चोल राजकुमारी कुन्दवी के पुत्र को मेरे तट पर राजधानी का निर्माण करने की बड़ी इच्छा थी। इसके फल-स्वरूप ही यह राजमहेन्द्रपुरम् का निर्माण हुआ है। महाराज नरेन्द्र ने अपने कुलगुरु नन्तय भट्ट को महाभारत लिखने की प्रेरणा दी। नन्तय को 'तेलगू का वाल्मीकि' कह सकते हैं। मेरी धारा में स्नान करके उस तपस्वी ने कितने ही व्रतों का पालन किया था। वे बड़े विद्वान् थे। बोलचाल की तेलगू को साहित्यिक रूप दिया ··· वह भी साधारण जनता को समझने लायक भाषा में महाभारत की रचना की थी। नरेन्द्र के शासनकाल में तमिष लोग भी यहाँ आ बसे थे। आज भी उनके नाम पर एक गली का नाम 'अरवु वीथि' है (अरवु माने तमिषर)।

चौड़ी विशाल सड़कें, मजबूत किले, उन्नत चहारदीवारियाँ। हर चहारदीवारी के अन्दर आलीशान भवन, राजमहल, बस्तियाँ, बाजार, सैनिकों के अड्डे ··· ऐसे सुन्दर ढंग से, व्यवस्थित रूप से नगर का निर्माण हुआ था। लेकिन आज इस ऐतिहासिक नगरी की पूरी शोभा को आप देख न पाएँगे। काल के क्रूर थपेड़ों में वह मग्न हो गया है। यहाँ पर मुझसे 'तुल्य भागा' के नाम पर एक शाखा निकाली गयी थी जो सारे नगर में घूमती-फिरती आखिर मुझमें आ

मिलती थी। मगर अब तो 'कोरिंगा' के नाम पर एक छोटी नदी बनी 'काकिनाडा' के निकट समुद्र में मिलती है। इसका मुहाना मिट्टी से पट गया है।

इस प्राचीन नगरी की नींव पर आधुनिक नगरी शान से खड़ी है। पुरातन का मिटना, नवनिर्माण होते रहना, यही प्रकृति का नियम है न ? लेकिन हम नदियाँ निरन्तर बहती रहती हैं, हममें उतना भारी परिवर्तन नहीं हो पाता। हम अपना कर्म करती रहती हैं, फल की उतनी चिन्ता नहीं करतीं फिर भी हमारी इस लंबी यात्रा में जितने अनुभव हमें मिले उन्हें भूल नहीं पातीं। हम तटों पर काल की गति के अनुसार बदलती सभ्यता व संस्कृति को, कभी पतन की पराकाष्ठा को, कभी उत्थान को, ढहते हुए साम्राज्यों को, बनती जनसत्ता को देखती रहती हैं। वर्तमान की हेराफेरी का अवलोकन करते समय सारा अतीत आँखों के समक्ष घूम जाता है। हमारी तटीय सभ्यता कभी हमें विस्मय विमुग्ध करा देती, तो कभी अथाह शोक में डाल देती हैं।

काकतीय के पतन के उपरान्त तीन राज्य स्थापित हुए थे। रायकोण्डा के वेलम राज्य, अहंकि और कोंडवीडु में रेड्डी राज्य और विजय नगर संगम वंशों ने बारी-बारी से राज्य किया था। वरंगल, गणपति, ओडिसा के गजपति नरेश रेड्डी वंशों ने इस नगरी पर कब्जा किया था। उत्तर व दक्षिण दोनों दिशाओं से इस नगरी पर आक्रमण होते रहे। १५४३ के बाद यहाँ पर हिन्दुओं का राज्य न हुआ। १७५८ में अंग्रेजों के हमले तक यह नगर निरन्तर युद्ध-क्षेत्र बना रहा। शान्ति का नाम कहीं न रहा। फ्रान्सीसी और कंपनी के आपसी युद्ध और मुठभेड़ों का यह केन्द्र बन गया। क्या कहूँ ? इन युद्धों से मैं तंग आ गई थी। इन दोनों विदेशियों ने यहाँ के सामन्तों व छोटे-मोटे नरेशों में फूट का बीज बोने से बाज न आये। आये दिन कलह, संघर्ष व युद्ध चलते थे। जनता बेचारी आतंकित थी।

नवाब लोग फ्रान्सीसी सेनापति बुस्सी के राजनैतिक दाँव-पेचों के शिकार हो गये। १७५३ में सलावत जंग ने क्या किया, जानते हैं आप ? सिक्काकोल, राजमहेन्द्रपुरम्, एल्लूरु, गोण्डपल्ली—इन चारों जिलों को फ्रान्सीसियों की सामरिक सहायता के बदले में उन्हीं को दे दिया। उसके पास यहाँ पर बुस्सी की स्वेच्छाचारिता का नग्न ताण्डव हुआ। तेलंगाना और रायलसीमा निजाम के अधीन था। ज्यादातर समुद्रतटीय प्रदेश फ्रान्सीसियों के कब्जे में थे। कंपनी की व्यापारिक उन्नति के लिए यही सबसे बड़ी बाधा थी। दोनों में भयंकर होड़ लगी थी। कंपनी के सेनापति कर्नल पोर्ट ने बुस्सी को हरा दिया। मछलीपट्टनम् जैसे बन्दरगाहों को कब्जे में ले लेने पर कंपनी का हाथ मजबूत हो गया। निजाम बादशाह को तेलंगाना से तृप्त होना पड़ा और चारा ही क्या था ?

कंपनी सरकार ने आन्ध्र प्रदेश के इस हिस्से को कन्याकुमारी तक फैले हुए मद्रास प्रान्त के साथ मिला दिया। इस तरह आन्ध्र प्रदेश का एक हिस्सा निजाम के शासन में और दूसरा हिस्सा मद्रास प्रान्त में बँटवाया। आन्ध्र राज्य, जो इस तरह टुकड़ों में बँटकर अपना सारा महत्व खो चुका था, आजादी के बाद भाषावार प्रान्तों के पुनर्गठन पर अनुप्राणित हो उठा। आज तो इस प्रदेश की सभ्यता, संस्कृति, भाषा, कला, साहित्य सबकी उन्नति दिनोंदिन होती रहती है।

वर्षाकाल में मुझमें अपार पानी आ जाता है। इस समय गंगा से ज्यादा बाढ़ का पानी आ जाता है मुझमें। पहले मेरा ज्यादातर पानी बेकार निकल जाया करता था। नहर, नाले व सिंचन की सुविधाएँ न होने से मेरे तटवर्ती राज्यों में अक्सर अकाल पड़ जाता था। धवलेश्वरम् बाँध के द्वारा एक हद तक यह कमी दूर हुई। मेरे डेल्टा प्रदेश के बाँधों के चारों हिस्से लगभग दो मील लंबे हैं। पिच्ची लंका, पोपर लंका, मधुर लंका जैसे टापुओं को ये मिलाते हैं। समय-समय

पर इनमें परिवर्तन होते रहते हैं। मेरी नहरें लगभग ८२,००,००० एकड़ जमीन का सिंचन करती हैं। मेरे नहरों पर बढ़िया जलमार्ग भी हैं। राजमहेन्द्रपुरम् से साढ़े चार मील दक्षिण पर मेरा पाट लगभग चार मील है। यहाँ तक मैं अखण्ड रूप से एक ही धारा बनी बहती आयी हूँ। यहीं पर तीन शाखाओं में बँटती हूँ। पहले दो हैं 'गौतमी तथा 'वसिष्ठा'। वसिष्ठा से 'वैनदेय' विभाजित होती है। यहाँ पर मेरी धारा को रोककर जो बाँध बनाया गया है वह मानव की अद्भुत कार्य-कुशलता का द्योतक है।

'गौतमी' के किनारे पर ही रामचन्द्रापुरम् है। यहाँ भी तट पर कई मन्दिर हैं। गौतमी जहाँ सागर में संगम करती है वहाँ से १० मील पर 'यानाम्' है। एक जमाने में फ्रान्सीसी, अंग्रेज और डच यहाँ आबाद थे। उनके कारखाने और गोदाम यहीं थे। आज अतीत के स्मृति चिह्न के रूप में खण्डहर हैं ·· 'यानाम्' है।

संगम के स्थल पर आप मुझे गोदावरी के रूप में कहाँ पाते ? एक होकर भी अनेकों में व्याप्त होकर, कितने ही नदियों को, सर-सरिताओं को अपने में समेटकर, विभिन्न नाम धारण करके, कई धाराओं में बँटकर बंगाल की खाड़ी में समुद्र देव के गाढालिंगन में लीन हो जाती हूँ।

अध्याय : ५

आंध्र प्रदेश में मेरे साथ बहने वाली अजस्र नदियों में 'कृष्णा' भी एक है। यह भी मेरे जैसे ही महाराष्ट्र में उत्पन्न होकर, आन्ध्र प्रदेश में प्रवाहित होती हुई बंग सागर में मिलती है। इसकी कुल लम्बाई १,४०० कि०मी० (७७५ मील) है। इसका जल-प्रवाह क्षेत्र २,५९,००० वर्ग कि०मी० विस्तार का है। इसका 'कृष्णपेण्या', 'कृष्णवेणा' आदि नाम हैं। सह्याद्री श्रेणी से उत्पन्न सभी नदियों को

'गंगा' कहा करते हैं न ? इसलिए इसको भी 'कृष्णा गंगा' कहते हैं। 'कृष्णा', 'वेणा', 'काकुमती', 'सावित्री', 'गायत्री' के नाम से पाँच नदियाँ इस श्रेणी से निकलती हैं। 'सावित्री' और 'गायत्री' एक होकर बेंगघाट के निकट अरब सागर में गिरती हैं। 'काकुमती' ही आज की 'कोयना' है। 'वेणा' को 'बेनगंगा' कहते हैं। यह 'वर्धा' से मिलती और वर्धा मुझसे मिल जाती है। अलावा इसके 'वेणा' (वेण्या) नामक एक नदी कृष्णा से मिलती है जिससे कृष्णा का 'कृष्णवेण्या' नाम पड़ा है। सतारा से ४ मील पर माहूली नामक स्थान पर 'वेण्या' कृष्णा से मिलती है।

परम पुनीता मेरो बहन के बारे में 'स्कन्द पुराण' क्या कहता है, सुनिए —

कलियुग के प्रारंभिक दिन थे। पाप और अत्याचार को बढ़ते देखकर साधु-तपस्वी उदास थे। उन्होंने अपना दुःख नारद जी से प्रकट किया। नारद सीधे ब्रह्मदेव के पास पहुँचे। ब्रह्मदेव तो सृष्टि-देवता हैं न ? उन्होंने इस धरती पर कई एक पुण्यतीर्थ की सृष्टि की फिर विष्णु भगवान् के पास जाकर तापतप्त भूलोक और मानवों को त्राण देने की प्रार्थना की। विष्णु भगवान् अपने शरीर से कृष्णा को प्रकट करने वाले हैं, यह जानते ही उसे धारण करने का भाग्य उसे मिल जाये, इस विचार से सह्यात्री तपस्यारत हो गया। हाँ, उसकी तपस्या सफल हुई। कृष्णा इस धरती को सुख प्रदान करने आयी। भगवान् विष्णु ने उसे मोक्षदायिनी बना दिया। 'मालप्रभा','घटप्रभा' से जहाँ यह मिलती है, वह पावन-पुण्य स्थल माना जाता है। पुराने जमाने में कूडल संगम क्षेत्र में, जहाँ पर यह 'मालाप्रभा' से मिलती है, जडवेद मुनि का आश्रम है।

कृष्णा की एक और रोचक कहानी है। ब्रह्मदेव ने एक बार सह्यात्री पर्वत पर एक यज्ञ किया। शुभ मुहूर्त आ गया मगर उनकी देवी सरस्वती का आगमन न हुआ। उस समय वहाँ पर शिवजी,

महाविष्णु और सहस्रकोटि देवता उपस्थित थे। उन्होंने ब्रह्माजी से कहा कि अब वे अपनी दूसरी पत्नी गायत्री के साथ यज्ञ आरंभ कर दें नहीं तो मुहूर्त टल जाएगा। ब्रह्माजी ने उनकी बात मान ली। सरस्वती देवी देर से आयीं और यज्ञ के आरंभ होते देखकर उनकी भृकुटियाँ चढ़ गयीं। फिर क्या? सरस्वती देवी का क्रोध कहीं व्यर्थ होगा? त्रिमूर्तियों को नदी बनने का शाप मिला। भगवान् विष्णु 'कृष्णा', ब्रह्माजी 'काकुमति' (कोयना) और शिवजी 'वेणया' (वेनगंगा) का रूप धारण करके धरती पर आये और सह्यपर्वत की प्रार्थना पर वहीं से उत्पन्न हुए।

प्रलय आया। उस महाप्रलय में सब कुछ डूब गया। सारी सृष्टि नष्ट हो गयी। भगवान विष्णु ने ब्रह्मदेव से प्रार्थना की कि वे फिर से सृजन कार्य प्रारंभ कर दें। बिना जल के जीवन है क्या? भगवान् विष्णु ने अपने शरीर की एक अंशरूपिणी 'कृष्णा' को नदी के रूप में बहने दिया। श्वेत अश्वत् वृक्ष के रूप में खड़े भगवान् के चरण-कमलों से कृष्णा इस भूखण्ड को अनुप्राणित करने बह निकली। आमलक वृक्ष के रूप में खड़े शिवजी के चरण-कमल से 'वेणया' बह निकली। इन दोनों की सम्मिलित धारा है, 'कृष्ण वेणया।' यही धारा अब कृष्णा नदी के रूप में महाराष्ट्र और आन्ध्र प्रदेश में लहरा रही है।

कृष्णा के उद्‌गम स्थान को 'पंचगंगा क्षेत्र' कहते हैं। पंचगंगा आलय के पीछे ··· चट्टानों पर रिसती हुई पतली धारा के रूप में ही आप उसका दर्शन कर सकते हैं, मगर उसकी मूलधारा व उद्‌गम को देख न पायेंगे। कृष्णा का यह देवालय अति प्राचीन व पुनीत है। लगभग ६०,००० वर्ग फुट के विस्तार पर यह बना है। आलय में प्रवेश करते ही तीनों तरफ लंबे बरामदे हैं। सामने विशाल प्रांगण है। उस प्रांगण में जल से भरे दो कुंड हैं। देवालय की चहारदीवारी के साथ-साथ एक ओर दीवार का घेरा है। इन दोनों दीवारों के

बीच का जो अन्तराल है उसी में कृष्णा का मूल स्रोत है। आगे की इस दीवार पर पाँच छेदों से पानी निचुड़ता है। झरती हुई इस पंच-धारा को पंचगंगा स्रोत कहते हैं। कृष्णा, वेणया, काकुमती, सावित्री, गायत्री के नाम पर इनको पुकारते हैं। इन पाँचों स्रोतों से अविरल सलिल धारा बहती रहती है। थोड़ी दूर पर ये पाँचों धाराएँ एक होकर एक गोमुखी आकार के बिल द्वारा नीचे के कुंड में पहुँचती हैं। यहाँ इन पाँच छेदों के अलावा दो और छेद हैं। इनमें एक छेद से बारह साल में एक बार पानी निकलता है। दूसरे में तो साठ साल में एक बार जल निचुड़ता है। भक्त लोग इनका दर्शन करने आते हैं।

गोमुखी से कृष्णा का प्रवाह निरन्तर बना रहता है। वृहस्पति जब कन्या राशि में आता है तब यहाँ कुम्भ-मेला का पर्व लगता है। मेला के समय भारी भीड़ लगती है। ग्रीष्म के घोर धूप में भी अविरल बहती इस धारा के समक्ष एक और कुंड है और इसके बाद एक और कुंड है। इन तीनों कुंडों से बहती हुई कृष्णा आगे बढ़ती है। इस कुंड को 'ब्रह्मकुंड' कहते हैं। यहाँ पर कृष्णा का दर्शन करने वाले आश्चर्य करेंगे कि क्या इस छोटी-सी गोमुखी से निकलती धारा महाराष्ट्र और आन्ध्रप्रदेश में शोर मचाती, प्रचण्ड धारा बनती है।

भगवान् विष्णु का एक अंश है न यह! इसलिए इसका रंग नीला होता है। काली रंग की रेतीली भूमि, पथरीले मैदान तथा पहाड़ों में यह कैसी इठलाती, मोहिनी-सी मादक जाल बिखेरती, निरीह भाव से चट्टानों पर चढ़ती-उतरती जाती है। दुर्गम स्थानों पर इसका सौंदर्य भयानक हो उठता है। महाबलेश्वर पहाड़ियाँ जहाँ से यह उत्पन्न होती है ४५०० फुट ऊँची हैं। बंबई प्रान्त के निवासियों के लिए यह पहाड़ी सुखवास स्थल है। महाराष्ट्र के लिए महा-बलेश्वर और पंचगनी आदि सुहावने ग्रीष्मावास हैं। 'डेविल लैंण्ड' दर्शनीय स्थलों में एक है। विपुल जलराशि लिए ऊँचाई से आती कृष्णा और कोयना दर्शकों में पुलक भर देती हैं। सचमुच, सुरम्य

पर्वत प्रदेश से कल-कल करती बहती जलधारा को देखना अलौकिक काव्यानुभूति है न ? 'पंचगनी' महाबलेश्वर से बारह मील पर है। कृष्णा के मन्दिर को जाओली राजा चन्द्रराव मूर ने बनवाया, फिर शिवाजी की माँ जीजाबाई ने इसका जीर्णोद्धार किया था।

एक बार यहाँ पर भयंकर तूफान व वर्षा हुई थी, जिससे यह मंदिर ढह गया। छतरका के एक वणिक महोदय ने इसका पुनर्निर्माण कराया। पहाड़ी की तलहटी में पूरब की तरफ देखते हुए कृष्णा का मन्दिर कितनी गम्भीरता से खड़ा है। गोमुखी से निकलती धारा में ही लोग गोता लगाते हैं। कुंडों में स्नान मना है। मगर यहीं पर श्राद्ध, पिण्डदान, क्रिया-कर्म आदि कराये जाते हैं। सम्राट शिवाजी ने एक ऊँची चट्टान पर 'कृष्णा' का एक मन्दिर बनवाया है।

मैदान पर कृष्णा की धारा, जैसे पिघली हुई चाँदी हो, बड़ी शान्ति से बहती है। लगता है, धरती पर पाँव रखते ही सहसा गंभीर हो गयी है। मरकत-सी हरियाली के बीच में धरती माँ की सीमान्त रेखा हो वह शान्त भाव से लहराती है। सघन सदाबहार वनों को काटती, मीलों के विस्तार को समेटती चलती हुई कृष्णा पाला-घाट, महादेव पहाड़ी श्रेणियों के बीच में एक समतल घाटी को बनाती है।

सतारा जिले में जूली तालूके में बने ये टीलेनुमा पहाड़ियाँ सतारा नगर से उत्तर-पश्चिम में तीस मील, वाई के पश्चिम में बीस मील तक फैली हैं। ये पश्चिमी घाट की श्रेणियों से छूती हुई पहाड़ी मालाएँ हैं। इनके पूरब तरफ के ढलान बड़े स्वाभाविक व सुन्दर हैं। इनकी चोटियाँ नुकीली न होकर समतल मैदान-सा विशाल रहने से ग्रीष्मावस्थल बसाने योग्य रहती हैं। पुराने दिनों में ऐसी ही चोटियों पर कितने ही पहाड़ी दुर्ग व किले बने थे। छोटी-मोटी बस्तियाँ भी आबाद रहती हैं। इन पहाड़ों की उपपत्यका व घाटियाँ बड़ी मनोहर हैं। आमतौर पर ये समुद्र तल से ४५०० फुट ऊँचाई पर हैं। इनमें

सबसे ऊँची चिन्तोला पहाड़ी शिखर की ऊँचाई ४७०० फुट है। यहाँ की आबोहवा बड़ी सुहावनी व स्वास्थ्यकर है।

हल्का-हल्का कदम बढ़ाता पतझड़ आता है तो तरु-लताएँ उसके स्वागतार्थ सुनहली पत्तियों के पाँवड़े बिछा देती हैं। सारा प्रदेश वीरान-सा लगता है। सनसनाती ठंडी हवा बहने लगती है। ठूँठ बनी खड़ी शाखा-प्रशाखाओं की नग्नता दिल में हल्की कंपन भर देती हैं। ठंड के मारे पक्षीगण अपना-अपना नीड़ छोड़कर गरम प्रदेशों की खोज में चले जाते हैं। ग्रीष्म और बसन्त में तो वनस्थली में मधुर रागिनी गूँजने लगती है। निर्मल आकाश, महकते फूल व चहकते पक्षी जादू फूँक देते हैं।

'कानाट' शिखर के एक तरफ कृष्णा की घाटी, दूसरी तरफ कोयना की सुरम्य घाटी। 'एलफिन्सटन पाईन्ट' और 'आर्थर सीट' के बीच के सँकरे खड्डे से 'सावित्री' उत्पन्न होती है। सावित्री जहाँ से निकलती है वहाँ पर काफी ऊँची, तीखी चट्टानें हैं। पहाड़ी चोटी की ऊँचाई ३००० फुट से कम नहीं। यहाँ की प्राकृतिक सुषमा की बराबरी कैसे ? कितना उद्दाम, उन्मत्त, भयानक सौंदर्य है यह ! काले रंग की चोटियों को धारण करती छोटी पहाड़ियों की श्रेणी यहाँ पर एकाएक ऊँची हो उठती हैं कि दिल धक् से रह जाता है। चारों तरफ के बीहड़ जंगल इस भयावनी सौन्दर्य को और भी भयंकर बना देते हैं।

ओह ! देखिए न ? प्रकृति का वर्णन करने लगूँ तो मैं अपने आप को भूल-सी जाती हूँ। अंग्रेजों के शासनकाल में महाबलेश्वर की उन्नति हुई। पहले यह छोटा-सा कस्बा था। आजकल इसका विस्तार हुआ और सुखी जीवन की सब सुविधाएँ यहाँ प्राप्त हैं। यहाँ का मौसम तथा आबोहवा यूरोपियनों के लिए बड़ा सुखद रहा। लोग अधिक संख्या में यहाँ आने लगे और आज तो यह लोकप्रिय पहाड़ी सुखवासस्थल बन गया है। १८४८ में सर जान मालगम् ने इसे

आदमियों के रहने लायक बनाया। सड़कें बनवायीं। इस पहाड़ी माला में कई दुर्ग हैं। शिवाजी ने इनमें कई किलों को मुगलों की अधीनता से छुड़ाकर आजाद कर लिया था। प्रतापगढ़, मकरन्दगढ़, कमालगढ़ जैसे कई एक सुदृढ़ पहाड़ी किले हैं। प्रतापगढ़ का नाम लेते ही अफजल खाँ व शिवाजी की उस मुलाकात की याद आती है न आपको ?

महाबलेश्वर नामक इस छोटी-सी नगरी में महाबलेश्वर के लिए एक देवालय है। यहाँ पर प्रतिष्ठित लिंग-मूर्ति स्वयंभू है। शहर से तीन मील पर यह मन्दिर है। त्रिमूर्तियों के लिए यहाँ पर मन्दिर बने हैं। इन पहाड़ी श्रेणियों में जो 'कुम्बकरली दर्रा' है उसने 'पाटण' और 'खराट' जाने का मार्ग खोल दिया है। 'अम्बा दर्रा' के जरिये रत्नगिरि से कोल्हापुर पहुँच सकते हैं। कोल्हापुर जिले में जो पनकाला श्रेणी है उसमें 'पनकाला' किला है। ४½ मील विस्तार का यह पहाड़ी दुर्ग अपने ढंग का अनोखा है। यहाँ के किले व दुर्गों की कहानी सुनाती जाऊँ तो वह लंबी कथा बन जाती।

सतारा जिले में कृष्णा केवल आठ मील दूर ही बहती है। एक जमाने में, खासकर पेशवाओं के राज्यकाल में सतारा का भाग्य खूब चमका। यह उनकी राजधानी बनी रही। यद्यपि आज इसका कोई विशेष महत्व नहीं है फिर भी कृष्णा की समतल घाटी का राजनैतिक महत्व कम नहीं हुआ है। सतारा नगरी तो कृष्णा के तट से कुछ मीलों की दूरी पर है। यहाँ के किले, पुरातन दुर्ग, राजमहलों के खंडहर आपको अपनी कहानी सुनाएँगे। मराठों का इतिहास बड़ा रोचक है। दिल दहला देनेवाली घटनाएँ, रोमांचक बातों की क्या कमी ? षड्यंत्र, फरेब, कूटनीति, छल-प्रपंच, विद्रोह, गुप्त आक्रमण, ओह ! कितना कहूँ ? मुगलों और मराठों में बड़ी दुश्मनी थी। आये दिन संघर्ष और निरन्तर युद्ध।

शिवाजी के बाद मेरी स्मृति पर जो अंकित है वह है 'ताराबाई'। राजनैतिक आकाश में वह जगमगाती तारा थी। छत्रपति राजाराम

की पत्नी थी। प्रखर बुद्धि और साहसिकता उसमें गजब की थी। औरंगजेब के विरुद्ध खड़े होकर, सेना संगठित करके मराठा राज्य की रक्षा करने का अथक प्रयास करती हुई इसने अपने दुर्दमनीय साहस का परिचय दिया था। छत्रपति शिवाजी की मृत्यु के समय वह पाँच साल की बालिका थी। वह तो अपनी ८६ वर्ष की उम्र तक अर्थात् १७६१ के पानीपत युद्ध तक मराठों की राजनीति में, प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से भाग लिया करती थी न? कठपुतली को नचानेवाली सूत्रधारिणी-सी परदे के पीछे से वह राजनीति के रंगमंच पर सबको नचा रही थी। ताराबाई को भगवान् ने अलौकिक सौन्दर्य दिया था। रायगढ़ किले में जब राजाराम नजरबन्द रखा गया था, तभी उससे ताराबाई की शादी हुई। किले की ऊँची चहारदीवारियों के अन्दर ही अन्दर इनके दाम्पत्य-जीवन के सुख के दिन बीते। हाँ, बेचारी को जीवन भर इसी तरह एक किले से दूसरे किले का शरण लेते रहना पड़ा।

यह रूपसी बड़ी चतुर थी। राजनीति के दाँव-पेंच लड़ाना इसके लिए बाएँ हाथ का खेल रहा। हाँ ·· कुसुम से भी कोमल, वज्र से भी कठोर थी यह। इसके छल-प्रपंचों से बेचारा शाहजी तंग आ गया था। एक और दुःख की बात है कि राजाराम इसका योग्य पति नहीं था। उसमें मानसिक दृढ़ता व निश्चय बुद्धि नहीं थी। तारा की दृष्टि में उसका कोई आदर न था। इतिहासकार और लोग कहेंगे कि ताराबाई बड़ी हृदयहीन, छली व कपटी नारी थी, जिसके कारण मराठा साम्राज्य को काफी धक्का पहुँचा था। मगर सच सकती हूँ, असल में वह उतनी बुरी न थी। उसके मानवीय हृदय को मैं जितना जानती हूँ, उतना दुनिया शायद ही जाने। अबोध बालिका के रूप में वह राजघराने की बहू बनकर आई थी। उसके बाद उसे असह्य कष्टों, विपत्तियों और षड्यन्त्रों का सामना करना पड़ा था। पग-पग पर काँटे थे कि बेचारी ने अपने हृदय को पत्थर बना लिया था।

शम्भाजी की हृदयहीनता व क्रूर व्यवहार के कारण अपनी सास को अपनी आँखों के सामने तड़प-तड़प कर मरते देखा था उसने। अपनी अनिश्चित भविष्य और परेशानियों से तंग आकर उसने शपथ ली थी कि अपनी कोख से उत्पन्न बेटे को छत्रपति शिवाजी का वारिस बनाकर गद्दी पर बिठाऊँगी और मराठा साम्राज्य को फिर से खड़ा करूँगी। तारा ने अपने प्यारे को नाम दिया था 'शिवाजी'।

शम्भाजी की हत्या हो गई, उसका वारिस कोई नहीं। शम्भाजी का बेटा शाहू तो छोटा बालक था। औरंगजेब, जो मराठा साम्राज्य को मिट्टी में मिला देने का स्वप्न देख रहा था, अब शंभाजी की हत्या होते ही खुशी से फूल उठा! शाहू ने सात साल की उम्र में ही बहुत-सी मुसीबतें झेल लीं। पिता के साथ भटकता रहा। माता ईशुबाई बड़ी साहसी औरत थी। आमतौर पर मराठी स्त्रियाँ वीरता में पुरुषों से कम नहीं। ईशुबाई ने राजाराम को जेल से रिहा करके, राज्य का भार उसके हाथ में सौंप दिया। मगर राजाराम में उतनी हिम्मत कहाँ? मुगलों के हमलों से घबड़ाकर दक्षिण की तरफ भाग गया। ईशुबाई और शाहू औरंगजेब के बन्दी हो गये। शाहू मुगलों के अन्तःपुर में कैसे पलकर बड़ा हुआ और उसे दिल्ली के अधीन रखने के लिए कैसे जाल रचे गये ··· यह अलग कहानी है।

जब राजाराम की मृत्यु हुई, तारा २५ साल की थी। शिवाजी छोटा-सा बच्चा था। छत्रपति शिवाजी के उस महान् साम्राज्य की नींव लड़खड़ाने लगी थी जिससे लोगों में न उत्साह रहा, न साहस। पस्त पड़ी हुई जनता में तारा ने नया जोश भर दिया। सात लम्बे वर्ष युद्धों में बीते। न औरंगजेब हताश हुआ, न ताराबाई। अधिकांश मराठे सरदार ताराबाई के पक्ष में थे। इस निरंतर युद्धों का फल कितना भयानक था? लाखों की मृत्यु और अर्थहानि हुई। लेकिन इतना सब कुछ होते हुए भी मराठा राज्य का अस्तित्व बना रहा। अधिकार की बागडोर ताराबाई के हाथों में थी।

ओह ! मनुष्य की सबसे बड़ी कमी अधिकार व पदवी का लोभ है। अठारह सालों के उपरान्त जब शाहू लौट आया, ताराबाई उसका स्वागत करने को तैयार न थी। उसकी अधिकार-लिप्सा के कारण मराठा साम्राज्य टुकड़ों में बँटकर बिखर गया। ताराबाई की कुशाग्र-बुद्धि पर मैं गर्वित थी, अब महाराष्ट्र के दुर्भाग्य पर उसके अध:पतन पर आँसू बहाने लगी। एकता टूट गयी और फिर २३ साल तक तलवारें टकराती रहीं। अन्त में शाहू की जीत और ताराबाई की हार मराठा इतिहास की अविस्मरणीय घटनाएँ हैं। चतुर राजनीतिज्ञ व कूटनीतिज्ञ पेशवाओं को उसने चकरा दिया था। पेशवाओं की तीन पीढ़ियाँ उसने देखी थी। हाँ ! ताराबाई को मैं भूल न पाती।

कृष्णा की उपनदियों के उद्गम स्थान लगभग ५००० फुट पर हैं। सर्पाकार कृष्णा सुरम्य घाटियों और घने जंगलों से सरसराती निकल आती है। अपनी उपनदियों को बड़े प्यार से समेटती हुई, बड़ी तेजी से टीलों में प्रवाहित होती है। कृष्णा की समतल घाटियाँ २०० मील से ज्यादा विस्तार की हैं। इसको दो भागों में विभाजित कर सकते हैं। महाबलेश्वर से रहीममटपूर तक यह सँकरी और गहरी है। सतारा जिले में सह्यात्री की कई शाखाएँ टीलों की श्रेणी के रूप में इधर-उधर बिखरती चलती हैं। महाबलेश्वर के उत्तर में पाँच मील पर शुरू होती 'कमालघाट' श्रेणी पूरब में १० मील चलकर कमालघाट पहाड़ी दुर्ग के साथ पूरी हो जाती है। वैरतघाट श्रेणी भी इसी तरह २० मील दूर चलकर पहाड़ी दुर्ग के साथ खत्म हो जाती है। यह श्रेणी कृष्णा और उसकी सहायक नदी 'कूडली' के बीच में आड़ी रेखा बनती है। 'वाई' से दक्षिण-पूरब में छ: मील पर वैद्रिघाट पहाड़ी किला है। 'हाडेघाट-आरली' श्रेणी ठीक इसी तरह महाबलेश्वर पहाड़ीमाला से आरंभ होकर वैद्रिघाट श्रेणी के बराबर दक्षिण-पूरब की तरफ चलती है, अर्थात् कृष्णा-एन्ना संगम तक फैली है। इसकी लंबाई तीस मील है। इस पहाड़ी श्रेणी के ऊपर कोई पहाड़ी दुर्ग व किले नहीं हैं।

सतारा जिले को चार नदियाँ सींचती हैं। उत्तर में 'नीरा', दक्षिण-पूरब में 'मान', दक्षिण में 'एन्ना' और 'कृष्णा' प्रवाहित होती हैं। नीरा और मान 'भीमा' में मिलती हैं। कृष्णा लगभग ११० मील इस जिले में बहती है! कृष्णा अपनी पन्द्रहवें मील पर 'वाई' नगर में पहुँचती है। वाई प्राचीन नगरी है। इसकी पवित्रता की बड़ी कीर्ति है। यहाँ कृष्णा के तट पर बहुत से मन्दिर हैं। यहाँ पर कृष्णा की धारा में गहराई अधिक नहीं है इसलिये यात्री लोग निर्भय होकर गोता लगाते हैं। यहाँ से १½ मील की दूरी पर 'वेणवेली' नामक एक छोटा-सा कस्बा है। यहाँ का स्नानघाट व मन्दिर मन को मोह लेगा। 'कूडली' दाएँ किनारे पर आकर मिलती है। इसके बाद दक्षिणमुखी बनी कृष्णा सतारा नगर से तीन मील पूर्व 'महूली' के निकट दाएँ तरफ से आ मिलती, 'एन्ना' को भी सहेंज लेती है। एन्ना और कृष्णा का संगम-स्थल 'महूली' पुण्यस्थली मानी जाती है। 'एन्ना' एक विशाल झील है। इसी से निकलती धारा को एन्ना नदी कहते हैं। यहीं पर एन्ना देवी का एक मन्दिर है। लिंगमूला के निकट एन्ना एक सुन्दर तेज प्रवाह का रूप धारण करती है। ऊँची, नंगी चट्टानों से होकर उफनती आती एन्ना ५०० या ६०० फुट नीचे के गड्ढे में गिरती है। इसकी प्रचंड धारा में इतना मतवालापन है कि दर्शक झूम उठते हैं। शिलाखंडों से टकराकर बिखरते जलकण, चाँदी की मणियों-सी छितराने का दृश्य कितना मोहक है!

एन्ना के जल को ग्रहण कर कृष्णा दक्षिण-पूरब की तरफ मुड़कर सतारा के उपहिस्से को 'कोरागाँव' से लगभग दस मील तक अलग करने पर 'करड' की सीमा पर पहुँचती है और ४० मील बहने के बाद कोरागाँव में मंगलपुर से एक मील पूरब दिशा पर बाएँ किनारे पर आ मिलती 'वासना' को मिला लेती है। लगभग ५५ मील तक सतारा के उपहिस्से में प्रवाहित होती कृष्णा दक्षिण कोने पर पहुँच कर 'वानेका' के दक्षिण-पश्चिम में दो मील की दूरी पर, दाएँ किनारे पर 'उरमोडी' का स्वागत करती है।

'रहीममटपूर' के उपरान्त इसकी घाटी विशाल, विस्तृत समतल मैदान-सी लगती है। करड में कृष्णा दक्षिणमुखी है। यहाँ पर आते ही कृष्णा बिल्कुल नया रूप धर लेती है। करड के दक्षिण दिशा में इसका प्रवाह-क्षेत्र विशाल हो जाता है। बीजापुर के सुल्तानों के शासनकाल में करड का कितना महत्व था? आज बिल्कुल खामोश है यह नगरी। कृष्णा को यहाँ पर कई उपनदियाँ अपना जलदान देती हैं। इनमें कोयना, वारणा, पंचगंगा, दूधगंगा आदि मुख्य हैं।

यहाँ इसके दाएँ किनारे पर 'तरली' और 'कोयना' आ मिलती हैं। 'तरली गाँव' से दस मील के ऊपर तरली उत्पन्न होती है। इसके बाएँ तरफ 'कास्ली', 'सोनापुर' पहाड़ी मालाएँ, दाएँ तरफ 'जावेली', 'वसन्तघाट' पहाड़ी श्रेणियाँ हैं। दक्षिण-पश्चिम की तरफ उन्मुख होकर तरली २२ मील दौड़ी आती है और 'उमराज' नामक स्थान पर कृष्णा से मिलती है।

कोयना से मिलने के बाद तीस (३०) मील आगे बढ़कर कृष्णा सांगली जिले में प्रवेश करती है। सतारा जिले के अन्दर कृष्णा जल-मार्ग बनने लायक नहीं है। एक तो तीव्र गति है, दूसरा ऊबड़-खाबड़ पथरीला मार्ग है, जिसके कारण मामूली नावें और डोंगियाँ भी नहीं चल पातीं। अलावा इसके, कगार भी इतने ऊँचे हैं कि कहीं-कहीं ही सिंचन के लिये इसका उपयोग हो पाता है।

'यरला' कृष्णा की उपनदियों में उल्लेखनीय है। शोलकनाथ पहाड़ी से उत्पन्न होकर यह ७५ मील दौड़ी आकर सांगली जिले में 'पीलवाडी' से छः मील दक्षिण में कृष्णा से घुलमिल जाती है। 'वारना' तथा 'यरला' की घाटियाँ पूरब और पश्चिम की तरफ फैली पड़ी हैं। सांगली जिले में कृष्णा, वालवा, तसगाँव, मिराज तालुकों से गुजरती है।

कोयना का नाम लेते ही आपको कई बातें याद आएँगी। बहुत समय पहले महाबलेश्वर के निकट से यह नदी पूरब की तरफ बह रही थी। 'कुंकुडमति' नामक यह अपनी स्वेच्छा से बिल्कुल स्वतन्त्र होकर घुमड़-घुमड़ कर बहा करती थी। प्रकृति की उसपर अपार करुणा थी कि अनियंत्रित, अबाध गति से पूरी बाढ़ लिये बहा करतीं थी। शुरू में चालीस मील तक इसकी घाटी बड़ी सुन्दर है।

हाय ! मनुष्य कितना स्वार्थी है। विराट प्रकृति को अपने वश में करके वह क्या-क्या नहीं करता ? हम नदियों के प्रवाह को रोककर खंडित करने से बाज नहीं आता। किनारों को ऊँचा करके पानी जमा लेता है। हम नदियों का धर्म ही जनसेवा है। इस प्यासी धरती और मानव की सेवा करने में हम अपने को निछावर कर देती हैं, फिर भी मानव अपने लोभ का संवरण नहीं कर पाता। इंजीनियरों ने देखा, कोयना का अपार जल-प्रवाह उसके पूरबमुखी होने से किसी काम न आकर बेकार ही समुद्र में जा मिलता है। उन्होंने सोचा, दो पर्वत-श्रेणियों के बीच बहती कोयना का दिशा-परिवर्तन करने से बड़ा लाभ होगा। तब तो यह पहाड़ी मार्ग से बहने लगेगी, ऊपर से नीचे उतरेगी, लापरवाही से खड्ड में गिरेगी और लहराती जायेगी, तब तो इच्छित विद्युत-शक्ति निकालना संभव हो जायेगा। बस, योजनाएँ बनती गयीं। बड़े-बड़े सपने देखे गये। आज के मानव की यांत्रिक शक्ति के आगे कोयना को झुकना पड़ा।

कोयना अब पश्चिममुखी बनी अरब सागर की ओर बहने लगी। उसकी पूर्वदशा से मानव समुदाय को केवल ४० हजार किलोवाट विद्युत-शक्ति मिलती थी, लेकिन अब तो चार लाख सत्तर हजार किलोवाट विद्युत-शक्ति उससे निकाली जाती है। आपको विश्वास नहीं हो रहा है न ? एक और बात आपको आश्चर्य में डाल देगी। उन दिनों इस नदी के तट पर निवास करने वाले इसके पानी को खेती-बारी के सिंचन के लिये या कृषि-कार्य के काम में नहीं लाते

थे। उनमें यह परंपरागत विश्वास रहा कि कोयना शापित नदी है और इसके पानी का उपयोग करने से बड़ी हानि होगी। लोगों के मन से आज भी यह आतंक दूर न हुआ। वे इसे शापित नदी ही मानते आ रहे हैं। इसके पानी का उपयोग सर्वनाश को ला देगा, ऐसा जो मानते थे, सन् १९६७ में ग्यारहवीं तारीख को एकाएक जो भूकंप हुआ, उससे उनका विश्वास आर पक्का हो गया है। सुबह चार बजे के लगभग एकाएक भूमि हिल उठी। साथ ही भयंकर आवाजें आयीं। प्रकृति और पशु-पक्षी त्रस्त हो उठे। पहाड़ों की चट्टानें हजारों फुट की ऊँचाई से गिरने लगीं। मकान ढह गये। गहरी खाईंयों में चट्टानों के गिरने से डरावनी आवाजें हुईं। मानवों के चीत्कारों से सारा वायुमंडल गूँज उठा।

लम्बी घाटी, मगर बड़ी सँकरी। दोनों ओर ऊँची खड़ी पहाड़ी दीवारें। इस प्रदेश का प्राकृतिक ढाँचा ही अनोखा है। महाबलेश्वर से आती 'कोयना' उत्तर व दक्षिण की तरफ घूमती लगभग चालीस (४०) मील बह आती है। सह्यात्री श्रेणी से आती अन्य नदियों के जैसे न होकर इसका जलग्रहण-क्षेत्र पश्चिम व पूरब की दिशाओं में है। आमने-सामने खड़े दो पहाड़ों के बीच में 'हेलवाक' गाँव के निकट कोयना बाँधी गयी।

सह्यात्री पर्वत-श्रेणियों की ढलान पूरब की तरफ बड़े स्वाभाविक बनी है, मगर पश्चिम की तरफ ऊँची करारी पहाड़ियों के सीधी दीवार-सी खड़ी रहने से इससे उत्पन्न होनेवाली सभी नदियाँ ज्यादातर पूरबमुखी बनी हैं। एकाध छोटी नदियाँ ही अरब सागर में मिलती हैं। कोयना में वर्षाकाल में अमित जल-प्रवाह आता है और उसकी घाटी भी पहाड़ी किलेबन्दी-सी घिरी हुई बिल्कुल स्वाभाविक जलाशय-सी बनी है, यह देखकर इन्जीनियरों ने सोचा था, बाँध निकालने के लिए यह अच्छी जगह है। हाँ ··· देखने में यह स्थल बड़ा रमणीय है। लबालब भरी कटोरी-सी लगती है।

कोयना बड़ी सुन्दर है, इसमें सन्देह नहीं। प्रकृति-प्रेमियों को उसका निर्बाध सौंदर्य और उन्मुक्त यौवन अपनी ओर खींचे बिना नहीं रहता। कितने ही कवियों ने मुक्तकंठ से इसका गान किया है। सतारा जिले में अस्सी (८०) मील तक बहनेवाली कोयना शुरू के चालीस (४०) मील तक दक्षिणमुखी, फिर पूरबमुखी बहती है। इसके दाएँ तरफ सह्यात्री श्रेणी व बाएँ तरफ बम्नोली, केरा, ततघाट टीलों की श्रेणियाँ है। ये श्रेणियाँ सह्यात्री की एक शाखा-सी उसी के समानान्तर चलती हैं। जाओली में पाम्नोली को पार करके बहती यह पाम्नोली से तीन मील उत्तर में 'शोलसी' को और दो मील दक्षिण में 'कान्तादी' नदियों को ग्रहण करती है। पाटन में 'हेलवाक' के निकट कोयना एकाएक मुड़ जाती है। अब तो पूरबमुखी बने पाटन नगर से होकर चलती यह उत्तर की तरफ से 'केरा', उसके बाद दक्षिण से 'मोरना' व 'वाँग' को अपने साथ मिला लेने पर 'करड' के निकट कृष्णा से मिल जाती है। शुरू में चालीस मील तक इसकी चौड़ाई १०० फुट की है, लेकिन अगले चालीस मीलों में इसके पाट का विस्तार तीन सौ फुट से पाँच सौ फुट तक हो जाता है।

आज के भगीरथ इंजीनियरों ने कोयना को बाँध बनाकर व उसके प्रवाह की दिशा परिवर्तित करके अपनी अद्भुत प्रतिभा का परिचय दिया है। अपने उद्गम स्थान से लेकर कई मील तक कोयना पहाड़ों में ही प्रवहित होती है। कृष्णा और इसका उद्गम स्थान एक ही है, फिर भी उनकी पहली मुलाकात करड में ही होती है। उन्नत शिखरों द्वारा पूरबी मानसूनी हवा को रोक देने से घनी वर्षा का फायदा कृष्णा से ज्यादा कोयना को मिलता है। हाँ, कृष्णा को जीवदायिनी, अतुल प्रवाहिनी बनानेवाली कोयना ही है। पहाड़ों पर कोयना का जलवहन क्षेत्र का विस्तार ३४४ वर्गमील ही है, फिर भी १,४०,००० मिलियन वर्गफुट का पानी वर्षाकाल में इसमें बह आता है।

कोयना की घाटी समुद्रतल से १९०० फुट की ऊँचाई पर है। यह तो भाग्य की बात है कि यह समुद्री किनारे से अधिक दूरी पर नहीं है। इसीलिए इसके दिशा-परिवर्तन में अधिक कठिनाई नहीं हुई। जलाशय का नाम है, शिवसागर। यह ४४ वर्गमील विस्तार का है। महाराष्ट्र के औद्योगीकरण के लिये विद्युत-शक्ति ही नहीं, कृषि की उन्नति के लिए भी यह बाँध बड़ा लाभदायक है। महाराष्ट्र की कई छोटी नदियाँ जैसे—वसिष्ठी, विश्वामित्री, जागपूडी, सावित्री, करल, कुण्डलिका, अम्बा, पाताल गंगा, गादि, उलकास आदि नदियाँ अरब सागर में मिलती हैं। वसिष्ठी की घाटी में कोयना का 'विद्युत घर' है।

बम्बई से स्टीम बोटों में लोग यहाँ आते हैं। थलमार्ग से यहाँ पहुँचना जरा कठिन है। 'गोवालकोट' तक छोटे जहाज व स्टीम बोट आते हैं। जो निरा जंगली प्रदेश बना रहा, वहाँ पर मयन की सृष्टि हो एक सुन्दरवर नगरी का निर्माण हो गया था! एकाएक ताश के पत्तो जैसा सबका सब ढह गया और सैकड़ों की बलि हो गईं। सारा शहर खण्डहर बन गया। आज भी उस भयंकर रात की याद आते ही मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

यहाँ बाँध, नगर, विद्युत-शक्ति उत्पादन आदि के लिए करोड़ों रुपये खर्च किये गये। कोयना की सतह से बाँध की ऊँचाई २८० फुट है। बाँध की बनावट, अन्य साधन, नहरें, नाले, गुफाओं के जलमार्ग आदि बनवाये गये हैं। बिजली का उत्पादन-गृह पृथ्वी के नीचे बना है। यह मार्ग लगभग सात मील लंबा है। करीब २२०० फीट नीचे और चार गुफाएँ हैं। नीचे पोफली के पास इन चारों गुफाओं का पानी आ जाता है। विद्युत-निर्माण के उपरान्त फिर गुफाओं द्वारा छोड़ा जाता है, जो काफी वेग से निकलता और पोफली से चिपलून

तक सोलह-सत्रह मील फेन उगलता, गरजता हुआ समुद्र में मिल जाता है।

साँगली नगर कृष्णा के बाएँ किनारे पर जरा ऊँचे टीलेनुमा प्रदेश पर बसा है। इस जिले का ज्यादातर अंश कृष्णा के समतल मैदान में है। कृष्णा की मुख्य उपनदी 'वारना' सतारा जिले से बहती आती है। 'काडवरी' नामक नाला इसको खूब पानी देता है। यह भी सह्यात्री के उत्तरी हिस्से से ही उत्पन्न होता है। साँगली जिले के दक्षिणी सीमा बने शिल्ला, महल, वालवा तालूकों से होकर 'हरिपुर' में कृष्णा के साथ संगमित हो जाता है। 'यरला' तो सतारा जिले के कटाव तालूके के शोलाकन्द टीले से उत्पन्न होकर ७५ मील बहकर भिलवाड़ी के छः मील दक्षिण में कृष्णा के साथ मिलती है। इसके अलावा नानी, मानगंगा, अग्रनी, बोर आदि छोटी नदियाँ भी उल्लेखनीय हैं।

कोल्हापुर जिले में छोटी नदियों की कमी नहीं। पंचगंगा, दूधगंगा, वेदगंगा, हिरण्याक्षी मुख्य हैं। 'वारना' से मिलने पर कोल्हापुर की पूरवी सीमा के रूप में चालीस मील से दौड़ती कृष्णा नरशोभबाड़ी के पास पंचगंगा से मिलती है। कासरी, कुम्बी, तुलसी, भोगवती आदि चार पहाड़ी नदियाँ मिलकर 'पंचगंगा' बनी हैं। पाँचवी नदी के रूप में 'सरस्वती' अन्तःवाहिनी है। इसका पानी सिंचाई के काम आता है। इन पाँचों में भोगवती मुख्य है। सह्यात्री के 'भोण्डा दर्रा' से कुछ मीलों पर उत्पन्न होकर उत्तर-पश्चिम दिशा में पचीस मील बहकर ऐतिहासिक मुख्यत्व रखनेवाली 'भीर' गाँव के निकट 'तुलसी' से मिलती है। इसका पानी रत्नगिरि जिले में सिंचाई के काम आता है। पंचगंगा के उत्तर तरफ की उपनदियों के जैसे न होकर 'भोगवती' के लिये विशाल उर्वरा प्रदेश है। भीलवाड़ी के बाद 'तुलसी' और 'कुम्बी' को समेट पर और भी कई एक जंगली नदियाँ इसे जलदान

देती हैं। कोल्हापुर से चार मील उत्तर-पश्चिम में यह 'कासरी' के साथ जहाँ संगमित होती है, वहीं 'प्रयाग' है। पंचगंगा में अपार जल आता है। 'सिरोली' से नरशोभवाड़ी में कृष्णा से मिलने तक यह इस जिले की सुख-समृद्धि का कारण बनती है।

'दूधगंगा' कोल्हापुर के दक्षिणी-पश्चिमी प्रदेश का सिंचन करती है। 'वेदगंगा' दूधगंगा की उपनदी है। सह्यात्री की चोटियों से निकलती दूधगंगा शुरू में उत्तर-पूरबमुखी है। इसके बाएँ तरफ भोंडा श्रेणी, दाएँ तरफ कागल श्रेणी हैं। कई पहाड़ी नदियों का जल ग्रहण करके दूधगंगा 'बेलावली' के बाद पूरब की तरफ मुड़ जाती है। लगभग १० मील तक यह कोल्हापुर और बेलगाम की सीमा-रेखा बनती है। कोल्हापुर की सीमा को पार करके पचीस मील आगे 'थाटूर' में कृष्णा से मिल जाती है। इसकी उपनदी वेदगंगा 'भूतरकाँच' श्रेणी से जहाँ पर अलग होती है, वहीं से निकलती है। यह बड़ी सँकरी घाटी है।

यहाँ पर भूतरघाट दुर्ग है। घूम-फिरकर आती इसको 'कुरली' में कपिशी पानी देती है। बेलगाम जिले में 'वेलजू' के पास यह दूधगंगा में अपने को जोड़ लेती है।

कोल्हापुर, करड, मिराज – ये तीनों जिले त्रिकोणरूप में हैं। कोयना, वारना, पंचगंगा, दधगंगा आदि सभी कृष्णा के दाएँ किनारे पर आ मिलती हैं। ये तीनों जिले उर्वर व समृद्धशाली हैं। पंचगंगा लगभग ८०० वर्गमील का सिंचन करती है। इन जिलों के ज्यादातर गाँव व कस्बे घाटियों व नदियों के तटवर्ती प्रदेशों में बसे हैं। कोल्हापुर प्राचीन गरिमा से युक्त एक सुन्दर नगर है। इसका प्राचीन नाम बाणपुरी है। यहाँ से रत्नगिरि अस्सी मील पर है। अम्बा, भोंडा इन दो दर्रों के द्वारा यह रत्नगिरि के साथ जुड़ा रहता है।

अध्याय : ६

आज का मैसूर राज्य पहले-सा नहीं। इसका विस्तार बढ़ गया है। बीजापुर, बेलगाम, धारवाड़, उत्तर कन्नड़, दक्षिण कन्नड़ गुलबर्गा, बीडार, रेयचूर, कोल्लेकालम्, कूर्ग प्रदेश का एक हिस्सा–ये सब मैसूर राज्य के अन्तर्गत आ गये हैं। कृष्णा, महाराष्ट्र में तीन सौ मील बहने पर बेलगाम जिले में आती है। इस प्रदेश में १८२ मील प्रवाहित होने के बाद आन्ध्र प्रदेश में जाती है। बीजापुर को कृष्णा और उसे सहायक नदियाँ पानी देती हैं। इस जिले के उत्तरी अंश का सिंचन 'भीमा' द्वारा होता है। करीब ९५ मील तक सीमा रेखा बनती है। इस जिले के मध्यभाग का सिंचन करनेवाली 'धून' भी कृष्णा की उपनदी है। अलावा, इस जिले के दक्षिणी हिस्से पर घटप्रभा और मालप्रभा मुख्य नदियाँ हैं।

कृष्णा सतारा, साँगली, कोल्हापुर से गुजरती हुई बेलगाम में मैसूर राज्य के अन्दर प्रवेश करती हुई बीजापुर पहुँचती है। घटप्रभा और मालप्रभा, दोनों पश्चिमी घाट से उत्पन्न होती हैं। इन दोनों नदियों के बीच बड़ी गहरी घाटी है। पहाड़ों और उँची-नीची चट्टानों से होकर बहने से ये दोनों कई एक स्थानों पर प्रपात का रूप धारण करती हैं। आज के मैसूर-महाराष्ट्र की सीमा पर बेलगाम जिले के अन्तर्गत ऊँची पहाड़ी कगार से उमड़कर गिरती इसके सौंदर्य से अभिभूत एक अंग्रेज ने यहाँ पर बाँध बनाने की नींव डाली थी। यह प्रपात गोकक तालूके में होने से इसका नाम 'गोकक प्रपात' पड़ा हैं।

इसे एक बड़ा प्रपात समझें तो आश्चर्य है। यह प्रदेश काफी उपजाऊ है। आस-पास के स्थानों में कपास की फसल खूब होती है।

बुनकर व जुलाहें भी यहाँ पर अधिक मिलेंगे। याद रखिए, मैं १८१८ की बात कह रही हूँ। उन दिनों विद्युत-उत्पादन और मशीनों की सुविधाएँ कहाँ थीं ? फिर भी उस अंग्रेज ने बड़े साहस के साथ यहाँ पर एक मिल की स्थापना की और इस प्रपात से विद्युत-शक्ति उत्पन्न करके मिल को संचालित किया। उस जमाने में कपास के सूत के मिल अपूर्व थे न ? मगर देखिए न, पानी की इतनी सुविधाएँ प्राप्त करने पर भी बेलगाम, बीजापुर जिलों में कृषि की बड़ी उन्नति न हो पायी है। अक्सर अकाल पड़ जाता है। १८८९-९१ में 'टूपटल' गाँव में एक बाँध खड़ा किया गया था। अभी हाल में यहाँ से बीस मील पर घटप्रभा जलाशय में बाँध तथा बिजलीघर का निर्माण हुआ है।

बीजापुर जिले में दक्षिण रेलवे पुल से जरा हटकर पूरब की दशा में 'कुटासी' में कृष्णा का प्रवेश होता है। इस जिले में लगभग १२५ मील यह दौड़ती है। शुरू के १५ मीलों तक यह बीजापुर और बेलगाम की सीमा बनती है। इसके बाद इसकी धारा बीजापुर को दो टुकड़ों में विभाजित कर देती है। उत्तर का हिस्सा जरा चौड़ा है। घटप्रभा से मिलने तक इसका पाट जरा विशाल होकर बल खाता हुआ बड़ी नजाकत से चलता है। इसमें से बहुत से नाले निकाले गये हैं, जो इस प्रदेश के लिए वरदान बने हैं।

'सिमालकी' के निकट कृष्णा और घटप्रभा के मिलन के उपरान्त इसके तटवर्ती दृश्य एकदम बदल जाते हैं। प्रकृति के प्रशान्त सौंदर्य व काव्यात्मक रोमांचकारिता के बदले दिल दहला देनेवाले दृश्य नजर आने लगते हैं। टूटे-फूटे किनारे, ऊँचे-नीचे कगार, बेढंगे मार्ग, सीधी करारी ढलान और गरज-बरज कर आती कृष्णा ··· ओह ! मेरा मन काँप उठता है। जलदुर्गा टीलों से होकर तीव्र गति से जब यह उमड़-घुमड़कर आने लगती है ··· अपनी गति पर, मन-माने ढंग से कई एक प्रपात का रूप धारण करती जाती है। एक

स्थान पर करीब ३०० फुट नीचे आ गिरती है। वर्षा के दिनों में चट्टानों को काटकर बनाते रास्ते से, उग्र रूप धारण करके आती कृष्णा वेगवती बनी कहीं-कहीं बड़े उल्लास से कलकल करती, फेन उगलती बड़ी मनोरम भी लगती है। चढ़ाई और उतारों में लहरें मारती आने से कृष्णा में भयानक सौन्दर्य है। 'घटप्रभा' से यहाँ इसकी भेंट होती है, उसका पाट ५०० फुट चौड़ा हो जाता है।

'घटप्रभा' बेलगाम जिले में बेलगाम शहर से पच्चीस मील पश्चिम की तरफ सह्यात्री श्रेणी रामघाट से उत्पन्न होती है। आरम्भ में १२० मील पूरबमुखी होकर मुन्दुल तालूके में 'मुदोल' नगर के आठ मील पश्चिम की तरफ बीजापुर जिले में करीब ७० मील बहती है। मुदोल, बाघाल घाट तालूकों से होकर शुरू के ५० मील तक दक्षिण-पूरब की तरफ 'भूटनी' गाँव तक आती है। इसके उपरान्त, बाघाल घाट तक टीलेनुमा पर्वतीय प्रदेशों में बहते वक्त 'हेरगल' के निकट प्रपात का रूप धारण करती है। अन्त में 'सिमाली' के निकट कृष्णा से इसका संगम होता है।

मालप्रभा का उद्गम स्थान बेलगाम जिले के खानापुर तालूके में सह्यात्री श्रेणी के पूरबी शाखा में 'जामहोली' से आठ मील पश्चिम में है। मालाप्रभा का अर्थ है—मटियाली। इसकी लंबाई २०० मील है। यह भी बड़ी वेगवती और स्वेच्छाचारिणी है। जब चाहे तब अपना मार्ग बदल लेगी। पहाड़ी उतारों पर बहकर आते समय कई छोटे-मोटे प्रपातों को जन्म दे देती है। सख्त उतारों पर बने प्रपातों की अपनी मस्ती निराली होती है। इनका पानी मटमैला होता है। १२० मील पूरबमुखी बनी बेलगाम जिले से होकर बीजापुर जिले के 'बादामी' तालूके में प्रवेश करती है। यहाँ से बीस मील पूरब दिशा में बहती यह बीजापुर और धारवाड़ की सीमा बनती है। बीजापुर में करीब ६५ मील यह प्रवाहित होती है। मनोली, रामदुर्ग, रामदाल जैसे कई स्थलों पर प्रपात के रूप में

गिरती है ! खासकर 'मनोली' में ३०० फुट चौड़ा और पचास फुट गहरा बना इसका घना प्रपात नयनाभिराम दृश्य है। फेन उगलती, तुषारकणों को बिखेरती अपार जलराशि को ले आती है। बादामी पहाड़ियों के समानान्तर चलता इसका प्रवाह काफी गंभीर है। इसकी उपनदियाँ जाऊलहल्ला, हीरेहल्ला, शिवहल्ला आदि हैं।

'ऐहोले' इसके तट की प्राचीनतम नगरी है। यहाँ पर करीब ७० देवमन्दिर हैं। सुप्रसिद्ध बादामी गुफाएँ यहाँ से १६ मील पर हैं। अलावा, नन्दीकेश्वर, पट्टाकल आदि ऐतिहासिक महत्वपूर्ण स्थान भी इसके तट पर विद्यमान हैं। आगे यह उत्तरवाहिनी है इसलिये बड़ी पुनीत और पवित्र समझी जाती है। वर्षाऋतु में दोनों कूलों को छूती माल-प्रभा ग्रीष्मकाल में छिछली धारा बन जाती है। जहाँ पर यह कृष्णा से मिलती है उस स्थल को 'कूडली संगम' कहते हैं। यहाँ पर संगमेश्वर का एक आलय है। लिंगायत धर्म के संस्थापक बसवेश्वर ने अपने अन्तिम दिन यहीं बिताये थे। इनके चलाये लिंगायत संप्रदाय ने लोगों को बहुत आकृष्ट किया था।

'धून' नदी भी कृष्णा की एक सहायक नदी है। साँगली जिले में "जात' नगर के चार मील दक्षिण में इसका उद्गम स्थान है। शुरू में पूरब, फिर दक्षिण-पूरब की तरफ घूमकर 'मुडुमिकल' तालूके में 'तलिकोट' तक चलती है। इसके बाद का मार्ग पूरा का पूरा पर्वतीय है। बीजापुर जिले की पूरबी सीमा के पूरब तरफ करीब १३ मील पर 'धून' कृष्णा को गले से लगा लेती है। इस जिले में इसकी लंबाई सौ (१००) मील है। धून नदी की घाटी और समतल मैदान बड़े उपजाऊ हैं। यहाँ पर धान की फसल खूब होती है। कहीं-कहीं इसके तटवर्ती प्रदेश खतरे के हैं। उथली रेत और गाद भरी कीचड़ में आदमी क्या, गाड़ियाँ भी धँस जाएँगी।

मैसूर राज्य के उत्तरी हिस्से पर गुलबर्गा जिला है। इसके उत्तर में बीडार और दक्षिण में रेयचूर है। इस जिले के दक्षिणी भाग में

गुलबर्गा और रेयचूर के बीच में कृष्णा प्राकृतिक सीमा बनी है। थोड़ी दूर तक गुलबर्गा और बीजापुर के लिए उत्तरी सीमा भी बनती है। गुलबर्गा के उत्तर से दक्षिण पूरब तक ६० मील के लिए छोटी पहाड़ियों की श्रेणी चलती है। इस जिले के लिए कृष्णा और भीमा ही मुख्य नदियाँ हैं। अन्य सरिताएँ भीमा की सहायक नदियाँ हैं। मैसूर राज्य में १८२ मील बहने के उपरान्त रेयचूर जिले में 'टोसुकु' गाँव के निकट कृष्णा आन्ध्र प्रदेश में प्रवेश करती है। कृष्णा के प्रवाह में 'जलदुर्गा प्रपात' विशेष उल्लेखनीय है।

'भीमा' कृष्णा की उपनदियों में प्रधान है। इसका उद्गम स्थान भी पश्चिमी घाट की पर्वतमाला है। भीमा की पौराणिक कथा बड़ी रोचक है।

त्रिपुरासुर का वध करने के उपरान्त शिवजी सह्यपर्वत पर आकर अपनी थकावट दूर करने लगे। उस समय अयोध्या का महाराजा 'भीमाका' यहाँ पर तपस्यारत था। उस कठोर तपस्या पर मुग्ध होकर शिवजी ने कहा था कि उसे इच्छित वर देने को वे तैयार हैं। भीमाका बड़ा उदार और परोपकारी पुरुष था। उसने कहा — 'भगवान ! मुझे अपनी कोई इच्छा नहीं। अपने माथे पर झलकते श्रमकणों को जीवदायिनी नदी की अजस्र धारा बनाकर इस धरती पर बहा दें तो बड़ी कृपा होगी। इससे भारत देश व लोगों की बड़ी भलाई होगी।' शिवजी ने उसकी अभिलाषा पूरी की। सह्यपर्वत से जो धारा फूट निकली वही 'भीमा' है। भीमाका की तपस्या पर मिला है न ? इसलिए इसका नाम 'भीमरति' पड़ा। यह पापनाशिनी व मोक्ष प्रदायिनी है।

सह्यपर्वत माला की कोंगण की तरफ तीव्र ढाल है। इसके एक छोटे-मोटे टीलों के क्रमगत विस्तार में ही भीमशंकर आलय और तालाब है। मन्दिर देखने में मामूली है, देखने में विशेष आकर्षण नहीं मगर इसका महत्व और कीर्ति बड़ी है। भारत भर में बारह ज्योति-

लिंग क्षेत्र हैं। श्रीचैलम, सोमनाथ, उज्जयिनी, महावलेश्वर, केदार नाथ, काशी, त्रियम्बकेश्वर, बैजनाथ, नागेन्द्रेश्वर, रामेश्वरम् आदि में भीमशंकर भी एक है। भीमा नदी कई एक कुंडों से बह आती है। लगभग पाँच फुट विस्तार का एक कुंड है, इसी से पहले पहल पतली धाराओं के रूप में भीमा प्रकट होती है। ग्रीष्म के दिनों में ये पतली धाराएँ भी आपको दृष्टिगोचर न होंगीं। लेकिन सच कहती हूँ, पंढर-पुर और गंगापुर में भीमा का दर्शन करनेवाले यहाँ पर उसकी मूल धारा को देखकर विश्वास न कर पायेंगे।

भीमशंकर आलय के पीछे जो कुंड है उसे 'मोक्ष कुंड' कहते हैं। यहाँ पर भीमा के उद्गम का आप दर्शन कर पायेंगे। यह कुंड ३० वर्ग फुट का है। यात्रीगण सबसे पहले यहीं गोता लगाते हैं। फिर सरस्वती तीर्थ, जन्य तीर्थ, कुशारण्य तीर्थ जैसे कई पुण्य तीर्थों पर स्नान करते हैं। मन्दिर के अन्दर गर्भगृह में प्रतिष्ठित शिवलिंग मूर्ति के नीचे हमेशा पानी रहेगा। भीमा को गर्भग्रह में झरते हुए देखने वाले यात्री उसकी मूलधारा का दर्शन करने के बड़े उत्सुक हैं, मगर यह संभव नहीं। क्योंकि वह प्रदेश घने जंगल का है जिसमें जंगली जानवर हुआ करते हैं। इस बीहड़ जंगल में जाकर मूल धारा का दर्शन का साहस किसी को न होता। लेकिन मन्दिर से थोड़ी दूर पर पहाड़ी उतारों में भीमा वेग से उतर आती है न ? वह दृश्य बड़ा ही सात्विक व रमणीय है। यहाँ आरण्य के बीच में स्थित मन्दिर स्फटिक धारा-सी कलकल बहती भीमा, चारों तरफ व्याप्त अपूर्ण शान्ति सारे परिवेश में अनोखा रंग भर देती है। भीमा को देखते वक्त माँ की गोद में किलकारियाँ भरती अबोध शिशु की याद आये बिना न रहती।

भीमशंकर का यह आलय केट तालूके से ३० मील उत्तर पश्चिम में 'पोवार गिरी' गाँव में स्थित है। एक ऊँचे टीले पर बना यह मन्दिर समुद्री तल से ३०९० फुट की ऊँचाई पर है। चारों तरफ गहन

वनों से घिरा है न ? इसलिए यह निस्तब्धता आपको अभिभूत करने के साथ-साथ मन में अव्यक्त घबराहट को भी पैदा कर देगी। जरा-सी आहट आपको चौंका देगा। नाना प्रकार के वन-पुष्प, घनी झाड़ियाँ, ऊँचे भीमकाय वृक्ष, वृक्षों पर आच्छादित जंगली लतायें, टेढ़े-मेढ़े शिलाखण्डों पर नृत्य करती आती 'भीमा'! बस, आप आतंकित हो जायेंगे।

एक जमाना था ··· यहाँ पर कितने ही, इन पहाड़ी उपत्यकाओं और उतारों में बौद्ध मठालय और विहार थे। इस प्रशान्त वातावरण में भिक्षुगण ध्यानावस्थित, समाधिस्थ रहते नजर आयेंगे। पहाड़ी की तलहटी में मिले विशाल मैदान पर भीमशंकर गाँव है। पूना से यह ७४ मील दूरी पर है। यहाँ महा शिवरात्रि का उत्सव बड़े कोलाहल से मनाया जाता है। 'भीमा' और उसकी उपनदियाँ महाराष्ट्र के सूखे प्रदेशों को नवजीवन प्रदान करती हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। पूना नगर मूला और मूठा नदी के संगम पर बसा है। इसकी घाटी बड़ी समृद्ध और हरी-भरी है। भीमा, इन्द्रायिनी, मुक्ता, मूला, नीरा आदि इसके दाएँ तरफ से, गोट, सिना ये दोनों बाईं तरफ से आकर भीमा से मिलती हैं।

पूना का नाम लेते ही मुझे पेशवाओं की याद आती है। अगरु की मधुर सुगन्ध की जैसी स्मृतियाँ मुझे घेर लेती हैं। शाहू के महाराष्ट्र में पदार्पण होते ही गृह-कलह आरम्भ हो गये थे, फिर भी महाराष्ट्र के नव-विकास व निर्माण के लिए यह एक कारण बना था। पेशवा रंगमंच पर आये। महाराष्ट्र की राजनीति में इनका महत्वपूर्ण स्थान था। राजनीति के शतरंज में सम्राटों को मोहरा बनाकर इन कुशल शतरंज के खिलाड़ियों ने अपनी अद्‌भुत प्रतिभा का परिचय दिया था। राज्य का विस्तार करके, शासन को सुव्यवस्थित करके, लगान का बन्दोवस्त किया। हाँ! सैनिक संगठन व सामरिक शिक्षा पर भी जोर दिया। सुदूर दक्षिण तक उनका झण्डा फहरा उठा।

महाराष्ट्र के उत्थान पर मेरी छाती फूल उठी, अब उसके अस्तमन पर मैं रो उठी। बाजीराव पेशवा १८वीं सदी का अद्वितीय सेनापति ही नहीं, कुशल राजनीतिज्ञ भी था। पेशवा के आसन पर बैठते वक्त, वह २० वर्ष का नौजवान था। इसके द्वारा संस्थापित साम्राज्य ७० साल तक जीवित रहा। शुरू के तीन पेशवाओं में इसी ने पेशवाओं के पद व सत्ता को इतना बढ़ा दिया कि स्वयं राजा उसके सम्मुख शक्तिहीन रह गये। वह अपूर्व व्यक्तित्व रखनेवाला महत्वाकांक्षी था। युद्धों में उसे बड़ी सफलताएँ मिलीं।

मेरे तटों के उस पार का प्रदेश शम्भाजी को और इस पार का भू-भाग शाहू को दिया गया। बालाजी विश्वनाथ शाहू के पक्ष में आखीर तक दृढ़ता से रहे। शाहू सचमुच बड़ा अच्छा, सीधा व उदार पुरुष था। जनता आज भी उसका नाम बड़े आदर से लेती है। बाजीराव और चिमाजी आभाराव मराठे राज्य के आधार-स्तंभ थे। बाजीराव ने राज्य की सीमा बढ़ायी, बड़ी हिम्मत से आगे बढ़ा और निजाम का भी मुकाबला किया। लेकिन शाहू और शम्भाजी की आपसी फूट निजाम के लिए अनुकूल थी। बाजीराव ने निजाम को जीतने के उपरान्त गुर्जर देश, मालवा, बुन्देलखंड की ओर अपनी दृष्टि दौड़ायी।

यहीं पर 'मस्तानी' उसके जीवन में आयी। बुन्देलखंड यमुना और नर्मदा के बीच का प्रदेश है। यह वीर-प्रसविनी भू है। बाजीराव और मस्तानी की प्रेम कहानी एक अमर काव्य है। १७२९ में मस्तानी को साथ लिये बाजीराव महाराष्ट्र लौट आया। यह उसकी जिन्दगीरूपी नाटक की नयी मोड़ थी। इसके बाद उसके पारिवारिक और राजनैतिक जीवन में कभी शान्ति न रही। मस्तानी के साथ बिताये क्षण उसके लिये स्वर्गीय थे। वह कभी उसका साथ न छोड़ती ··· युद्धक्षेत्रों में सहगामिनी बनी रही। युगलप्रेमियों को न जाने कितनी आँधी-पानी का सामना करना पड़ा था। उनका प्रेम

सच्चा था। मगर लोग उसे समझ न पाये। बाजीराव को मस्तानी से अलग करने के लिये षड्यंत्र चलते रहे।

बाजीराव की अप्रतिम वीरता और कूटनीति महाराष्ट्र के जीवन में नवीन प्रेरणा का संचार कर दिया। बाजीराव राजनीतिज्ञ, सैनिक, सेनाध्यक्ष व योद्धा था। अंग्रेजों के जालसाजियों से वह परिचित था। असल में वही मराठा शासन का अधिष्ठाता था। मराठा राज्य में निरन्तर चलने वाले संघर्ष ने उसे पल भर भी आराम न लेने दिया। मरुभूमि में भटकने वाले को अमृत-सा जल मिला हो ··· बाजीराव के जीवन में मस्तानी मस्त पवन-सी आयी।

जवानी के बीस सालों को बाजीराव ने मखमल की सेज पर नहीं, युद्धक्षेत्रों में बिताया था। आसपास के मित्र व नातेदारों ने अन्त में मस्तानी को उससे अलग कर दिया। वह बेचारी एक किले में रखी गयी। अन्तिम युद्ध में जब शाहू ने अपने प्राणों की आहुति दे दी, मस्तानी ने भी अन्तिम साँस ले ली। शाहू के लिये अन्तिम साँस तक लड़ने वाले वीर योद्धाओं के नाम आज भी बड़े आदर से लिये जाते हैं। वैसे ही उसकी और मस्तानी की प्रणय-कहानी भी अमरकाव्य बनी है। मस्तानी व बाजीराव के वंशज ही बाँदा के नवाब हैं।

'भीमा' पूना जिले के पूरब दिशा से १५० मील दौड़ी आती है, फिर दक्षिण-पूरब की तरफ मुड़कर पूना और अहमद नगर की सीमा बनी ३५ मील बह आती है। टेसुर के निकट बीजापुर के अन्दर घुस आती है। आगे पूरब की दिशा में बहनेवाली यह बीजापुर और शोलापुर की सीमा के पास ३० मील आते वक्त ही 'सिना' से उसकी भेंट हो जाती है। गुलबर्गा जिले में भीमा १३६ मील प्रवाहित होकर अन्त में कृष्णा से मिलती है। इस जिले में अमराजा, बोरी, ककना जैसी छोटी नदियाँ भीमा से मिलती हैं। भीमा और अमराजा के संगम पर गंगापुर है। यहाँ करीब तीन मील के विस्तार पर आठ तीर्थस्थली हैं। इनमें दत्तात्रेय आलय बहुत प्रसिद्ध है। भीमा और

कृष्णा का संगम भी पुनीत माना जाता है। यहाँ पर स्नान करने के लिए श्रद्धालु लोग दूर-दूर से आते रहते हैं।

गुलबर्गा – हठात – पामिनी सुलतान आँखों के सामने आ जाते हैं। तुगलक का शासन २६ सालों तक भारत में व्याप्त रहा था न? उसके सरदार मलिक इस्माईल और हसन गंगू ने पामिनी राज्य का निर्माण किया था। अलाउद्दीन हसन भामनशा के नाम पर हसन गद्दी पर बैठा और गुलबर्गा को अपनी राजधानी बना ली। पामिनी राज्य ने साम्राज्य का रूप ले लिया और विजयनगर साम्राज्य के विरुद्ध युद्ध करके उसे ध्वस्त करनेवालों में हसन का बेटा मुहम्मद शाह भी एक था। बाद में आए सुलतान अहमद शाह ने राजधानी को गुलबर्गा से बीडार में बदल लिया। पामिनी साम्राज्य, बीडार, अहमद नगर, बीजापुर, गोलगोण्डा, बरार ·· ऐसे पाँच टुकड़ों में बँट गया। इन पाँचों सुलतानों ने मिलकर सुन्दर नगरी विजय नगर को धूल में मिला दिया था। १३५१ में बम्बई से गान्तहार तक, दक्षिण में तपती से कृष्णा तक इसका विस्तार था। लगभग २०० सालों तक इनका राज्य कायम रहा। फिरोश शाह तुगलक के जमाने में तुंगभद्रा के तट तक इसकी सीमा का विस्तार बढ़ा था। विजय नगर राजवंश से वैवाहिक सम्बन्ध भी हुआ। विजयनगर की राजकुमारी ने फिरोज के अन्तःपुर की शोभा बढ़ाई ऐसा कहूँ तो शायद आपको विश्वास न होगा।

ओह ··· १४७३–७४ में दक्षिण में जो भयंकर अकाल पड़ा उसे याद करते ही हृदय काँप उठता है। आम जनता उन दिनों दरिद्र ही रही। धनवान व दरबारी प्रभु लोग ·· भोग विलास में डूबे थे। लेकिन बेचारी अकाल ग्रस्त जनता ने तड़प-तड़पकर अपना प्राण दिया था।

हूँ ··· भीमा की सहायक नदियों पर कहना ही भूल गई हूँ। भीमा जब तंग, सँकरी घाटी भीमनेर से हो आती है, तब 'भिम्पका'

गाँव के निकट 'भामा' इसे अपना जलदान देती है। इन्द्रायणी, तेगु गाँव से होकर आती है। तेगु एक मुख्य नगर है। जब सारे देश में इस्लाम का आतंक मचा था 'वरहरी सम्प्रदाय' ने ही हिन्दुओं को एक सूत्र में बाँधकर सुसंगठित किया था। हाँ, हिन्दुओं में अपने धर्म के प्रति आस्था उत्पन्न किया था। महात्मा पुण्डलीक इस सम्प्रदाय के जन्मदाता हैं। इनके भजन हृदयस्पर्शी हैं। तेगु वरहरी सम्प्रदाय वालों के लिए मुख्य क्षेत्र है।

'तेगु' के आगे इन्द्रायणी पुण्यस्थली 'आनन्दी' को पार करके आती है। यह क्षेत्र सन्त ज्ञानेश्वर की चरण-धूलि से पावन बनी है। इन्द्रायणी 'तुलापुर' के निकट भीमा से संगमित होती है। वेल, तलगाँव से आती है। वेल को प्यार से समेटती हुई भीमा सर्पाकार घूमती-फिरती आती है और 'रंजनगाँव' के पास मूठा और मूठा स्वागतार्थ खड़ी रहती हैं। उन दोनों को मिला लेने पर भीमा पूरब की तरफ बढ़कर 'घोड' से मुलाकात करती है। आगे का मिलन 'नीरा' से होती है। यह तो नरसिंहपुर के पास भीमा से मिल जाती है।

'पंढरपुर' भीमा के दाएँ किनारे पर खड़ा है। पंढरपुर के दक्षिण पूरब दिशा में दस मील पर सरकोली और शोलापुर के दक्षिण में 'सिना' भीमा को पानी देती हैं। पंढरपुर को भीमा अर्धचन्द्राकार रूप में घेर लेती है। इसलिए इसका 'चन्द्रभागा' का नाम पड़ा है। हाड़ को कँपा देने वाली सर्दी, चारों तरफ व्याप्त कुहरा, ठिठुरन देनेवाली ठंडी हवा के झोंके, सबको यात्रीगण 'जय पांडुरंगा, जय विटोबा' का नाम लेकर भीमा की सलिल धारा में उतरते ही भूलं जाएँगे। अरुणोदय की वेला में हल्की गरमी को महसूस करते हुए, 'विटोपा' का नामोच्चारण करनेवाले भक्तों की श्रद्धा व भक्ति को देखनेवाले पुलकित हो उठेंगे। भीमा के स्निग्ध शीतल पानी में उनका सारा मानसिक ताप व तपन विलीन हो जाता है। भजन

गोष्ठी वालों की सुमधुर कंठध्वनि हवा में लहराने लगती है तो सारा वातावरण कितना स्पृहणीय हो जाता है। विटोबा महाराष्ट्र के लोगों का आराध्य देव है।

सन्त एकनाथ, नामदेव, चोखामेला, तुकाराम, जनाबाई, ज्ञानेश्वर आदि सन्त भक्तों ने विटोबा के गुण गाया है। सन्त एकनाथ मानव सबको एक मानते थे। जात-पाँत को माने बिना सबको भक्ति-रूपी अमृत का पान कराया था। पंढरपुर में आप जात-पाँत, स्त्री-परुष, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब किसी में भेद न पायेंगे। भगवान् नाम स्मरण करने, भजन करने में मस्त लोगों को देखकर आपको आश्चर्य होगा। चोखामेला जात में नीच कुल के थे। वे आलय के अन्दर प्रवेश न करके चहारदीवारी के बाहर खड़े होकर विटोबा की आराधना किया करते थे। आज भी आलय के सामने उनकी समाधि है। नामदेव की समाधि तो आलय के पूर्वी द्वार पर नीचे की पहली सीढ़ी पर है जहाँ उनकी एक शिला मूर्ति भी प्रतिष्ठित है। भीमा की उथली धारा में स्नान करने वाले सबसे पहले भक्त पुण्डलीक का ही दर्शन पायेंगे। क्योंकि उसका मन्दिर लगभग नदी में ही है। इसी मन्दिर का गोपुर कलश सबसे ऊँचा भी है। असल में मन्दिर में एक लिंग मूर्ति ही प्रतिष्ठित है जिस पर पुण्डलीक का चेहरा लगाया जाता है। पुंडलीक की महिमा आप जानते होंगे। उसी की प्रार्थना पर भगवान कृष्ण यहाँ पर भक्तों को दर्शन देते रहते हैं न ? यहाँ पर धर्मशालाएँ, मठ, मठालय व मन्दिरें बहुत मिलेंगे। महाराष्ट्र के लोग इसकी यात्रा करना अपना धर्म मानते हैं न ? इसलिए हमेशा यहाँ भीड़ लगी रहती है।

इस नगरी के अति प्राचीन होने से तंग गलियाँ और घनी बस्ती स्वाभाविक है। हाल में तो नई बस्तियाँ आधुनिक ढंग से बन रही हैं। भीमा पर जो सुन्दर पुल है उस पर खड़े होकर देखें तो सारा शहर बड़ा सुन्दर दीखेगा। नगर के बीच में है मन्दिर। चारों तरफ

मकानों व गलियों से घिरा रहने से खुला मैदान नहीं मिलेगा। मन्दिर का विस्तार भी अधिक नहीं है। ३५० फुट लंबा, १७० फुट चौड़ा है और इसके आठ द्वार हैं।

यहाँ पर भीमा के किनारे पर दस-बारह स्नानघाट हैं। आजकल पानी की धारा बहुत पीछे हट गई है। रेतीला तट फैला पड़ा है। इसके किनारे से सटे-सटे मन्दिर गंभीरता से खड़े हैं कि मन को मोह लेते हैं। श्रावण, कार्तिक एकादशी पर यहाँ मेला-सा लगता है।

भीमा 'यादगीर' तालूके में संगम नामक स्थान पर कृष्णा से मिलती है। रेयचूर और यादगीर के बीच में कृष्ण रेलवे स्टेशन है। भीमा को गले लगाकर कृष्णा रेयचूर आती है न? शोलापुर और रेयचूर उपजाऊ दोआब प्रदेश है। कृष्णा उतारों में बड़ी तीव्र गति से लहरा आती है। तीन मीलों के अन्दर ४०८ फुट उतर आती है तो आप उसके वेग की कल्पना कर सकते हैं। यहाँ से बारह मील उत्तर-पूरब में महबूब नगर के पश्चिम सीमा से होकर आंध्रा मे प्रवेश करती है।

महबूब नगर जिले के उत्तर में हैदराबाद, नलकोण्डा जिले और पूरब में गुण्टूर है। कृष्णा और तुंगभद्रा इस जिले में बहती हैं। इस जिले के मध्यभाग में बहती कृष्णा 'आलमपुर' के निकट तुंगभद्रा से मिलती है। यह मिलन पुनीत क्षेत्र माना जाता है। शंखनेश्वर आलय, नवब्रह्मा आलय आदि नौ सुन्दर मन्दिर हैं। शिल्प व वास्तु-कला की दृष्टि से ये मन्दिर उत्कृष्ट हैं। तुंगभद्रा के तट पर भी कई एक मन्दिर हैं। शहर से एक मील पर घने वृक्षों से भरे बगीचे में ही मन्दिर है। इनको पापनाथ आलय कहते हैं। स्नानघाट, तीर्थ आदि पवित्र माने जाते हैं।

भीमा की रोचक कथा सुन लिया है न आपने? आगे तुंगभद्रा की कथा सुनाऊँ क्या?

अध्याय : ७

'तुंग' माने 'यथेष्ठ', 'भद्रा' माने 'हित'—तुंगभद्रा का अर्थ है, बड़ी हितैषी अर्थात् बड़ी मात्रा में जनता की भलाई करने वाली।

बहुत समय पहले भगवान् विष्णु ने 'वराह' का अवतार लिया था। पाताल में भू-लोक धँस गया था। वराह-अवतार लेकर भगवान् भू-लोक को अपनी सींग के बल पर ऊपर ले आये थे। काफी थक गये थे वे। जरा विश्राम लेने एक शैलमाला पर जा बैठे। उनकी बायीं सींग से होकर पसीने की जो धारा बह निकली, वही 'तुंगा' नदी बनी। दायीं सींग से जो धारा-सी बह निकली, वही 'भद्रा' बनी। जहाँ से यह दोनों सलिल धाराएँ बह निकलती हैं, उसे 'गंगमूला' पर्वत कहते हैं। इसको वराह पर्वत, बाबा भूदान भी पुकारते हैं। हाँ, 'पम्बा' भी कहते हैं न ?

मैसूर राज्य के दक्षिण में कावेरी और तुंगभद्रा नदी बहती हैं। तुंगा और भद्रा यद्यपि पास-पास ही उत्पन्न होती हैं, फिर भी १२० मील बह आने के बाद शिमोका से ९ मील पूरब की तरफ कूडली के पास ही परस्पर मिलती हैं। भद्रा का जलग्रहण-क्षेत्र काफी समृद्ध है। हर साल लगभग २०० इंच से ज्यादा पानी बरसता है। उन दिनों का मैसूर रियासत आज कर्नाटक राज्य के रूप में विशाल राज्य बना है। कन्नड़ भाषा भाषी लोगों के इस राज्य में बेंगलूर, बेलगाम, बेल्लारी, बीजापुर, बीडार, गुलबर्गा, चिकमगलूर, चित्तदुर्गा, कूर्ग, माण्डया, धारवाड़, मैसूर, उत्तर कन्नड़, दक्षिण कन्नड़, शिमोका, रेयचूर, तुमकूट, हासन, कोलार आदि जिले हैं।

इस राज्य का विस्तार १,९२,२०३ वर्गकिलोमीटर है। इसका समुद्री किनारा २०० मील लम्बा है। कला, वाणिज्य, संस्कृति की दृष्टि से यह राज्य सर्वोन्नत दशा में है। सह्याद्री के पश्चिमी घाट की मालाएँ इस राज्य को निराला गाम्भीर्य प्रदान करती हैं। प्रकृति-

प्रेमी और उल्लास यात्रा के पर्यटकों के लिये इसका समुद्री किनारा बड़ा ही रंम्य लगता है। बगदूर घाट, कुरमा घाट, बैंगन, होक, अंजीदेव, सेण्टमेरी जैसे कई सुन्दर टापू सागर के सुनील विस्तार पर तैरते-से नजर आएँगे। टापू हरे-भरे हैं। सघन बाग-बगीचे, वृक्षों का वैभव निराला है।

अंगोला, कारवार आदि प्रदेशों की प्राकृतिक शोभा व हरीतिमा बड़ी प्यारी लगेगी। रम्य वनस्थली, मखमली हरीतिमा, शान्त-भव्य टीले, मनस्वी शिखर आदि सारे वातावरण को अवर्णनीय माधुर्य से ढा देते हैं। इस प्रदेश में वन्य पशु-पक्षी भी अधिक मिलेंगे। झुंड के झुंड हाथियों को विचरते देख पाएँगे। यह भारत का छठाँ बड़ा राज्य है। इस राज्य के पूरब में आन्ध्र, दक्षिण में केरल और तमिलनाडु, पश्चिम में अरब सागर, उत्तर में गोवा और महाराष्ट्र राज्य हैं।

सच कहती हूँ मेरा पानी इस राज्य के लिये अधिक उपयोगी नहीं होता। मेरी उपनदियाँ 'मंजीरा' और 'खरांजिया' बीडार जिले को पानी देती हैं। काबेरी, कृष्णा, तुंगा, भद्रा, उत्तरपेण्णै, दक्षिण-पेण्णै जैसी नदियों के अलावा पश्चिम दिशा की तरफ बहकर समुद्र में गिरने वाली कई नदियाँ हैं। पहाड़ी कगारों से व सीधी खड़ी चट्टानों से होकर आसुरी वेग से बहने के कारण इनमें कुछ नदियाँ विद्युत-उत्पादन के काम आती हैं। खान, कंगूली, दात्री, कोलूर, सात्रा, हलदी, सीता, स्वर्णा, कुरुप्पू, नेत्रवती, अघनाशिनी, शरावती आदि नदियाँ उल्लेखनीय हैं। जोक, गेरसप्पा, शिवसमुद्रम् जैसे प्रपात विद्युत-उत्पादन में बड़े उपयोगी हैं। इनमें शरावती छोटी होने पर भी बड़ी शक्तिदायिनी है। मूर्ति छोटी है मगर कीर्ति बड़ी। इसकी लंबाई ८२ मील है। शिमोका जिले में तीर्थहल्ली तालूके में, अम्बू तीर्थ के पास शरावती उत्पन्न होती है। पहाड़ी और वन्य प्रदेशों से गुजरती हुई यह चपल बालिका-सी उछल कूद मचाती है। नैसर्गिक सुषमा का विस्तार और वृक्षावलियाँ आपका स्वागत करेंगी।

सोल्लास अठखेलियाँ करती शरावती बड़ी शरारती है। पश्चिमी घाटों को काटती हुई एक स्थान पर ९६० फुट की ऊँचाई से गिरती है उसे 'जोक प्रपात' कहते हैं। जोर-शोर से कूदती शरावती का पानी दुग्ध फेन उगलता शिलाखंडों पर नर्तन करता है कि दर्शक की आँखें नहीं अघाती हैं। चार धाराओं में इसका पानी बँटकर चार प्रपातों में गिरता है। प्रकृति की अपार शक्ति व्यर्थ न हो जाए इस ख्याल से शरावती पर रोक लगाकर बिजली निकालते हैं। शरावती की उपनदी 'तलकले' में भी बाँध बना है। शरावती विद्युत उत्पादन क्षेत्र सारे भारत में बड़ा है।

बालरायन दुर्गा ४९४० फुट ऊँचा है। गंगमूला वराह पर्वत ४७८१ फुट, ओडिन कुट्टा ५०९६ फुट, लाका पर्वत ४६६२ फुट ऊँचाई के पहाड़ी सिलसिले हैं। कडूर जिले के उत्तर में टीलेनुमा पहाड़ियों की श्रेणी है। कडूर समुद्रतल से २५५३ फुट ऊँचाई पर है। तुंगा और भद्रा इस जिले से होकर चलती हैं। बाबा भूतानगिरी मैसूर पठार के मध्यभाग में बिना किसी व्यवधान के करीब बीस मील तक एक चहारदीवारी-सा खड़ा है। इसकी उत्तरी शाखा हेप्पी टीले से शुरू होकर अटूट श्रेणी के रूप में लगभग १५ मील तक फैला है। इसकी दक्षिणी शाखा को भसवन कुट्टा, ओडियन कुट्टा कहते हैं। इन्हीं टीलों के उतारों पर काफी चाय के बागानें लगाये गये हैं। टीलों की ऊँचाई, अमित वर्षा, आबोहवा, सुविधाजनक ढलानें आदि इन बागानों के लिए अनुकूल हैं। सारी 'झक्कर घाटी' में काफी और चाय के बगीचे भरे पड़े हैं। इस श्रेणी को बाबा भूतान क्यों कहते हैं जानते हो? यहाँ पर बाबा भूतान नामक एक मुसलमान फकीर रहा करते थे। हाँ! पहले-पहले उन्होंने ही कहवा का बीज, मक्का से लाकर यहाँ बोया था।

'गोप्पा', 'बालेहोनुर' तालूकों की सीमाएँ जहाँ पर मिलती हैं उस जगह से तुंगा व भद्रा निकल आती हैं। भद्रा कडूर जिले के ज्यादातर

हिस्से में प्रवाहित होती है। तुंगा तो नेम्यार' के उत्तर-पूरब दिशा की ओर वहकर श्रृंगेरी को पार करने पर फिर से उत्तर की तरफ मुड़कर 'हरिहरपुर' के आगे शिमोका जिले में आती है। 'तीर्थ हल्ली', भीमन कट्टे में उत्तर पूरब की तरफ मुड़ती है। कडूर जिले के पहाड़ी उतारों व ढलानों पर जंगल भरे पड़े हैं। वर्षा भी यहाँ खूब होती है। पहाड़ी झरने, नदियाँ, नाले, तंग व सँकरी घाटियाँ, मैदानी प्रदेश, ऊबड़-खाबड़ पर्वतीय मार्ग आदि को पार करती हुई तुंगा व भद्रा स्नेह की धारा बहाती आती हैं।

इसमें एक भौगोलिक विशेषता है। इस जिले के दक्षिण पश्चिम दिशा पर पश्चिमी घाटियाँ पूरब की तरफ जरा-सा अन्दर की तरफ झुक आती हैं, इसलिए दक्षिण और उत्तर ऐसे दो अलग-अलग जल-ग्रहण क्षेत्र बन जाते हैं। मुख्य कगार, बालरायन दुर्गा से शुरू होकर मेर्रीकुट्टा, कोप्पदुर्गा के पूरब की तरफ जाकर भद्रा के जलग्रहण क्षेत्र को तुंगा के जलग्रहण क्षेत्र से अलग कर देते हैं। इसके बाद यही श्रेणी 'माडकट्टा' तक चलती और शिमोका जिले में मध्य श्रेणी से जुड़ जाती है। इस श्रेणी के उत्तरी मैदान में ही श्रृंगेरी है।

यह ऋषिश्रृंगि मुनि का निवासस्थान है, इसलिए इसका नाम ऋषिश्रृंगि गिरि पड़ गया जो आज 'श्रृंगेरी' रह गया है। इस नगर के चारों तरफ सघन वन प्रान्त है। टीलों को पार करती, अरण्य को चीरती आती तुंगा इस नगरी को घेरती हुई चलती है ·· यह दृश्य बड़ा ही मनोरम है। तुंगा ·· का यह जल · स्फटिक-सा निर्मल और धीर-गंभीर प्रवाह है इसका। सीधे पूरब की तरफ ३० मील बहती यह भद्रा को अपने आलिंगन में भर लेने के उपरान्त 'तुंग भद्रा' का नाम पाती है।

तुंगा के बाएँ किनारे पर हरिहरपुर एक छोटा-सा गाँव है। यहाँ पर मठालय और देवालय हैं। बेकर हल्ला, गीता, नन्दिनी, नलिनी आदि कई पहाड़ी नदियाँ तुंगा को अपना पानी देती हैं।

इसमें 'नन्दिनी', 'किक्का' के निकट से आती है। किक्का से पाँच मील पर नरसिपेट्टा टीले से उत्पन्न होकर यह नलिनी और सीता को अपने साथ समेटकर 'नेम्मार' में तुंगा के साथ मिलती है।

श्रृंगेरी का नाम लेते ही आदिशंकर और विजयनगर साम्राज्य का बीजारोपण करनेवाले विद्यारण्य मेरे आँखों के सामने आ जाते हैं। यहाँ पर तुंगा पश्चिमवाहिनी है न? इसलिए बड़ी पुनीत मानी जाती है। देश भर में अपने अद्वैत सिद्धान्तों का प्रचार करते हुए यहाँ पर आये तो यहाँ का प्रशान्त वातावरण और कलकल करती बहती तुंगा की सलिल धारा ने उनका मन मोह लिया था कि यहीं पर तुंगा के ऊँचे कगारे पर अपना मठ स्थापित किया था। उस दिन से श्रृंगेरी मठालय, शंकराचार्य के अद्वैत धर्म का प्रधान केन्द्र बना रहा है। यहाँ पर श्री शारदा देवी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। हाँ, स्फटिकलिंग, रत्नगर्भ गणपति, श्री चक्र आदि भी यहाँ के मन्दिरों में प्रतिष्ठित है। विद्याशंकर आलय कितना भव्य व गंभीर है!

तुंगा के उस पार नरसिंह वन है। तपस्वी और योगियों के लिए ध्यान व तपस्या करने के लिए यह आरण्य उपयुक्त है! मठालय और घाट बड़े ही सुन्दर दीखते हैं! ··· तुंगा की धारा में तैरती हुई मछलियाँ आपको मोह लेंगी। यहाँ के शीतल जल में डुबकी लगाते ही सारा शरीर ही नहीं हृदय भी पुलकित हो उठता है। नगरों की यांत्रिक सभ्यता व हलचलों से कोसों दूर यह गाँव यात्रियों को अपनी ओर खींचता है। मनोरम प्रकृति और ईश्वर का सान्निध्य अवसादमय जीवन को कितना आनन्दमय बना देता है? श्रृंगेरी मठाधिपति ··· जगद्गुरु के आसन पर आसीन हैं। ४४ वर्गमील के विस्तार के इस जागीर के अन्तर्गत २४ गाँव हैं। कई सम्राट और महाराजाओं ने मठ के लिए बहुत-सा धन-दौलत प्रदान किया है। इस मठालय के दसवाँ गुरु आचार्य विद्यारण्य एक महान व्यक्ति थे।

'हरिहर' और 'बुक्क' जिन्होंने विजयनगर साम्राज्य की नींव

डाली थी, उनके लिए विद्यारण्य ही पथप्रदर्शक रहे। चौदहवीं सदी में इन्होंने ही श्रृंगेरी मठ की स्थापना की। यही नहीं, विजयनगर साम्राज्य की राजधानी, विजयनगर के निर्माण की योजना भी इनकी थी। इसका नाम दिया था 'विद्यानगर'। यहीं आगे चलकर 'जियनगर' से विजयनगर बना। विद्यारण्य महा पण्डित ही नहीं, समस्त कलाओं में विज्ञ पुरुष थे। ज्योतिष, शिल्प, चित्र, औषधि, साहित्य सभी क्षेत्र में दक्ष थे। आत्मज्ञानी होते हुए भी राजनीति की ओर ध्यान देना अपना धर्म मानते थे। हरिहर और बुक्कराय के धार्मिक और राजनैतिक गुरु थे, ऐसा कहना ठीक होगा।

गंग, कदम्ब, पश्चिमी चालुक्य, पूर्वी चालुक्य, राष्ट्रकूट, देवगिरि यादव, वरंगल के काकतीय, द्वावर समुद्र के होयसल जैसे राज्यों के उत्थान पतन के उपरान्त विजयनगर साम्राज्य उठ खड़ा हुआ। मध्यकाल के आकाश पर चमकता सितारा था विजयनगर साम्राज्य। हरिहर और बुक्कराय वरंगल के राजा प्रतापरुद्र की सेवा में थे। दिल्ली सुल्तान जब वरंगल पर चढ़ आया, इन दोनों ने वरंगल को त्यागकर 'कंपीली' राज्य का शरण लिया और अपनी बहादुरी और प्रतिभा के बावजूद राजनीति के क्षेत्र में चमक उठे। बक्काल के साथ जो युद्ध हुआ उसी ने इनके जीवन को नई मोड़ पर घुमा दिया।

कंपीली को अपने वश में करके इन्होंने सुलतान का सामना किया। छोटी-सी सेना थी फिर भी उत्तर से आनेवाले मुसलमान आक्रान्ताओं को दक्षिण की तरफ बढ़ आने से रोककर अपने अदम्य वीरता का परिचय दिया था न? तुंगभद्रा के उत्तरी तट पर 'आनेगुडी' के समक्ष 'हम्बी' नामक स्थान को अपना केन्द्र बना लिया था। आक्रमणकारियों के अनीतियों के शिकार बने, देश तथा लोगों को देखकर इनका दिल इतना पीड़ित हुआ कि देश तथा धर्म की रक्षा के लिए इन्होंने अपने को निछावर-सा कर दिया। ये दोनों अपने को महाराजा नहीं, मण्डलेश्वर कहा करते थे। विद्यारण्य ने उन्हें

वरदान दिया था कि भगवान् विरुपाक्ष की प्रतिनिधि बने देश का सुशासन करें। अपने गुरु के इस आदेश को आखीर तक इन्होंने निभाया था।

तुंगभद्रा के बाएँ किनारे पर होयसल राजाओं का झंडा फहरा उठा तो दाएँ किनारे वराह का झंडा उड़ रहा था। मैं और कृष्णा इस दक्षिण पठार के लिए सीमा बाँध के जैसे अड़े रहे। इस पठार में गरमी भी अधिक है, ठंडक भी कम नहीं। यहाँ की मिट्टी उपजाऊ है। सोना उगलती है धरती – धान, कपास, ज्वार जैसे नव धान्य लहरा उठे। चन्दन, सागौन, देवदारु के बन, तरह-तरह के फल-फूल यहाँ फलते हैं। वर्ण-वर्ण के फूल, चहकती चिड़ियाँ, चौखड़ी भरते हिरण, तोता, मैना, नाचते मोर ·· यहाँ के आरण्यों में स्वच्छन्द विचरण करते हैं।

उत्तर से तूफान जो आततायी गरजते आये वे भी इस पठार को पार करके आगे बढ़ न पाये। याद रखिए ·· इस भारत पर जिन-जिन महान् सम्राटों ने एक छत्र शासन किया था उनमें एक ने भी कुमारी अन्तरीप तक अपने शासन की बागडोर का विस्तार न किया था। सत्याश्रय पुलिकेशी ने चालुक्य शासन का विस्तार किया था। ओह ! वह सचमुच नर शार्दूल था न ? कितना कहूँ मैं विजयनगर साम्राज्य के घोर पतन तक, दक्षिण के राजा लोग ही इस पठार पर अपना झंडा फहरा रहे थे।

ताप्ती और मेरे बीच के भू-भाग में जो राज्य करते थे वे यादव वंश के थे। इनकी राजधानी देवगिरि थी। मेरे और कृष्णा के बीच का राज्य काकतियों का था। इनकी राजधानी वरंगल थी। तुंगभद्रा और कावेरी को अपनी सीमा बनाकर होयसलों ने राज्य किया और उनकी राजधानी थी द्वारसमुद्र। सुदूर दक्षिण में पाँडियों का साम्राज्य था। इन चारों सत्ताधारी राज्यों की कीर्ति, समृद्धि व श्री सम्पन्नता का मैं जितना भी वर्णन करूँ वह थोड़ा है। सोना, चाँदी,

धनधान्य समस्त वैभव भरे थे। इसका अन्त तो कितना भयानक, कितना भयंकर था ?

विनाशकारी प्रलय-सी, अलाउद्दीन खिलजी चढ़ आया। सोना-चाँदी को ही लूटा नहीं, मानवों का शिकार किया था उसने। उसके राक्षसी हमले ··· इनमें कोई भी रोक न पाये।

हूँ इसके बाद आया था तुगलक। सम्राट् अशोक के उपरान्त केवल इसी ने इस विस्तृत-विशाल भू-खंड को एक शासन के नीचे ले आया था; मगर शासन की बागडोर को कुशलता से न सँभालने की शक्ति इसमें कहाँ रही ? तुंगभद्रा का किनारा कितने ही युद्धों का मैदान बना था। यहीं सैनिकों का अड्डा था, रणक्षेत्र था, फौजी मुकाम था। वीरों के खून की लाली से यह रंगी गयी है।

श्रृंगेरी के बाद तुंगा 'भागकुंज' में आती है। यहाँ पर उत्तर-पश्चिम की तरफ मुड़कर तीर्थहल्ली में पहुँचती है। हल्ली माने कन्नड़ में 'गाँव' है। तीर्थहल्ली तालूके में दक्षिण की तरफ से प्रवेश करके तुंगा उसके पश्चिमी हिस्से तक अबाध गति से उत्तर दिशा में बहती है। यहीं पर श्रृंगेरी से आती 'बेगर हल्ला' से मिलती है। इसके उपरान्त शिमोका और कडूर जिले की सीमा बनी बहती है। इसके साथ मिलनेवाली छोटी-मोटी नदियाँ, नाले, झरनें करीब ७५ से ज्यादा होंगे। यह तालूका पर्वतीय प्रदेश है, जिसमें घने जंगल छा गये हैं। 'तीर्थहल्ली' गाँव इसके बाएँ किनारे पर है। यहाँ पर कई तीर्थस्थल व स्नानघाट हैं। दोनों किनारों पर कई मठ-मठालय हैं।

तीर्थहल्ली को पीछे छोड़ती हुई तुंगा घूमती-फिरती पूरब की तरफ बहती है। वह तो मनचली है न ? एकाएक उत्तर-पूरब दिशा की ओर मुड़कर शिमोका को पार करके 'कूडली' में आ जाती है। भद्रा का मिलन यहीं पर होता है। इनका संगम पुनीत है। शिमोका नगर से संगम १ मील दूरी पर है। कई प्राचीन मन्दिर व मठालय दिखाई देंगे। आगे कुछ ऐसे ही दो-तीन जगहों पर वह अनायास मुड़

जाती है। यद्यपि इसका प्रवाह टेढ़ा-मेढ़ा है फिर भी साधारणतया उत्तरमुखी है। एक और भी विशेषता है इनमें, दोनों एक होने पर भी अपना-अपना अस्तित्व न खोती तुंगा और भद्रा—तुंगभद्रा बन जाती हैं न ?

भद्रा कडूर जिले में उत्पन्न होती है। 'काबा भूतान' पहाड़ियों के साथ वह आती है। शंखमेश्वर में अनिपिड्ड हल्लो दक्षिण से आ मिलती है। तुरन्त भद्रा दिशा बदल लेती है। शुरू में उत्तर फिर उत्तर-पूर्वी दिशा में प्रवाहित होकर 'काण्डे' को पारकर 'झक्कर मैदान' में आती है। यह भी तुंगा के जैसे ही चंचला है। मनमाने ढंग से घूमती-फिरती मुड़ती आती है। हेप्पे में इसके साथ सोमवाहिनी मिलती है। कई पहाड़ी नाले इसको पानी देते हैं। 'लागावली' को पार करने के उपरान्त शिमोका जिले में भद्रावती में पहुँचती है। बालेहन्नूर, भद्रावती इन दो स्थानों पर इसके ऊपर पुल बने हैं।

हाँ, भद्रा के किनारे काफी ऊँचे और पथरीले हैं जिसके कारण इसका पानी सिंचाई के काम में बहुत कम उपयोग किया जाता है। इसके तटों पर जंगल बहुतायत में मिलेंगे। झांड़-झंखाड़ों से भरा यह प्रदेश डरावना लगेगा। सिंचाई की सुविधा के लिए कई छोटे-मोटे बाँध खड़े किये गये हैं। इसका पानी भी तुंगा के जैसा निर्मल नहीं है। मटमैला हुआ करता है। 'बालेहन्नूर' लिंगायत धर्म वालों के लिए पुण्य-क्षेत्र है। चारों तरफ जंगल और टीलों से घिरे रहने से गाँव व बस्तियाँ पहाड़ी अंचलों व उतारों में बने हैं। उपत्यका की समृद्धि का क्या कहना ?

शिमोका जिले में प्रवेश करके भद्रा उत्तर की तरफ घूमकर भद्रावती को पार करके, शिमोका शहर के उत्तर-पूरब में आठ मील की दूरी पर 'तुंगा' का स्वागत करती है। इसके बाद इनकी सम्मिलित धारा तुंगभद्रा के रूप में २४ मील तक प्रवाहित होने के उपरान्त 'होनाली में पहुँचती है। यह तो 'भास्कर क्षेत्र' है। इसके आगे

तुंगभद्रा के बाएँ तरफ 'कुमुदवती' आ मिलती है। ··· आगे उत्तर पूरबमुखी बने 'हरिहर' आता तो 'हरिद्रा' आकर जुड़ जाती है और आगे बढ़ते ही 'वरदा' अपना पानी देती है। इतने पहाड़ी नदियों का दान लेकर ही तुंगभद्रा वह आती है।

वरदा एक मुख्य उपनदी है। इक्केरी से आती यह चन्द्रकुट्टा, पवलवासी आदि को पार करके पूरबमुखी बनी 'धारवाड' जिले में जाती है। फिर उत्तरमुखी होकर थोड़ी दूर बहने के उपरान्त गुलनाथ में तुंगभद्रा से मिलती है। चित्तलदुर्ग जिले के उत्तर पश्चिम सीमा के रूप में थोड़ी दूर प्रवाहित होनेवाली वेदवती भी तुंगभद्रा से मिल जाती है। 'सागुनगिरी' की उपत्यका में स्थित गौरी हल्ला ही 'वेदा' का उद्गम है। कडूर के निकट अवती को अपने साथ मिला लेने पर वेदा वेदवती का नाम लेती है। वेदवती 'शक्कर पट्टिणम्' को घेरती हुई उत्तर पूरब दिशा में बहती कडूर तक आकर यहीं पर अवती के जलदान को ग्रहण करती है। इनका संगम-स्थल कडूर से तीन मील की दूरी पर है। चित्तलदुर्ग जिले की मुख्य नदी वेदवती है। पहाड़ों में बह आने से जंगली नाले व पहाड़ी झरने अपना पानी इसे दे देती हैं। चित्तलदुर्ग में वेदवती अपना नाम बदल लेती है। यहाँ पर इसे 'हक्कारी' अर्थात् 'पापनाशिनी' कहते हैं। आगे समतल मैदान में बहते वक्त 'जनकहक्का' आ मिलती है। बेल्लारी से दस मील आगे यह तुंगभद्रा से मिलती है।

तुंगभद्रा के तट पर स्थित मल्लापुर से चाण्डूर टीले शुरू होते हैं। टीलों की यह श्रेणी दक्षिण पूरब की ओर लगभग ३० मील चलती है। बीच में एक ही स्थान पर यह श्रेणी खण्डित होती है। इस श्रेणी में दो स्थानों पर गहरी घाटियाँ हैं। इस श्रेणी से तीस मील की दूरी पर जो एक छोटी पहाड़ी श्रेणी है उसे 'मल्लप्पा कुट्टा' कहते हैं। यह भी तुंगभद्रा के किनारे से शुरू होकर दक्षिण पूरब की तरफ चलती है। करीब पच्चीस मील आगे 'सिक्कहरी' के मैदान से

खण्डित होकर सात मील के अन्तराल के उपरान्त फिर से शुरू हो जाती है।

अलावा इसके, कालहँसी टीले, कुडकोडा टीले, आलूर टीले, अदोनी टीले जैसी कई श्रेणियाँ हैं। इनमें दो श्रेणियाँ उल्लेखनीय हैं। एक तो शानडूर पहाड़ी माला के उत्तर में और दूसरा तुंगभद्रा व शानडूर पहाड़ियों के मध्य में है। इनमें पहली श्रेणी दारोजी पहाड़ी माला, आड़े आये मैदानी प्रदेश के कारण शान्डूर पहाड़ी माला से अलग होकर, दक्षिण रेलवे लाइन के समानान्तर रेखा-सी बेल्लारी से होसपेट तक चलती है। दूसरी कंपीली श्रेणी इसके उत्तर में स्थित मैदान से अलग की गयी है। हम्वी जाने का मार्ग इस मैदान से होकर चलता है। बेल्लारी में प्रकृति के खुले सौंदर्य का दर्शन कर सकेंगे। पहाड़ियाँ, पर्वत मालाएँ, दूर-दूर तक फैले खेत और मैदान बड़े सुन्दर हैं। बेल्लारी जिले के पश्चिम व उत्तर दिशा में करीब २०० मील तक तुंगभद्रा बहती है।

हरिहर और बुक्कराय द्वारा जिस साम्राज्य का बीजारोपण हुआ था, वह कोमल कली-सा विकसित होकर अपने सुमधुर गन्ध से सारे वातावरण को सुगन्धित करता हुआ लगभग दो सौ सालों तक जो अपना विजय का झण्डा फहराता रहा उस सुन्दर फूल को अपने आँखों के सामने ही आतताइयों द्वारा निर्दयता से कुचलित होते हुए तुंगभद्रा ने देखा है। उस दिन जो भयंकर तूफान चली उसमें इस महानगरी का सर्वनाश हो गया था। इस महानगरी का यश दूर-दूर देशों तक फैला था। लेकिन उस प्रलयंकरी विध्वंस के बाद वह फिर से पनप न पाई। आज तक फैले खण्डहरों के अलावा वहाँ पर कुछ नहीं।

श्रीरामचन्द्र किष्किन्धा आने पर यहाँ ठहरे थे न? इसलिए ··· उनके गाथा से सम्बन्धित कई स्थान यहाँ पर मिलेंगे। मादंग पर्वत, माल्य पर्वत, ऋष्यमुख पर्वत, पम्बा नदी, पम्बा सरस, माल्यवन्दम्

आदि कई हैं। 'आनेकुन्दी नगरी' इस महानगरी के उत्तरी कोने पर एक जबरदस्त दुर्ग बनी थी। कम्पीली भी एक दुर्ग है।

'हम्वी' के प्रधान मार्ग कितने सपाट व विशाल थे? राज मार्ग के दोनों तरफ शीतल छाया देने वाले सघन वृक्ष खड़े थे। बीचो-बीच घनी बस्तियाँ व गाँव थे। सारा प्रदेश घना आबाद था। इस नगरी के एक तरफ तुंगभद्रा और दूसरी तरफ टीलों की श्रेणियाँ प्राकृतिक दुर्ग-सी बनी थीं! प्रकृति की इस सुदीर्घ, सुदृण चहारदीवारी को लाँघकर कोई भी आसानी से अन्दर प्रवेश न कर सका था। बुक्क-राय ने अपने जमाने में ही सिंचाई की नहरें निकाली थीं। राजमहल के अंतपुर में तुंगभद्रा अठखेलियाँ कर रही थी। अन्तपुरों के सौन्दर्य व आकर्षण को उसकी सलिल धाराब ढ़ाती रही। जहाँ देखा, स्फटिक सरोवर, चहकती चिड़ियाँ, महकते फूल, तैरते राजहंस, नीर भरे तडाग, मोतियों-सी जलकणों को विखेरती फव्वारों, अविरल बहती धाराएँ, हरीतिमा की चादर ओढ़े खड़ी वाग, बगीचे कितने भव्य लगते थे?

इस महानगरी के सात परखोटे थे। इन परखोटों के बीच में महानगरी मीलों तक फैली पड़ी थी। पहले परखोटे की दीवार के बाहर खेत, खलिहान, बाग-बगीचे थे। दूसरा परखोटा सैनिक अड्डा था। यहीं पर सैनिकों का निवास स्थान, मकानें, आयुध शालाएँ, अश्वशाला, गजशाला आदि थीं। यहाँ पर अस्त्र-शस्त्रों को आवाज आठों पहर गूँजती रहेंगी। चौथे और पाँचवें परखोटे में नगर बसा था। जहाँ पर आम जनता रहा करती थी। यह सुव्यवस्थित व कलात्मक ढंग से निर्मित थी। इसके बाद वाजार था जहाँ व्यवसायी व वाणिक लोग रहा करते थे। इस स्थान का वर्णन करूँ तो आपको विश्वास न होगा। इस बाजार की कीर्ति सुदूर देशों तक फैली थी। विशाल भवन, मकानों की पक्तियाँ, सुन्दर मणिमण्डप ··· ओह! एक जमाना था। यहाँ पर हीरे, मोती तोल से विकते थे। चीन, अरब, योरप तक इसके व्यापार का केन्द्र था।

यहाँ का बाजार कितना आकर्षक था ? मोती, नवरत्न, प्रवाल, तौल से बिका करते थे। रेशम, जरी के कपड़े, फूलों के ढेर, सुगन्धित द्रव्य, चन्दन, कर्पूर, अंगरू आदि की महक ग्राहकों को मस्त कर देते थे। विशाल वीथियों पर मण्डलेश्वर, सेनापति, नायक, प्रभु लोगों के रथों की खड़खड़ाहट गूंजती रहती थी।

मैं अधिक कहना नहीं चाहती। इस साम्राज्य की धार्मिक नीति बड़ी महान् थी। यद्यपि सर्वधर्म समन्वयवाद की बुनियाद पर खड़ा होकर यह साम्राज्य जाति-भेदों को नहीं मानता था, विजातीय धर्म वालों को भी आश्रय दिया करता था, फिर भी पामिनी राज्य इसे अपना शत्रु मानता और इसे गिराने का मौका देख रहा था। फल क्या हुआ ? सीमाएँ बदलती गयीं। बार-बार युद्ध की भेरियाँ बज उठीं। वेनगंगा से कृष्णा के किनारे तक पामिनी ने अपनी सीमा बढ़ा ली थी। सबसे पहला युद्ध १३६६ में तुंगभद्रा के दक्षिणी किनारे पर हुआ।

श्रीकृष्ण देवराय १५०९ में विजय नगर के सिंहासन पर आरूढ़ हुए। देखने में वे सुन्दर नहीं थे। मझला कद था, मगर आकृति बड़ी भव्य व गम्भीर थी। वीरता, प्रतिभा, बुद्धि और ओज उनमें कूट-कूट कर भरा था। वे बड़े विद्या व कला-प्रेमी थे। इनके शासनकाल में विजयनगर विद्या-नगर कहा जाता था! हाँ, वज्र की कठोरता व फूल की कमनीय कोमलता इनमें थी। दूर-दूर तक विजय नगर की विजय पताका लहरा उठी। इन अभियानों और युद्धों के बीच में भी उसने राज्य की अच्छी व्यवस्था भी की।

साहित्यप्रेमी के नाते पंडितों, कवियों व नाटककारों का भी अभिनन्दन करता था। इसकी राजसभा 'अष्ट दिग्गजों' से सुशोभित थी। तेलगु भाषा के विकास में इसने बड़ा योग दिया। कवियों का आश्रयदाता ही नहीं, स्वयं कवि था। तेलगु में रचित इसके ग्रन्थ 'आमुक्त माल्यदा' को पढ़ने वाले इसके महान् व्यक्तित्व व आदर्श की झाँकी पा सकते हैं। इसकी शैली भी निराली थी।

हारे हुए शत्रु के प्रति दिखायी सहानुभूति व उदारता ही इसके पतन का कारण वना तो आश्चर्य कैसे ? इसकी आँखों में असाधारण प्रकाश व तेज था। इस महान् साम्राज्य निर्माता का पारिवारिक जीवन बहुत सुखी नहीं था। भाई अच्युत राय के षड्यंत्र, शालुव दिम्मरसु का द्रोह, अन्तःपुर के छल-प्रपच—ऐसी कितनी बातें उसके मानसिक शान्ति को भंग कर रही थीं। घरेलू झगड़े, मनमुटाव, परस्पर ईर्ष्या-द्वेष ने राजपरिवार की बरबादी कर दी।

पदवी का मोह, अधिकार लालसा—ये दोनों मानवीयता का कितना सत्यानाश करा देते हैं, मनुष्य को पशु से गये-बीते बना देते हैं ···· इसके साक्षी हैं टूटते साम्राज्य और बिखरी राजशक्ति। आज तक नृशंसतापूर्ण यही कृत्य मैं देखती आ रही हूँ। उन दिनों तीर और तलवार टकराते रहे और आज बिना तलवार व बन्दूक का युद्ध आठों पहर चलता रहता है। बिना खून बहाये चलते इस युद्ध में धर्म नहीं, अधर्म का हाथ ही ऊँचा रहता है।

कृष्णदेव राय का बेटा सदाशिव वयस्क नहीं था, इसलिए उसके नाम पर उनका दामाद अलिय राम राय ने शासन किया और इसके साथ-साथ इस देश का अन्त हो गया। पैतृक संपति के जैसे पदवियों को भी परंपरागत बना देने में जहाँ लाभ है वहाँ हानियाँ भी बहुत हैं। क्योंकि पदवी व अधिकार से युक्त अधिकारी लोग बड़े सत्ताधारी व स्वेछाचारी बन जाते हैं। विजयनगर साम्राज्य के पतन के कारणों में यह भी एक मुख्य कारण था।

तुंगा हम्बी में चट्टानों से होकर वह आती है न ? ऊँची-नीची होती हुई तेजी से उतर आती है और कहीं जोर से गिरती पड़ती प्रवाहित होती है। दोनों ओर के किनारे भी काफी ऊँचे व पथरीले हैं कि कृषि के काम के लिए पानी निकालना कठिन हो जाता है। अलावा बहा कर लाई मिट्टी के कारण उसकी सतह ऊँची हो जाने से बहाव में शिथिलता आ जाती है कि जलमार्ग बन न पाती। हम्बी

ढालू व गहरे गड्ढों से होकर बहती है। घूम-फिरकर बहने से कई टापू व द्वीप उठ खड़े हुए हैं। यहाँ पश्चिमी हवा चलती है, जिसे धूल की आँधी कहना ठीक होगा। इस सूखी हवा के कारण नदी तटों पर सूखे सिकता सागर के अलावा और कुछ न दीखेगा। होसपेट तालूका पूरा का पूरा पर्वतीय प्रदेश है। नागलापुरम्, होसपेट, कमलापुरम् · आदि का अतीत कितना उज्जवल था आज टिमटिमाते दीप-सी उनका प्रकाश मन्द पड़ गया। एकाध टूटे-फूटे खण्डहर और भग्न किलों के अलावा यहाँ कुछ भी नहीं बचा है।

हम्वी मन्दिरों की नगरी थी। संगम वंश के राजा, उनके पूर्वजों के बनाये मन्दिरों के अवशेष भी यहाँ पर हैं। मीलों के विस्तार में बिखरे हुए खण्डहर, छोटी-मोटी पहाड़ियाँ, टीले, टीलों पर खड़े मन्दिर, धूल-वर्षा-धूप व बारिश की थपेड़े खा-खाकर मलिन पड़े प्रस्तर खण्ड, शिला मूर्तियाँ, आपके मन को उदास बना देंगे। इन खण्डहरों में व्याप्त करुण रागिनी, छाये हुए सन्नाटे में कितना हृदय-वेधक है?

विरुपाक्ष का मन्दिर अपने ढंग का अनोखा है। इसकी ऊँचाई १६५ फुट है। गोपुर के आवरण पर सहस्रों मूर्तियाँ अंकित हैं। सारी हम्बी में यही सबसे बड़ा मन्दिर है। अनेक देवी-देवताओं की सुन्दर शिलाएँ आपका मन मोहित कर लेंगी। यह मन्दिर अति प्राचीन व पावन माना जाता है। इसकी बायीं ओर हेमकूट पर्वत है, जिसकी चोटी पर कई एक मन्दिर हैं। तुंगभद्रा के किनारे-किनारे चलेंगे तो अनेक दर्शनीय स्थल देखने को मिलेंगे। आस-पास में पम्पा क्षेत्र, विट्ठल क्षेत्र और राजमहल क्षेत्र आदि भी मुख्य हैं। लगभग नौ मील के विस्तार में ये खण्डहर बिखरे हुए हैं।

अध्याय : ८

इस महानगरी के सर्वनाश का कारण क्या था ··· तलैकाट का वह युद्ध कितना भयंकर था— यह जानना चाहें तो कृष्णा से पूछिए—

वह सजल आँखों से सारी कहानी सुनायेगी। हम्बी नगर का निर्माण सालों तक चला। कुशल शिल्पी और कलाकारों ने अपना सारा कौशल दिखाकर इस मन्दिर का निर्माण किया था। अथक कारीगरों के कड़े परिश्रम से सर्वश्रेष्ठ विट्ठल मन्दिर के बनवाने में तो पूरे ५० साल लगे थे। ओह ! मैं कितना कहूं – १५६४ के तलैकोट युद्ध के उपरान्त शत्रु सेनाओं ने इस नगरी का निर्मूल किया था ! यह विध्वंस-लीला सालों तक चलती रही। लूट-पाट, तोड़-फोड़ का शिकार बने हम्पी में खून की नदियाँ बह निकलीं। भयंकर मार-काट हुई। स्त्री, बच्चे, बूढ़े —किसी के प्रति दया न दिखायी गयी। सुदूर देशों पर जिसकी धाक जमी थी वह मिट्टी में मिला दी गयी।

किसी टीले के ऊपर खड़े होकर देखिये आज की भग्नावस्था में भी प्रकृति का सौन्दर्य रोमांचित कर देता है। सबल, पुष्ट हाथों के आलिंगन में पड़ी मदमस्त तन्वंगी-सी तुंगभद्रा मुग्धा नायिका बनी धीमी गति भरती है। ··· आगे करनूल जिला है। इस जिले में सुनकेसुला नामक स्थान पर बाँध से जो नहरें निकाली गयी हैं, वे ही कडप्पा, करनूल नहर कहे जाते हैं। यह करनूल, नन्दिकोटकूर, नन्दियाल, श्री वेल, कोईल कुण्डला आदि तालूकों से होकर बहती है। तुंगभद्रा के बाँध से आलूर, आदोनी, पट्टिकोण्डा, करनूल तालूके फायदे उठाते हैं। ९२७५ वर्ग मील विस्तार के इस जिले में कुल ११ तालूके हैं। बाँध के पहले तुंगभद्रा का प्रवाह काफी तेज है। कड़ी उतारों में पूरे वेग से लहरा आती है। समुद्र तल से १००० फुट ऊँचाई से ७३० फुट तक उतर जाती है। इस जिले की उत्तरी सीमा बनी तुंगभद्रा से हूनड्री आ मिलती है। इन दोनों के मध्य में है करनूल नगर। १९५३ में जब राज्यों की सीमाओं का पुनर्निर्माण हुआ, बेल्लारी जिले से आदोनी और आलूर इस जिले को बदल दिये गये।

गरमी के दिनों में तुंगभद्रा तथा हूनड्री में अधिक पानी नहीं रहता। इसलिए नदी के सूखे पाट पर तरकारियाँ उगाते हैं। उपजाऊ

मिट्टी के कारण खूब फल मिलता है। इस जिले की एक और नदी है कणडेरु। एरामलै श्रेणी के पश्चिमी हिस्से पर उत्पन्न होकर मैदान में बहती यह नदी कडप्पा जिले में कमलापुर के निकट 'पेण्णै' में मिलती है।

नल्लमलै श्रेणी में उत्पन्न होनेवाली गुण्डलकम्मा, संकरी कम्पम घाटी से गुजरती है। कम्बम तालूके में इस पर एक बाँध बना है। इसके आगे उत्तर की तरफ बहती यह 'मार्कपुर' के जरिये करीब ४० मील चलकर 'मुममुडिवरम्' के पास इस जिले को छोड़ती है। आगे पूरब की तरफ मुड़कर थोड़ी दूर बहने के उपरान्त दक्षिणमुखी बने गुण्टूर जिले में 'मो डुपल्ले' के पास समुद्र में संगमित हो जाती है।

इस जिले में तुंगभद्रा के किनारे पर श्री राघवेन्द्र स्वामी का मठालय, मंत्रालय है। मह्व सम्प्रदाय वालों के लिए यह पुनीत क्षेत्र है। राघवेन्द्र बड़े तपस्वी और ज्ञानी थे। उन्होंने अपनी यौगिक शक्ति द्वारा अद्भुत् करामातें की थीं। यहाँ पर हमेशा यात्रियों की भीड़ लगी रहती है। श्रीमठ और अम्बिका का आलय बड़ा भव्य व गम्भीर है।

इसी जिले में और कई पुण्यस्थल हैं। श्रीचैलम्, अकोबिलम्, महानन्दी, योकुन्दा जैसे पुण्यधाम अति प्राचीनकाल से मानव-मन को अपनी ओर खींचते रहते हैं। सारे भारत के कोने-कोने में व्याप्त पुण्यधाम यात्रियों को निरन्तर प्रेरणा देते रहते हैं। अगम्य पहाड़ हो, दुर्गम पर्वत हो या गुफाएँ—मानव असह्य कष्टों को झेलता हुआ उस अज्ञात शक्ति द्वारा आकर्षित किया जाता है। हाँ, प्रकृति की वनश्री, हम नदियों का सौन्दर्य, हमारे शीतल जल-प्रवाह का स्पर्श, झरते हुए झरनों के जलकण यात्रियों के मन को असीम शान्त बना देते रहते हैं न ?

इस जिले की उत्तरी सीमा बनी कृष्णा बहती है। कृष्णा की कुल लम्बाई ८७० मील है न ? इसमें ३८० मील आन्ध्र प्रदेश में बहती

है और इस भू-भाग के तीन में एक हिस्से को सिंचित करती है। अलावा, इस प्रदेश के अधिकांश हिस्से दो-दो नदियों के डेल्टा प्रदेश होने से समृद्ध हैं। यह उद्योगपतियों और व्यापारियों के आकर्षण का एक बड़ा कारण है। जल की सुविधा, विद्युत शक्ति, कच्चा माल आदि की सुविधा के कारण बड़े-बड़े उद्योग-धन्धे यहाँ पर चलते हैं।

आन्ध्र के लोग बड़े स्वस्थ और हट्टे-कट्टे शरीर वाले हैं। इनकी आकृति व डीलडौल गम्भीर है। स्वभाव से स्वतन्त्रताप्रिय हैं। हाँ, जरा जोशीले व गरम हैं। बहुत शीघ्र ही भावावेश में आ जाएँगे। धार्मिक सहिष्णुता होते हुए भी अपने प्रान्त व भाषा के प्रति बड़ा मोह है, जो कभी-कभी खतरे की घंटी बजा देती है। इनका जीवन बड़ा सीधा-सादा व सरल है। इनकी भाषा तेलगु है जो बड़ी मीठी है। कर्नाटक संगीत के महान् संगीतज्ञों ने तेलगु में अमर कीर्तनों की रचना की है। भक्त त्यागराज को कौन भूल सकेगा ?

महबूब नगर जिले के बीच में बहती हुई कृष्णा आलमपुर में पहुँचती है। तुंगभद्रा को गले लगाकर कृष्णा सर्पाकार गति से 'नल्ल-मलै' पहाड़ों पर बह आती है। सँकरी, गहरी घाटियों में करारी ढालों पर जोश-खरोश के साथ उमड़कर आती है। करनूल के उत्तरी हिस्से में बहती यह श्रीचैलम् क्षेत्र में आ जाती है। नल्लमलै पहाड़ी शृङ्खला करीब ७० मील तक व्याप्त है। इस श्रेणी का विस्तार बड़ा प्यारा लगेगा। इसमें कई दर्रे हैं। करनूल शहर से अठारह मीलों पर 'कूडली' में तुंगभद्रा को प्यार से समेटने वाली कृष्णा 'पावनाशी' के जलदान को भी स्नेहपूरित मन से ग्रहण करती है। इसके एक किनारे पर करनूल जिला, दूसरे किनारे पर महबूब नगर जिला है।

करनूल जिले के नन्दिकोटपुर तालूका के पूरबी हिस्से पर नल्लमलै पहाड़ियों पर आच्छादित घनी वनस्थलियों की गोद में शान्त व गंभीर बने श्रीचैलम् खड़ा है। इसे दक्षिण कैलाश कहते हैं। 'डोरनाल' से तीस मील रेलमार्ग से सफर करके, पाँच ऊँचे टीलों को पार करके

इस पुण्य स्थल पर पहुँचना होगा। यात्रा कठिन है, मगर श्रीचैलम् का सौन्दर्य बड़ा मनोरम है। पौराणिक काल से इस क्षेत्र का बड़ा महत्व है। पुराने जमाने में ये पर्वत, अलंघनीय व दुर्गम माने जाने के कारण इस निर्जन प्रदेश की यात्रा करने का साहस कम लोगों को था। चारों तरफ पहाड़ियों से घिरा यह स्थल मौन तपस्वी-सा गंभीर है। सर्पीली सड़कें पहाड़ियों को घेरती हुई, पहाड़ी ढलानों व घने जंगलों के विस्तार में फैली पड़ी हैं। सड़क के एक तरफ भयंकर, डरावने गड्ढे, पथरीली चढ़ाई और उतारें आपको त्रस्त करा देंगी। असंख्य मोड़ों को सावधानी से पार करते हुए आगे बढ़ना होगा।

बादलों से ढँके हुए शिखर, सिर तानकर खड़ी वृक्षावलियाँ, सघन कुंजों से मन्द-मन्द चलती सुगन्धित हवा के झोंके, ·· बस ··· स्वर्गीय अनुभूति आपको घेर लेगी। श्रीचैलम् पर पहुँचने के पहले ही आप आत्मविस्मृत दशा में पहुँच जायें तो आश्चर्य नहीं। हाँ ! दूर से मन्दिर का उन्नत गोपुर आपका स्वागत करेगा।

यहाँ पर कृष्णा 'पाताल गंगा' बनी है। ऊपर से देखते वक्त सलिल धारा निश्चल जलाशय-सा दीख पड़ेगा। आजकल इसकी धारा पर बाँध, जलाशय आदि बने हैं। विद्युत उत्पादन भी हो रहा है। यहाँ पर आनेवाली स्त्रियाँ सूप में काली मणियाँ, फूल और चोली का कपड़ा आदि रखकर कृष्णा की पूजा करके चढ़ाती हैं। इसकी धारा तक उतरने के लिये सीढ़ियाँ हैं। इस क्षेत्र को कृष्णा उत्तर, पश्चिम और पूरब दिशाओं में घेरती चलती है। सारा वातावरण नितान्त मधुर है। ध्यान व पूजा के लिये यह एकान्त स्थान बड़ा उपयुक्त है। मन्दिर के पूरब की तरफ तीन मील पर पहाड़ी रास्ते में से १००० सीढ़ियाँ उतरें, तभी कृष्णा में स्नान कर सकते हैं। विशाल झील-सी लगती कृष्णा में भक्त लोग गोता लगाये बिना नहीं रहते।

पुराणों में नल्लमलै पहाड़ियों को आदिशेष, तिरुपति पहाड़ियों

को उसके सात सिर, आकोबिल को आदिशेष का शरीर और श्रीचैलम् को पूंछ के रूप में वर्णित किया गया है। बारह ज्योतिर्लिंगों में एक 'महालिंगम्' श्रीचैलनाथ के रूप में यहाँ पर प्रतिष्ठित है न ?' शिवरात्रि का उत्सव यहाँ बड़े कोलाहल से मनाया जाता है। भगवान् महालिंगनाथ और देवी भ्रमराम्बिका का दर्शन करने यात्री-गण आते ही रहते हैं। यहाँ पर जो चाहे भगवान् की पूजा व आराधना अपने हाथों से कर सकते हैं। हाँ, यह देवी के शक्तिपीठों में एक है।

एक जमाने में यह बौद्धों का पवित्र क्षेत्र था। नागार्जुन बहुत समय तक इन्हीं पहाड़ियों पर तपस्या करते थे। इन पहाड़ों पर रहने वाले पहाड़ी जाति के लोग 'चेञ्जु' कहे जाते हैं। उनके लिये भगवान् मल्लिकार्जुन ही आराध्य देव थे। वीरशैव संप्रदाय वालों के लिये भी यही मुख्य पुण्यस्थली है। विजयनगर के राजाओं द्वारा निर्मित इस देवालय की कई राजा, महाराजाओं ने मरम्मतें की हैं। शिवाजी का बनाया गोपुर आज भी कितनी गम्भीरता से खड़ा है ?

श्रीचैलम् के आगे कृष्णा के बाएँ तट पर आ मिलनेवाली नदियों में दिण्डी, पेद्धवागु, हलिया, मूसी आदि मुख्य हैं। कृष्णा के बाएँ तट पर महबूब नगर के आगे नलकोण्डा और कृष्णा जिले हैं। दाएँ किनारे पर करनूल और गुण्टूर जिले हैं। नलकोण्डा जिले को 'नील पर्वत' भी कहा करते हैं। आन्ध्रों ने अपने महान् साम्राज्य को यहाँ संस्थापित किया था। पाणिनि सुलतान के पतन के उपरान्त वरंगल नरेशों ने इसे अपने कब्जे में ले लिया था। आज यहाँ खण्डहरों के रूप में खड़े दुर्ग, किले व राजमहल से इसकी महान् अतीत की कल्पना कर सकते हैं। इस जिले में मूसी और कृष्णा ही मुख्य नदियाँ हैं। कृष्णा, देवर-कोण्डा, मिरियाकुडा, हसूर तालुकाओं से होकर बहती है। मूसी लम्बी यात्रा के बाद मिरियालकुडा तालुके में, बाडपली गाँव में कृष्णा से भेंट करती है।

प्रसिद्ध हैदराबाद नगर 'मूसी' के किनारे पर है। गुण्टूर जिले की उत्तर-पूरबी सीमा बनी बहती कृष्णा के तट पर एक जमाने में विद्या व कला का केन्द्र एल्लेश्वरम्, विजयपुरी, अमरावती, नागार्जुनकोंडा आदि अपनी विजय पताका फहरा रहे थे। आज नलकोण्डा जिले में इसके ऊपर बने 'नागार्जुन बाँध' की बड़ी धूम मची है। 'अमरावती' तो गुण्टूर से ३२ कि० मीटर की दूरी पर, साधनपल्ली गाँव के पास है। आज भी यहाँ की अद्भुत् शिल्पकला और अनूठी पाषाण प्रतिमाएँ प्रस्तर खण्डों पर उत्कीर्ण बेलबूटे, अमरेश्वर का मन्दिर, कला-रसिकों और पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। महायान बुद्ध और शैव संप्रदाय वाले दोनों के लिए यह क्षेत्र पुनीत है। अमरेश्वर की लिंगमूर्ति पन्द्रह फुट ऊँची है। यही नहीं, पश्चिम व पूरब की तरफ बहती कृष्णा यहाँ उत्तर व दक्षिण की ओर मुड़ जाती है। यहाँ पर स्नान करने भक्त लोग आते हैं। कृष्णा के बाएँ तट पर मन्दिर है। विजयवाड़ा से लोग नौकाओं में यहाँ आते हैं।

नागार्जुनकोण्डा गुण्टूर जिले के दक्षिण तट पर है। इसका पुराना नाम था विजपुरी। पलनाडू तालूके में स्थित यह नगरी इक्ष्वाकु नरेशों के शासन काल में सर्वोन्नत दशा में थी। बौद्ध धर्म अपने चरमोन्नति पर था। बड़े-बड़े याक यज्ञों से यह मिट्टी पवित्र बनी है। महायान संप्रदाय में शून्यवाद सिद्धान्त के प्रणेता के रू में इनका नाम अमर है। महायान में मूर्तिपूजा और कर्मकाण्ड का स्थान था, इसलिए आन्ध्र प्रदेश में इसका प्रचार तीव्रता से बढ़ा। कई स्थानों पर विहार, मठालय व भव्य स्तूपों का निर्माण हुआ, जिनमें कुशल कारीगरों ने अपनी अद्भुत् प्रतिभा का परिचय दिया। राजधानी विजपुरी में नागार्जुन के लिए सुन्दर विहार बना। महान् दार्शनिक व तत्त्वज्ञानी के नाते नागार्जुन की कीर्ति दूर-दूर तक फैली थी। चीन, सिंहल जैसे सुदूर देशों से भी इनका उपदेश सुनने, भिक्षु व श्रमण आया करते थे।

आजकल १९२६ से यह प्राचीन नगरी पुरातत्व अन्वेशकों के लिए गुप्त भण्डार बनी है। चारों ओर टीलों से घिरी सुरम्य घाटी में बसी इस नट नगरी को आप कहाँ देख पाते हैं ? समतल घाटी में निर्मित विजयपुरी को सातवाहनों की राजधानी बनने का भाग्य मिला था। मौर्य सम्राट् द्वारा भिक्षु महादेव ने बौद्ध धर्म के प्रचारक के रूप में यहाँ पदार्पण किया था। उन्होंने बौद्ध धर्म का प्रचार किया। इसके ४०० साल बाद में आये सातवाहनों ने इस धर्म का राजाश्रय प्रदान किया। हूं ··· इस नगरी की कथा बड़ी लम्बी है। काल के तीव्र बहाव में सब कुछ बह गया। चहल-पहल से भरी नगरी में श्मशान-सी निस्तब्धता छा गई। यहाँ से १४ मील पर बसी 'माचलेरा' का भाग्य खुल गया। वैभव और पराभव का खेल कितना विचित्र है ?

चेञ्चु पहाड़ी जाति वालों की बस्तियाँ, लम्बाडियों के डेरे, इधर-उधर एकाध झोपड़ों के अलावा यहाँ की नीरवता भयंकर है। हरे-भरे वृक्ष, ऊँचे-ऊँचे पेड़, घनी झाड़ियाँ, छोटे-मोटे हाथी जैसे टीले व शैलखड, काव्यमय सौन्दर्य है यहाँ। इन्हीं से होकर अशांत कृष्णा बल खाती हुई आती है। कहीं-कहीं इसमें अधिक गहराई है। कहीं-कहीं पाषाणखंडों से टकराने से घोर आवाज मचाती है ··· अगर सुनने का कान हो तो कृष्णा इस महानगरी की अतीत की गाथा जो सुनाती है उसे सुन सकते हैं। इस नगरी के स्वर्णयुग को कृष्णा ने देखा है न ? इसके घाट पर हमेशा कोलाहल मचा रहता है। नाविक और वणिकों की भीड़-सी लग जाती है। पीतवस्त्रधारी श्रमण और भिक्षु तथागतों के नाम से गलियाँ गूँजती रहेंगी। बौद्ध विहार व चैत्यों से मंत्रों की गंभीर ध्वनि सारे वायुमण्डल को निनादित करती रहेंगी। ··· फिर तो एकदम सब कुछ बदल गया ···। रात के अन्धकार के बीच झींगुरों की झनकार के अलावा यहाँ और कुछ सुनाई नहीं देता ··· ऐसी निस्तब्धता छा गयी। दिन में लोग इधर आने से डरते थे। सारा शहर उजड़ गया। लोगों की चहल-पहल

के बदले उल्लू बोलते रहे। भारी मन लिये कृष्णा सरपट दौड़ती रही ··· जैसे उन भग्नावशेषों को, टूटे-फूटे खंडहरों को, छिन्न-भिन्न शिल्पमूर्तियों को देखने का उसे साहस ही न हो।

लेकिन···आज ! फिर से काल का चक्र घूम गया। २७५० एकड़ विस्तार का वह पुरातन नागार्जुन कोण्डा अतल जल में डूब गया है। आपको विश्वास न आया हो ? दुखी कृष्णा ने उस महानगरी को अपनी कोख में ले लिया है।

नन्दिकोण्डा बाँध के कारण कृष्णा की सतह इतनी ऊपर उठ गयी कि सारी घाटी पानी के अन्दर आ गयी। उस महान् अतीत के अनमोल, अप्रतिम शिल्प व मूर्तियों की उस अद्भुत् कारीगरी को आप लोग देखें, इस ख्याल से उस कला के भंडार के अनमोल रत्नों को लुटने न दिया– उल्टे आज के नागार्जुन सागर के बीच में स्थित सुन्दर, प्राकृतिक टापू में 'म्यूजियम' में सँजोकर रखा है। इस टापू में प्राचीन दुर्ग और एकाध देवालय भी हैं। पर्यटक स्टीम लाज में यहाँ आते हैं। खुदाई के द्वारा जो शिल्प व मूर्तियाँ मिलीं, उन्हें भी यहाँ पर रखा गया है। कौन जाने ? भूमाता के गर्भ में और कितनी अमूल्य निधियाँ दबी पड़ी हैं।

नलकोण्डा जिले के देवरकोण्डा तालूका में स्थित 'एल्लेश्वरम्' भी ऐतिहासिक महत्व रखता है। कृष्णा के बाएँ किनारे पर नागार्जुन बाँध के पीछे, नागार्जुन कोण्डा ठीक सामने की तरफ के किनारे पर 'एल्लेश्वरम्' है। प्रशान्त वातावरण में, पर्वतों की तलहटी में बिछी हुई यह उपत्यका बड़ी प्यारी लगती है। यहाँ पर एलेश्वर स्वामी का एक मन्दिर है। यहाँ पर कृष्णा का प्रवाह बड़ी वेगवती और गहरा है। पानी में उतरें तो मगर-मच्छों का डर है। चक्राकार घूमती भँवरे निकालती ··· कृष्णा ने रौद्र रूप धारण कर लिया है। बाँध निर्माण के लिए यह स्थान बिलकुल उपयुक्त होने से यहाँ पर निर्माण कार्य शुरू कर दिया गया था। दोनों तरफ प्रस्तर दीवारों-सी ऊँचे

टीले खड़े हैं। बीच में अथाह गड्ढा-सी घाटी जलाशय के लिए उपयुक्त है। कृष्णा का जलग्रहण क्षेत्र १५,०५० वर्गमील है।

१९०३ में पुलिचिण्डा घाटी योजना तैयार हुई। सिद्धेश्वर और नन्दिकोण्डा में बाँध बने हैं। कहते हैं नागार्जुन सागर बाँध सारे भारत में सबसे बड़ा व लम्बा है। जलाशय का विस्तार ११० वर्ग-मील है। नागार्जुन ने एक तत्व का अन्वेषण करके मानव समुदाय के अत्योन्नति का पथ-प्रदर्शन किया था। आज के मानव ने अपनी बुद्धि व प्रतिभा के बल पर मानव समुदाय की आत्मिक उन्नति के पथ का निर्माण करता जा रहा है। नागार्जुन कोण्डा की घाटी से, जहाँ कृष्णा समतल मैदान की ओर उमड़कर आती है, वहीं पर बाँध का निर्माण हुआ है। बड़े-बड़े यंत्रों, विदेशी स्टर्लिंगों से इसका निर्माण नहीं हुआ है, केवल मानव के परिश्रम व मेहनत के बल पर स्वदेशी चीजों की सहायता लेकर नवीन भगीरथों ने इसका निर्माण किया हैं। बाँध के कारण केवल वनप्रान्त और टीले ज्यादातर डुबोये गये हैं, अठारह गाँव ही विस्थापित हुए हैं।

इसके दाएँ तरफ के नहर को नहर कहना कैसे? इसे मानव-निर्मित नदी कहना ही उपयुक्त है। इसकी लम्बाई २७६ मील है। इसमें से कई शाखाएँ-प्रशाखाएँ निकाली गयी हैं। गुण्टूर, करनूल, नेलूर जिले तक पहुँचती ये नहरें पेण्णै के ऊपरी हिस्से पर उससे मिलती हैं तो आप ही इसके विस्तार की कल्पना कीजिए। इसकी चौड़ाई २५० फुट है। गहरी १५ फुट है। बाएँ तरफ से नहर १४० मील बहने के उपरान्त 'कट्टेरु' में मिलती है। लगभग ४० मील की दूरी तक यह मूसी नदी के समानान्तर बहती है। हलिया, मूसी, पालेरु, मुन्नेरु जैसे नदियों को यह नहर पार करती हुई आगे बढ़ती है। 'पालियार झील' को जल का दान देकर फिर वहाँ से आगे की यात्रा शुरू कर देती है। नलकोण्डा, कम्मम, कृष्णा जिलों का सिंचन इसी नहर द्वारा होता है।

लहरें मारती नागार्जुन सागर को 'सागर' कहना बिलकुल संगत है। सुनील आकाश ही धरती पर उतर आया हो ··· जहाँ तक दृष्टि जाए, सुरम्य नीलिमा बिछी हुई है। प्रकृति के इस विराट सौन्दर्य के सम्मुख मानव मूक हो जाता है।

'गुण्टूर' जिले के आगे कृष्णा 'जग्गमपेट' तालूके में आती है। यहाँ के मुक्तेश्वर आलय बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ पर वह 'उत्तरवाहिनी' है। कृष्णा इसके आगे 'कृष्णा जिले' में आती है। अंग्रेजों के जमाने में इसे मछलीपट्टण जिला कहा करते थे। १८५९ में यह कृष्णा जिला कहा गया। १९२५ में पश्चिम गोदावरी जिला इससे अलग किया गया तो 'कृष्णा जिले' के नाम पर एक अलग जिला का रूप दिया गया। इस जिले के उत्तर में कम्मम, पश्चिम में गोदावरी जिले, दक्षिण और पूरब की तरफ बेग सागर और कृष्णा नदी इसकी सीमाएँ हैं। इसका क्षेत्रफल ३४९६ वर्ग मील है। विजयवाड़ा, नन्दिगामा, तिरुवूर, नूसवीडू, ज्ञानवरम्, गुडिवाडा, कैकालूर, बन्दर, दिवि आदि नौ तालूके कृष्णा जिले के अन्तर्गत हैं। कोण्डपल्ली तथा जामलवल्ली पहाड़ी मालाएँ उल्लेखनीय हैं। तामिलेरु, बूटमेरु, उप्पतूरु, नक्कवागु जैसी छोटी नदियाँ इस जिले में बहती हैं।

इस जिले का ज्यादातर भू-भाग डेल्टा प्रदेश है। इसलिये काफी उपजाऊ व समृद्ध है। धान का फसल खूब होता है। कृष्णा घाटी योजना के फलस्वरूप इस जिले में ४६,००० एकड़, गुण्टूर में ७१,००० एकड़ जमीन को सिंचाई की सुविधा मिलती है। अलावा, ये नहरें अच्छे जलमार्ग बने हैं। तटवर्ती व्यापार व यातायात के लिये ये सुविधाजनक है। दिवि, नन्दिगामा, तिरुवूर तालूकाओं के लिये रेलवे नहीं है। कृष्णा के तट पर विजयवाड़ा ही सबसे प्रधान शहर है। कृष्णा के पूर्वी डेल्टा प्रदेश में दिवि, गुडिवाडा, कारकालूर, विजयवाड़ा का एक हिस्सा, ज्ञानावरम् तालूके आदि हैं। नागार्जुन सागर की योजना के कारण बिजली की सुविधा और यथेष्ट पानी

मिलने के बावजूद आगे विजयवाड़ा औद्योगिक शहर बन जाए तो भी आश्चर्य की बात नहीं। विजयवाड़ा का उन दिनों में, विजय वाटिका, बेजवाड़ा, कनक प्रभा, विजय वडिका आदि कई नाम थे।

कृष्णा उतराई में पूरे वेग से लहरा आती है न ? एकाएक दुर्ग के प्राचीरों जैसे खड़े टीलों को सामने पाकर हत्प्रभ-सी हो जाती है। ऊँचाई से आने के कारण वह अपने को रोक नहीं पाती है। मस्त हथिनी-सी चट्टानों को बेधकर निकल जाती है। मन ही मन मुग्ध होते हुए प्रस्तर खंड उसके सम्मुख नतशिर हो जाते हैं। कृष्णा यहाँ से आगे ४५ मील पर सागर में संगमित होती है। पल भर ठिठककर कृष्णा अपने प्रिय से मिलने उतावली होकर उन्मत्ता-सी भागती है। मिलन की उत्कंठा ने शायद उसके हृदय में मधुर भावना की लहरें उठा दिया हो।

चिरकाल से विजयवाड़ा महत्वपूर्ण नगरी बनी रही है। कृष्णा अपने बहाव में अमूल्य जड़ी-बूटियों को बहाकर लाती है। वे इन टीलों में रह जाते हैं और उपत्यका अमूल्य जड़ी-बूटियों का भंडार बना रहता है इसीलिये इसका नाम 'बीजवाड़ा' भी पड़ा है। चारों ओर व्याप्त पहाड़ों के कई नाम हैं। इनमें इन्द्रकील पर्वत पर 'कनक-दुर्गा' का मन्दिर है। टीले की तलहटी में भ्रमराम्बिका, मल्लेश्वर स्वामी के मन्दिर हैं। इस नगर को 'मन्दिरों की स्वर्णनगरी' कहना ठीक होगा। असंख्य मन्दिर व देवालय सारे नगर में बिखरे पड़े हैं। यहाँ पर कृष्णा में डुबकी लगाने, मन्दिरों में दर्शन करने साल भर यात्रियों की टोली आती रहती है।

बारह सालों में एक बार जब गुरु कन्या राशि में आता है तब 'पुष्कर का मेला' लगता है। बारह दिनों तक चलते इस मेले में ऐसी भीड़ रहेगी कि तिल रखने को जगह नहीं। आधुनिक ढंग से बने उप-नगरों का विकास होता जा रहा है। यह नगरी समुद्र तट से ४७ मील पर है, मगर कृष्णा घूमती-फिरती ६० मील की दौड़ लगाती

है। विजयवाड़ा के आगे ४० मील पर 'पुलिकट्टा' के निकट दो शाखाओं में बँटने के पहले विजयवाड़ा बाँध से कई नहरें निकाली गयी हैं जो कृष्णा के दाएँ तटवर्ती प्रदेशों का सिंचन करती हैं। विजयवाड़ा में प्रवेश करने के पहले दोनों तरफ के पहाड़ों के बीच में जो १३०० गज के अन्तराल हैं, उसी में वह बह आती है। यहाँ पर इसका दृश्य बड़ा मनोहर है। उदय की बेला और अस्तगामी सूर्य की रश्मियाँ जब इसके ऊपर पड़ती हैं, सारा परिवेश स्वर्गीय दीखेगा।

पुलिकट्टा तक कृष्णा एक ही धारा बनी बहती है और यहाँ पर दो धाराओं में बँटकर 'दिवि' ताल्लूके को जन्म देती है। दिवि एक छोटा-सा ढेऊनुमा टापू है। इसके आगे एक शाखा बीस मील बहकर 'दिवि पाइन्ट' नामक स्थान पर समुद्र में मिलती है। यह तो कृष्णा की बायीं तरफ की शाखा है। मगर कृष्णा आगे और १५ मील बढ़कर तीन शाखाओं में विभाजित होकर अलग-अलग मुहानों पर समुद्र में गिरती है। इनको क्रमशः नरसकुण्डा कृष्णा, लकाबननंची कृष्णा, वेणीसागर कृष्णा कहते हैं। इन तीनों मुहानों के मध्य में जो टापू व ढेऊ हैं उनमें घने वन आच्छादित हैं।

मछलीपट्टणम् का बन्दरगाह एक जमाने में सुप्रसिद्ध था न? १७वीं सदी में यूरोपीय व्यापारियों ने यहाँ पर अपने अड्डे जमा लिये थे। उनकी आपसी स्पर्धा, होड़ और परस्पर संघर्ष को भूल नहीं पाती हूँ। कृष्णा ने उनकी पूरी कहानी मुझे सुनायी है। डच, फ्रांसीसी व्यापारियों ने अपने लिए यहाँ किले बनवा लिये थे। औरंगजेब के सेनापति ने उन्हें भगाकर इस बन्दरगाह को अपने वश में ले लिया और कृष्णा जिले में मिला लिया था। १६९० में औरंगजेब की अनुमति लेकर कंपनी ने यहाँ फिर से किलेबन्दी कर ली। लेकिन १७५० में निजाम ने इसे फ्रांसीसियों के हाथों सौंप दिया। कंपनी वाले यहाँ से भगा दिये गये। फिर क्या? बंगाल से कंपनी की बड़ी सेना चढ़ आयी और १७५९ में इसे अपने अधीन कर लिया।

इस देश में आये विदेशियों में, समुद्रतटीय प्रदेशों को हथियाकर उस पर अपना अधिकार जमानेवालों में फ्रांसीसी ही सबसे आगे रहे। फ्रांसीसी सेनापति बुस्सी ने आंध्र प्रदेश की राजनीति में खूब दाँव-पेंच लड़ायी। आंध्र के इतिहासकार उसे भूल न पाएँगे। वहाँ के छोटे-मोटे नरेशों को आपस में लड़ाता हुआ अपनी चतुर कूटनीति के बल पर उसने विजय पा लिया। मछलीपट्टणम् प्रधान बन्दरगाह रहा। यहाँ से रेशम, सूत के कपड़े, सुगन्धित द्रव्य और तरह-तरह के माल सुदूर प्राच्य देशों के लिये भेजे जाते थे। जब से कंपनी माल का आयात करने लगी और देशी उद्योग-धन्धे चौपट कर दिये गये, इस बन्दरगाह का मुख्यत्व जाता रहा। १८६४ के समुद्री बवंडर में इसका सर्वनाश हो गया।

जहाँ पर मैं सागर में मिलती हूं वहाँ से कृष्णा का संगमस्थल ८० मील की दूरी पर है। हम दोनों ही महाराष्ट्र राज्य में उत्पन्न होकर इतनी दूर दौड़ी आती हैं। कृष्णा की लम्बाई १४०० कि०मी० और मेरी १४६५ कि०मी० है। उद्‌गम-स्थान के जैसे हमारा संगम-स्थान भी बड़ा खामोश और शान्त है। महत्वपूर्ण लक्ष्य के लिये हम नदियाँ अपने सपनों को सत्य व साकार बनाने में अपने को न्यौछावर कर देती हैं।

मेरा देश, मेरे सन्तान सुखी व समृद्ध रहें—यह हमारे जीवन का ध्येय है। अन्तिम क्षण तक अपने कर्तव्य को निभाते हुए हम बड़ी शान्ति के साथ समुद्रदेव के आलिंगन में एकाकार हो जाती हैं।

अध्याय : ६

इस आन्ध्र प्रदेश में हम दोनों के अलावा एक और नदी बहती है, वह हमारी उपनदी नहीं। हम जैसे वह भी एक जीवदायिनी स्वतंत्र नदी है। उसका नाम है पिनाकिनी। उसे 'वड पेण्णै' कहते

हैं। इसकी बहन 'तेन पेण्णै' तमिलनाडु की नदी है, जो बंग सागर में मिलती है और यह आन्ध्र प्रदेश में प्रवाहित होकर बंग सागर में मिलती है।

समुद्री तल से ४८५१ फुट की ऊँचाई पर स्थित नन्दी दुर्ग पर्वत श्रेणी का उत्तरी हिस्सा इसका उद्‌गम-स्थान है। यह पहाड़ीमाला कोलार, बेंगलूर जिले में व्याप्त है। इस श्रृंखला से सप्तनदियाँ उत्पन्न होती हैं। इन श्रृंखला में चेन्नकेसव शिखर से वडपेण्णै उत्पन्न होती है। इसकी कुल लम्बाई ३५६ मील है। यह मनचेन्नहल्ली समतल घाटी से होकर 'गोरी बिटनूर' तक आती है। इसके उपरान्त हिन्दपुर तालूके के दक्षिण कोने से होकर अनन्तपुर जिले में प्रवेश करके 'पेनुकोण्डा' पहुँचती है।

विजयनगर राजाओं के शासनकाल में पेनुकोण्डा सर्वोन्नत दशा में था। यहाँ का दुर्ग सामरिक महत्व रखता था। इसमें से कई नहरें निकाली गयीं और सारे शहर में जाल-सी फैलकर नगर निवासियों को जल दिया करती थीं। यहाँ पर 'उट्टगुरु' के निकट 'जयमंगली' नाम की छोटी नदी इसको अपना पानी देती है। जयमंगली और वडपेण्णै का संगम पुनीत माना जाता है। यहाँ पर स्नान करने यात्री गण आते हैं।

आगे के मार्ग पर पेण्णै उत्तरमुखी होकर कल्याण दुर्ग तालूके, धर्मावरम्, अनन्तपुर तालूके आदि के पश्चिमी कोने के जरिये करीब ८० मील बह आती है। 'कूडी' तालूके में 'पेन्नगोमल' के पास यह एकाएक मुड़कर पूरबमुखी हो जाती है। कूडी, ताडपत्री तालूके के जरिये ५० मील चलती इस नदी के किनारे पर कई मुख्य शहर हैं। 'पानिडि' और 'ताडपत्री' उल्लेखनीय हैं। अनन्तपुर जिले के उत्तर में करनूल, दक्षिण और पश्चिम में मैसूर और बेल्लारी, पूरब में कडप्पा आदि सीमा बनी हैं। अनन्तपुर, मटकासिरा, कदरी, कूडी, हिन्दपुर, पेनुकोण्डा, कल्याण दुर्ग, धर्मावरम्, ताडपत्री, राय दुर्ग,

उरवकोण्डा आदि ११ तालूके इसके अन्तर्गत हैं। इसका विस्तार ७८३७ वर्गमील है। यह बड़ा उपजाऊ जिला है। वडपेण्णै और चित्रावती इस जिले की मुख्य नदियाँ हैं।

पेनुकोण्डा का दुर्ग ३०० फुट ऊँचाई के पहाड़ी पर है। पेनुकोण्डा शहर इस पहाड़ी की तलहटी मे स्थित है। इस दुर्ग की दीवारें बड़ी मजबूत हैं। पहाड़ पर एक बड़ा जलाशय है, जिसके कारण दुर्ग में पानी का कोई अभाव नहीं। पुरानी इमारतें, भव्य भवन, मण्डप, किले आदि पहाड़ के ऊपर तथा उसके उतारों पर आज भग्नावशेष के रूप में दिखाई देंगे। पहाड़ पर खड़े होकर देखें तो दूर-दूर तक हरे-भरे खेत और हरीतिमा से ढँके बाग-बगीचे दिखाई देंगे।

बुक्कराय ने इसे अपने राजकुमार के लिए बनवाया था। उस दिन से लेकर पेनुकोण्डा का यह दुर्ग शाही युवराजों का निवास-स्थान बना रहता था। कृष्णदेव राय थोड़े समय तक यहाँ रहे। विजयनगर साम्राज्य के पतन के कारणभूत, उसे भयंकर युद्ध के उपरान्त सदाशिवराय के साथ तिरुमलै ने इसी दुर्ग में आश्रय लिया। ओह ! तिरुमलै, उसका नाम लेते ही मैं लज्जित होती हूँ। घृणा से मेरा मुँह कड़वा हो जाता है। भयंकर युद्ध और हार के बाद विजयनगर की जनता की सुरक्षा, उनके प्राण व माल की सुरक्षा का बिल्कुल ख्याल न करके जितना हो सका उतनी राजकीय सम्पत्ति– सोना, चाँदी व जवाहरातों को घोड़ों व हाथियों पर लादकर तिरुमलै पेनुकोण्डा की ओर दौड़ा आया था न ? बेचारी प्रजा निर्दयता से मारी गयी। सारे शहर में लूटपाट मचा– विरला ही कोई अपना प्राण बचा पाया था।

इस हार के उपरान्त विजयनगर की राजशक्ति क्षीण हो गयी और पेनुकोण्डा उनकी राजधानी बनी रही। १५८५ में विजयनगर राज्य ने नदी तट को त्यागकर अपनी राजधानी को चन्द्रगिरि में बदल लिया। उनका ख्याल था कि राजधानी को नदी तट पर रखना खतरे से खाली नहीं। बीजापुर, गोलकुण्डा सुलतान किसी न

किसी तरह पेनकोण्डा के दुर्ग को गिराना चाहते थे। हाय ! कितने भयंकर हमले होते रहे। ··· आखिर १६५२ में बीजापुर सुलतान ने इस दुर्ग को जीत लिया था और हैदर अली के शासनकाल में यह मैसूर राज्य के अधिकार में आ गया। आज यह जिला आन्ध्र प्रदेश में है।

हिन्दपुर से १० मील की दूरी पर प्रसिद्ध लेपाक्षी मन्दिर है। विजयनगर की शिल्पकला की शैली पर बने इन मन्दिरों को उसकी प्राचीन गरिमा और कलात्मक सौन्दर्य के साथ आप पा सकते हैं। ताडपत्री में जो तिरुवेंकटस्वामी मन्दिर, रामलिंगस्वामी आलय आदि हैं वे भी विजयनगर के स्थापत्यकला के उत्तम नमूने हैं। सुलतानों के फौजों के क्रूर हाथों जो कुछ बचा है, उन्हें देखने आज भी कला-प्रेमी यहाँ आते रहते हैं।

वडपेण्णै की उपनदी 'चित्रावती' इस जिले में हिन्दपुर तालूके में कोडीकोण्डा के निकट प्रवेश करती है। चित्रावती और एक दूसरी उपनदी 'पापहानि' दोनों नन्दी दुर्ग पहाड़ियों से ही उत्पन्न होती हैं। चित्रावती, वोरल कोण्डा, पाकेपल्ली टीलों से होकर बहती और कोडिकोण्डा में उत्तरमुखी बनती है। इसके तट ज्यादतर ऊँचे हुआ करते हैं। इसका मार्ग भी पर्वतीय व पथरीला है। ऊँची नीची होकर बहने से इसमें तीव्र गति है। कहीं गड्डों में गिरती यह कहीं टीलों पर चढ़ उछल-कूद मचाती है। बुक्कराय पट्टणम् के पास समतल पर आते ही इसकी सारी शरारत शान्त हो जाती है ! बिल्कुल गंभीर बने धीमी चाल भरने लगती है। कई झीलों को पानी देनेवाली चित्रावती कृषिकार्य के लिए उपयोगी है ! आगे उत्तरमुखी होकर धर्मावरम् तालूके में पहुँचती है। यहाँ पर कई छोटे-छोटे झरने व नाले इसे जलदान देते हैं। कई छोटी बाँध, तालाब आदि भी बने हैं। इस तालूके के आगे भी कई छोटी नदियों का पानी मिलने से छोटी नदी चित्रावती, ताडपत्री तालूके को पारकरके कडप्पा जिले में करीब १६ मील चलने पर पेण्णै नदी में मिल जाती है। ···· इन

नदियों को जीव नदी नहीं कह सकते। ग्रीष्म ऋतु में पतली धारा व उथली नदी वननेवाली इन नदियों में वर्षाकाल में न जाने कहाँ से इतना पानी आता है, कहना मुश्किल है, बाढ़-सी आ जायेगी।

'पापहानि' नन्दि दुर्ग के उत्तरी हिस्से के कालवराय दुर्ग में उत्पन्न होकर उत्तर-पूरव की ओर वह आती है। अनन्तपुर जिले में इसके ऊपर चेन्नवरायन बाँध वना है। इसकी कुल लम्बाई १३५ मील है। यह बाँध कदरी तालूके में है। कडप्पा जिले के रायचोडी तालूके से होकर बहती यह रायचोडी, पुलिवेण्डल तालूकों की सीमा को पार करके 'वेम्बल घाटी' में उतरती है। कडप्पा तालूकों और कमलापुरम् सबतालूके से इसकी धारा अलग कर देती है। पेण्णै नदी में मिलती पापहानि को कई छोटी सरिताएँ पानी देती हैं।

'वडपेण्णै' कडप्पा जिले में आती है। जिले भर में इसकी उप-नदियाँ गुण्डेरु, सखिलेना, दिम्मलेरु, चेय्येरु, पापहानि, चित्रावती आदि जाल-सी बिछी हुई हैं। 'वोण्डीमिट्टा' समतल मैदान से तिरुपति क्षेत्र तक को जानेवाली सड़क दर्रा से होकर जाने से इसका नाम 'कडप्पा' पड़ा। कडप्पा, पुरोदत्तूर, राजमपेट, जम्मालमडुकु, पुलि-वेलताना, पटवेलु, रायचोडी, चिडतोन, कमलापुरम् तालूके इस जिले में हैं। वेलुकोण्डा, शेषाचलम्, पालकोण्डा, लंकामाली, नल्लमलै पहाड़ी मालाएँ आदि इस जिले में व्याप्त रहने से जंगल और वन्य प्रदेश अधिक मिलेंगे। करीव १८१५ वर्गमील तक जंगल फैले हुए हैं।

'वडपेण्णारु' इस जिले में पश्चिम से पूरब की तरफ बहती है और सोम शिला के निकट पूरबी घाट की श्रृंखला के दर्रों से होकर आगे बढ़ती हुई नेल्लूर में आती है। करनूल और कडप्पा नहरें उल्लेखनीय हैं। यद्यपि इन नहरों से आशातीत फल नहीं मिला है तो भी सूखे व ऊसर खेतों को सिंचन की सुविधा मिली है। वडपेण्णै के किनारे पर कण्डिकोट्टै ऐतिहासिक चिह्नों में एक है। इसके दक्षिण किनारे पर करीब २०० फुट ढेर के ढेर पत्थर पड़े हैं। इसके पीछे गंभीरता से खड़े कण्डिकोट्टै की बनावट और पेण्णै का प्रवाह बड़ा

मनोरम दृश्य है। तीव्र ढाल पर उतरती वडपेण्णै सँकरी घाटी में लहरा आती है। करीब एक मील तक इसकी चौड़ाई २०० फुट ही है। दोनों तटीय पट्टियाँ काफी ऊँची हैं। लगता है पेण्णै ने अपनी घाट काट ली है।

यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य, पहाड़ी दुर्ग के अनुकूल प्राकृतिक बनावट को देखकर 'काबा' नामक राजा ने इस दुर्ग व नगर का निर्माण किया था। बुक्कराय ने यहाँ पर एक आलय का निर्माण किया। यर्रामलै श्रेणी को चीरती हुई आती पेण्णै को वर्षा के दिनों में देखना है। फेन उगलती, फुफकारें भरती आयेगी। कदेराबाद, जपालमड्कु शहर को छूती हुई बहती यह नदी दक्षिण-पूरबमुखी होकर पुरोदत्तूर तालूके और कमलापुरम् के बीच में सीमान्त रेखा बनती है। पोट्टानातुरुती में 'कल्लमानवलंका' पेण्णै के साथ मिलती है। कमलापुरम् के निकट 'पापहानि' और थोड़ी दूर पर गुण्डेरु आ मिलती है।

करनूल जिले में उत्पन्न होनेवाली गुण्डेरु 'जमालमड्कु' तालूके, नागराजपली के पास कडप्पा जिले में प्रवेश करके जमालमड्कु, पुरोदुत्तूर तालुकों के जरिये बह आती है। इस तालूके में उप्पवागु, नल्लवागु नाले इसको पानी देते हैं। इसके आगे 'अतिनिमायपल्ली' के निकट 'गुण्डेले' वडपेण्णै से मिलती है। यह भी वर्षाकालीन नदी है।

वडपेण्णै जरा पूरब की तरफ मुड़कर 'पुष्पगिरि' पहुँचती है। यह शैव, वैष्णव क्षेत्र है। चेन्नकेशव आलय, भीमेश्वर आलय, वैद्यनाथ आलय आदि आठ मन्दिर हैं। टीलों पर खड़े ये देवालय अति प्राचीन हैं। भक्त लोग पुष्पगिरि को 'मध्य कैलाश' कहते हैं। टीले के चारों तरफ छोटे-छोटे मन्दिर हैं। यहाँ पर पेण्णै में स्नान करना और आलय दर्शन बड़े महत्व का है।

आगे 'चेन्नूर' में पेण्णै पर १९५८ में एक पुल बना है। माण्डे-पल्ली के निकट कडप्पा तालूके को छोड़कर चिदोत्त तालूके में आती

है। इस तालूके में सकिलेरु, चेययेल सरिताएँ इससे मिलती हैं।

सकिलेरु कडप्पा जिले में उत्पन्न होती है। गंगयपल्ली के निकट पटवेल तालूके में घुसकर दक्षिण की तरफ सीधी रेखा-सी बहती हुई पटवेल समतल मैदान को दो खण्डों में विभाजित करती है। इस तालूके में इसके ऊपर एक बाँध भी बना है। कडप्पा जिले में इतनी छोटी-मोटी नदियों के होते हुए भी अकाल और सुखाई का कारण इन नदियों के पानी का ठीक उपयोग नहीं किया गया है। वर्षाकाल की आती बाढ़ जलाशयों के अभाव में बेकार बह जाती है। चिदोत्त तालूके में मालेमारी पट्टणम गाँव के निकट समिलेरु पेण्णै से मिलती है।

अब पेण्णै को देखें। सखि सकिरेरु को गले लगाती हुई सोमशीला के पास सँकरी गहरी घाटी में लहरें उठाती आती पेण्णै के ऊपर सोमशीला बाँध का निर्माण हुआ है। 'नेल्लूर' ··· पेण्णै का अन्तिम प्रवाह क्षेत्र है। कण्डुकूर, कनिगिरी, कावली, कोऊर, नेल्लूर, गूडूर, सूलूरपेट, वेंगटगिरी, रापूर, आत्मगूर, उदयगिरी, पोटिली, दरसी आदि १३ तालूके इसके अन्तर्गत हैं। इस जिले का क्षेत्रफल ७९६० वर्ग मील है।

नेल्लूर जिले का पूर्वी हिस्सा बड़ा उपजाऊ है। यहाँ धान की खेती खूब होती है। पश्चिमी हिस्सा पर्वतीय है। इसके समुद्रतटीय प्रदेशों में पुलिकट उल्लेखनीय है। इस जिले के पश्चिमी सीमा पर वेंगटगिरी तालूके से कनिगिरी तालूके के उत्तर तक वेलीकोण्डा टीलों की श्रेणी है। इसके समुद्रतटीय हिस्से हरे भरे हैं। कण्डगूर, कावली, कोऊर, नेल्लूर, गूडूर, सूकूरपेट ··· इसके तटीय तालूके हैं। नेल्लूर जिले में पेण्णै के अलावा कण्डलेरु, स्वर्णमुखी, मुसि, पालेरु, मानेरु आदि छोटी नदियाँ भी बहती हैं।

नेल्लूर में पेण्णै के ऊपर बाँध बने ८५ साल हुआ है। संगम पर जो ऊपरी बाँध है वह भी काफी फायदे का है। कृष्णा के नहर से विभाजित होकर आनेवाली नहर 'वक्किमहाँ नहर' है। यह नहर

इस जिले में समुद्रतट के साथ-साथ बहकर मद्रास तक आती और यहीं समुद्र में मिलती है। उन दिनों में यह खासा अच्छा जलमार्ग रहा · लेकिन आजकल इसका मुख्यत्व कम हो गया है।

भाषा के आधार पर बँटे हुए भारतीय राज्य नदी और नहरों के पानी को लेकर कितना माथापच्ची करते आ रहे हैं, यह तो सब जानते होंगे। आकाश और सागर, हवा जैसे किसी एक की बपौती नहीं वैसे हम नदियों पर कोई अपना अधिकार जता नहीं सकता। किसी एक प्रान्त के स्वार्थलाभ व उन्नति हमारा ध्येय नहीं। सारा भारत हमारा है। समस्त भारतवासी चाहे किसी भी धर्म, जाति,प्रांत व भाषा का हो, हमारी सन्तान है। हम नदियाँ अपने पानी की एक-एक बूँद को मानव-जीवन की उत्थान, इस धरती की उन्नति व सुख-श्री के लिए लगाते रहेंगे। हम नदियों ··· देश की एकात्मभावना व सुख सम्पन्नता के लिए मेरुदण्ड हैं।

नेल्लूर जिले के मध्य भाग में पेण्णै, दक्षिण में कण्डेरु और स्वर्णमुखी तथा उत्तर में मुसि, पालेरु और मानेरु प्रवाहित होकर बंग सागर में संगमित हो जाती हैं। नेल्लूर नगर 'वडपेण्णै' के तट पर बसा है। पेण्णै आदमकूर तालूके से होकर कोऊर, नेल्लूर तालूकों के जरिये बहती है। नेल्लूर के १८ मील नीचे कई शाखाओं में बँटकर बंग सागर में एकाकार हो जाती है।

आन्ध्र प्रदेश में बहनेवाली हम नदियों की कहानी सुनने वाले आप लोगों को यह बताना चाहती हूँ कि हमारी जलसम्पत्ति को लेकर आज नवीन भगीरथों ने अपनी अथक परिश्रम व अद्‌भुत प्रतिभा के बल पर देश का कैसा नव-निर्माण कर रहे हैं।

अध्याय : १०

एक देश की आर्थिक उन्नति और प्रगति उस देश की औद्योगिक उन्नति व विकास पर निर्भर है। भारत तो नदियों का देश है।

अजस्र प्रवाहिनी नदियाँ इस भारत खण्ड को अपनी अविरल धारा से सिंचित करती रहती हैं। आम तौर पर बंगाल की खाड़ी में गिरने वाली नदियों का प्रवाह-क्षेत्र अरब सागर में गिरने वाली नदियों के प्रवाह-क्षेत्र से अधिक विस्तार का है। इनमें सबसे ज्यादा बड़ा है मेरा (गोदावरी) प्रवाह-क्षेत्र जो भारत के १० प्रतिशत क्षेत्रफल के जल को ग्रहण करता है। दक्षिण की नदियों का उद्गम-स्थल हिमाच्छादित शिखरें नहीं हैं, हमारा एकमात्र आधार वर्षा का पानी है। इसीलिए वर्षाकाल में हममें जितना पानी रहता है वह आगे कम होता जाता है। छोटी नदियाँ तो ग्रीष्मकाल में एकदम सूख जाती हैं और इसी कारण से यातायात के लिए हम नदियों का जलमार्ग कम उपयोगी है। अलावा हमारा मार्ग भी ऊबड़-खाबड़ व पथरीला है। नदी घाटी योजना, बाँधों के निर्माण द्वारा ही यहाँ समृद्धि का रास्ता खुलेगा।

अंग्रेजों के शासन में सबसे पहले बाँध निर्माण योजना को दक्षिण में कार्यान्वित करने का सारा श्रेय श्री आर्थर काटन साहब को ही मिलता है। अब तो भारत भर में नहरों का काफी विकास हुआ है। कई बाँध, जलाशय और विद्युत उत्पादन नवीन क्रान्ति उत्पन्न कर रहे हैं।

मेरी बेसिन ३,१३,३८९ वर्ग किलो मीटर है और कृष्णा का २,५९,००० वर्ग किलोमीटर है। महाराष्ट्र राज्य का क्षेत्रफल ३,०७,४७७ वर्ग किलोमीटर है जिसका समुद्री तट ७४२ किलोमीटर लंबा है। इस राज्य में प्रवाहित होने वाली कुल नदियों की लम्बाई ३,२०० कि०मीटर है। १९६१ के आंकड़े के अनुसार २६ जिलों के इस राज्य की जनसंख्या ३९.५२ मिलियन है। कोयना, कृष्णा, भीमा, मैं, पूर्णा, वैनगंगा, ताप्ती इस राज्य की मुख्य नदियाँ हैं। पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा कृषि की उन्नति के लिए विद्युत शक्ति उत्पादन, नहरें तथा जलाशयों का निर्माण हुआ है। कृषि ही इस राज्य का प्रधान पेशा है। धान, अनाज और दालें मुख्य फसलें हैं।

ईख और कपास बड़ी मात्रा में पैदा होते हैं। इस राज्य में कुल ३२ शक्कर मिलें हैं। शक्कर के उत्पादन में इसका स्थान महत्व का है।

वीर, पाक, घोड, खड़कवासिला, पूर्णा, भीमा, मूला, गिरना आदि सिंचाई की योजनाएँ मुख्य हैं। पैठन के पास गोदावरी के ऊपर बने बाँध की लम्बाई ३२,४८६ फुट है। ऊँचाई १२० फुट है। जलाशय की बायीं नहर ११५ मील लम्बी है जो औरंगाबाद, परबानी जिलों में १,४०,००० हेक्टर जमीन को पानी देती है।

कृष्णा पर 'डोम', 'पोरकल' गाँव के निकट सतारा जिले में बाँध बना है। बायीं नहर ९१ कि०मी० और दायीं ४३ कि०मी० लम्बी है। पोरकल गाँव के निकट का जलाशय की बायीं नहर १६८ कि० मीटर लम्बी है। इसी जिले में कृष्णा की उपनदी वेणया पर कान्हर में निर्मित बाँध के बायीं नहर १६ कि० मो० और दायीं नहर ४८ कि०मी० की है। इनसे १,०५,०५६ हेक्टर भूमि को फायदा मिलता है।

कृष्णा, तुंगभद्रा के संगम के बाद जहाँ कृष्णा सागर से भेंट करती है उस भू-भाग को कृष्णा डेल्टा प्रदेश कहते हैं। यहाँ पर कृष्णा की लंबाई २८० मील है। सिद्देश्वरम् में कृष्णा सँकरी तथा गहरी घाटी में प्रवाहित होकर दोनों तरफ के पहाड़ी किनारे के बीच म करीब १८६ मील वह आती है। यहाँ पर स्थित बाँध के द्वारा विद्युत उत्पत्ति ही नहीं, सूखे प्रदेश रायलसीमा को पानी मिलता है। इसके आगे ८८ मील पर बने नन्दीकोण्डा बाँध के जरिये नेल्लूर, गुण्टूर जिले फायदा उठाते हैं। टीलेनुमा पथरीले प्रदेशों को छोड़कर समतल भूमि पर प्रवेश करते ही पुलिचिण्डाला बना बाँध बिजली के उत्पादन म योग देता है। गुण्टूर के ऊपरी हिस्से के जमीनों का सिंचन करता है।

१८५५ में कृष्णा पर सबसे पहले सर आर्थर काटन ने बाँध निकाला था। अक्सर होने वाले बाढ़ों के कारण यह थोड़ा कमजोर हो गया था, खासकर १९५२ की बाढ़ ने इसे बुरी तरह बिगाड़

डाला। इसके निकट ही प्रकाशम् बैरेज का निर्माण हुआ है। यह केवल बाँध ही नहीं, पुल का भी काम देता है। आन्ध्र प्रदेश के चिरकाल के सपने को इसने एक हद तक पूरा किया है। इस बाँध से कुल १२ लाख एकड़ जमीन की सिंचाई होती है। यह ३७३६ फुट लंबी है। सड़क की चौड़ाई २४ फुट है। दोनों तरफ का फुटपाथ ५ फुट का है। पुराने बाँध से यह बाँध सौ फुट आगे है। इस बाँध से विभिन्न नहरें जाल-सी फैली हैं। कृष्णा, एल्लूरु नहर, गोदावरी डेल्टा नहरों से जोड़ा गया है। ये नहरें सिंचाई के साथ आवागमन के लिए भी उपयोगी हैं। कम्मनूर नहर, बक्किमहाँ नहर के साथ जुड़ती है।

गोदावरी डेल्टा की नहरों से भी इस डेल्टा प्रदेश में विभिन्न शाखाओं पर कई स्थान पर बाँध बने हैं। ये करीब ४००० कि०मी० लम्बी हैं। आन्ध्र प्रदेश का विस्तार २,७५,२८१ कि० मी० है। इसका समुद्री तट ९६० कि० मी० लम्बा है। १९६१ के आँकड़े के अनुसार जनसंख्या ३६ मिलियन है। सामान्य रूप से इसकी जलवायु गर्म एवं अल्प आर्द्र है। प्राकृतिक वनस्पति भी विभिन्नता में मिलती है। आन्ध्र प्रदेश में करीब ६० लाख हेक्टेयर भूमि जंगल है। वनों से काफी बढ़िया और अच्छे काष्ठ मिलते हैं। कुल क्षेत्रफल की ४२ प्रतिशत भूमि पर कृषि की जाती है। तटीय प्रदेश, खासकर डेल्टा प्रदेशों में चावल अधिक मात्रा में उगाया जाता है। अलावा कपास, मूँगफली, तम्बाकू और गन्ना मुख्य हैं।

खनिज संपत्ति की दृष्टि से भी आन्ध्र प्रदेश काफी धनी राज्य है। कोयला, लोहा, मैंगनीज, एस्बेस्टास, चूने का पत्थर मुख्य रूप से मिलते हैं। विद्युत शक्ति का तेजी से विकास हो रहा है। चीनी, कागज, सीमेंट, वस्त्र और सिगरेट आदि उद्योग मुख्य हैं। विशाखा-पट्टणम् में जल-पोत निर्माण उल्लेखनीय है। कुटीर उद्योग भी विकसित हैं। नेल्लूर जिले में यूरेनियम भी मिलता है।

विजय नगर साम्राज्य के दिनों में ही कई बाँध निकाले गये थे। उनमें चुनकेशुला बाँध भी एक है। यह तुंगभद्रा में है। करनूर-कडप्पा नहर के निर्माण का श्रेय सर आर्थर काटन को मिलता है। आजकल इसकी मरम्मतें व अभिवृद्धि की गयी हैं। श्रीचैलम् बाँध से आती नहरें भी इनको पानी देती हैं। इस जलाशय से विद्युत् उत्पादन होता है। यह जलाशय काफी विशाल है। कृष्णा और तुंगभद्रा का पानी इसमें आकर जमा किया जाएगा। कहते हैं ९० गाँव, करीब एक लाख एकड़ जमीन इस जलाशय में डूब जाएँगे। श्रीचैलम् बाँध के बाद ५४ मील पर ही नागार्जुन बाँध है। श्रीचैलम् जल विद्युत् गृह की एक महान योजना है।

इसी तरह निचला चिलेरु जल विद्युत् गृह भी मुख्य है। ऊपरी चिलेरु जल विद्युत् उत्पादन गृह १२० मेगावाट बिजली उत्पन्न करती है। निचली चिलेरु विद्युत् गृह कुल ६०० मेगावाट बिजली उत्पन्न करती है।

मच्चकुण्ड नदी आन्ध्र और उड़ीसा की सीमा बनाती है। इस पर ५३ मीटर ऊँचा बाँध बना है। जल विद्युत् उत्पादन १३५ मेगावाट है। अलावा इसके रामकुण्डम्, हुसैन सागर, विजयवाड़ा, विशाखापट्टणम्, नेल्लूर, कोत्ताकुडम् आदि जगहों पर आन्ध्र प्रदेश की औद्योगिक उन्नति के लिए आवश्यक विद्युत् शक्ति उत्पादन करने के लिए थर्मल स्टेशन बने हैं।

बेलगाम जिले में 'गोकाक' पर घटप्रभा जहाँ प्रपात के रूप में गिरती है, बाँध बना है। यह तो घटप्रभा घाटी के लिये वरदानमयी है। उसे अकाल के क्रूर पंजे से मुक्त कर देगा। बेलगाम के ३० मील पूरब की तरफ ७० मील आगे एक अवरोधक बाँध 'टूप्पल' नामक गाँव के पास निर्मित है। राज्यों के पुनर्गठन के उपरान्त पिछड़े जिले बीजापुर और बेलगाम के अभाव को दूर करने के लिये पुराने बाँध के १२ मील आगे एक अवरोधक बाँध बनाया गया है।

इस घाटी में जलाशय बनाना व बाँध-निर्माण के लिये प्र.कृतिक सुविधाएँ हैं। यह तो वेलगाम जिले में हगरी तालूके में हिडिकल गाँव में बना है। इसके लिय २० गाँव विस्थापित हुए हैं। इसकी बाएँ तरफ की नहर इसके साथ-साथ कृष्णा और घटप्रभा के वीच में चलती है। इसकी लम्बाई ७१ मील और दाएँ तरफ की ८० मील है।

मंजीरा वाँध :– आन्ध्र प्रदेश के निजामावाद जिले के खानापुर में निजाम सागर जलाशय, मंजीरा नदी के पानी को ४९,००० मिलियन क्यूबिक फुट तक रोके रखता है। मंजीरा मेरी उपनदी है। २,७५,००० एकड़ जमीन का यह सिंचन करती है। यहाँ का विद्युत गृह १५,००० किलोवाट विजली उत्पन्न करता है। इस जलाशय के पूर्व देवनूर गाँव के निकट एक वाँध बना है। अलावा उपनदियाँ मणियार, कूडलियार, अणियार, पेद्धवागु, छिन्नवागु आदि के रूप में छोटे-छोटे वाँध निर्मित हैं।

मूसी :– मूसी बड़ी खतरनाक है। अप्रत्याशित रूप से उमड़ पड़ेगी। इसकी वाढ़ हैदराबाद नगरी को डुबो देती है। वाढ़ का नियंत्रण और नगर को पीने के पानी की व्यवस्था कराने के लिये हैदराबाद नगर से २२ किमी० की दूरी पर 'कणिडपेट' नामक स्थान पर बाँध बना है। इसका नाम उसमान सागर है। इसका विस्तार १८ वर्गमील है। इसके छः भील ऊपर हिमायत सागर है जिसका विस्तार ३५ वर्गमील है।

तेलंगाना के आदिलाबाद, निजामाबाद जिलों को सिंचाई की सुविधा देने के लिये मेरी उपनदी 'गटम' के ऊपर हमारे संगम से पाँच मील ऊपर एक बाँध बना है। इसकी नहर ४८ मील लम्बी है जिसके द्वारा ८५,००० एकड़ का सिंचन होता है। कोत्तागुडम् थर्मल स्टेशन को पानी दिलाने के लिये मेरी उपनदी 'किन्नरसेनी' पर एक बाँध बना है। वैसे ही पोच्चम्मावाद जलाशय, पोच्चमावाद गाँव के

निकट मेरी धारा पर खड़ा किया गया है। यह निजामाबाद जिले में है। ७० मील लम्बी नहर द्वारा निजामाबाद, करीम नगर, कम्मम, नलकोण्डा जिलों की सिंचाई होती है। तेलंगाना प्रदेश की समृद्धि के लिए यह बाँध बड़ा उपयोगी है। आशा है इसके द्वारा करीब १६ लाख एकड़ का सिंचन संभव होगा।

धवलेश्वर बाँध ११९ साल पहले सर आर्थर काटन द्वारा बनाया गया। यह करीब १२००० फुट लम्बा है। इस बाँध के बनने के पहले मेरा बहुत-सा पानी बेकार ही समुद्र में मिल जाता था। लेकिन इस बाँध द्वारा तटवर्ती प्रदेश तथा डेल्टा प्रदेशों की उन्नति हो रही है। दो मील लम्बा इस बाँध के चार अलग-अलग हिस्से पिंजीलंका, पोपरलंका, मातुरलंका आदि टापूओं को जोड़ते हैं। यहाँ की नहरें आवागमन के योग्य हैं। करीब ८२००० एकड़ भूमि को ये पानी देती हैं।

तुंगभद्रा के बारे में मैंने पहले ही कहा है। यद्यपि इसका उद्गम-स्थान अच्छा जलग्रहण क्षेत्र है और यह ६४० किलोमीटर बहती है, फिर भी बेल्लारी, रेयचूर, अनन्तपुर, कडप्पा, करनूल जिले तुंगभद्रा के पानी से मिलने वाले लाभ से वंचित रह गये और अकाल-ग्रस्त होते जा रहे थे। इस अभाव को दूर करने के लिए ही अर्थर काटन द्वारा करनूल, कडप्पा नहरें बनीं फिर भी अधिक लाभ न मिला। आज के राज्यों के विभाजन के पहले मैं और तुंगभद्रा मैसूर-बम्बई की सीमा के रूप में ३५ मील, बम्बई-मद्रास की सीमा बनी ६२ मील, मद्रास-हैदराबाद की सीमा के रूप में १२२ मील बहा करती थी। मगर बाँध योजना बनाने में कई दिक्कतें थी। दो-एक राज्यों से सम्बन्धित होने के कारण योजना को अमल कराने में कठिनाई हुई। जून से अक्टूबर तक तुंगभद्रा में बाढ़ आयेगी।

होसपेट से तीन मील पर मल्लापुरम में इस पर बाँध बना है। यह बहुमुखी योजना है। दो विद्युत उत्पादन गृह, जलाशय,

कारखाने, पर्यटकों के उल्लास यात्रा-स्थल ··· आदि बने हैं। ऊँचे टीले पर टूरिस्ट बंगला बड़े आकर्षक ढंग से बना है। वहाँ से देखते वक्त विद्युत शक्ति केन्द्र, उपनगर की बस्तियाँ, विशाल जलाशय बड़े मनोरम लगते हैं मानों महेन्द्रपुरी हो।

बाँध की लम्बाई ७९४२ फुट और चौड़ाई १६२ फुट है। जलाशय का विस्तार १४६ वर्ग मील है। १०,८८० वर्ग मील प्रवाह क्षेत्र के पानी को यह धारण करता है। ३·५ मिलियन एकड़ फुट पानी इसमें जमा किया गया है। मल्लापुरम्, मुनीराबाद आदि दो टीलों के बीच में बाँध बनाने के लिए बेल्लारी का तरफ ३६, रेयचूर की तरफ से ४० गावों को डुबोना पड़ा। इसके बायीं तरफ के नहर पर मुनीराबाद विद्युत उत्पादन गृह है। २१७ मील लम्बी निचली नहर हम्बी से गुजरती हुई १०० फुट की ऊँचाई से प्रपात के रूप में गिरती है। इसके बाद आन्ध्र प्रदेश में जाती है। मुनीराबाद की तरफ चलती नहर मैसूर राज्य में १२७ मील चलती है। दाएँ तरफ की नहर १२२ मील की है। मैसूर और आन्ध्र दोनों प्रदेशों का सिंचन करती है। दाएँ, बाएँ दोनों नहर पर विद्युत उत्पादन गृह और १४ मील के उपरान्त एक और बिजलीघर है। ये तीनों ९९००० किलोवाट विजली उत्पन्न करते हैं। रेयचूर सूखा प्रदेश है यहाँ कृषि के विकास व सिंचाई की सुविधा देना इसका उद्देश्य है। तुंगभद्रा के बाएँ ओर की नहर अपने २४ मील से १२७ मील अर्थात रेयचूर तक यह आवागमन के योग्य जलमार्ग है।

रेयचूर में तुंगभद्रा के ऊपर राजोलिबन्दा Divrsion scheme है। तुंगभद्रा बाँध से ८० मील की दूरी पर है। यह मैसूर राज्य में ५९०० एकड़ और आन्ध्र प्रदेश में ८७००० एकड़ को पानी देता है। 'भद्रा योजना' भी एक बहुमुखी योजना है। यह सबसे ऊँचा बाँध है जिसकी ऊँचाई ६० मीटर होगी। इसकी नहरें शिमोगा, चिकमगलूर, चीवलदुर्ग, बेलारी के जिलों में १०२ लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की सुविधाएँ प्राप्त होंगी। एक जल विद्युत गृह भी बना है।

अनन्तपुर जिले के धर्मावरम् तालूके में पेरुर गाँव के पास वड पेण्णं के ऊपर बाँध बना है। पेण्णों केवल वर्षा के दिनों में बाढ़ ले आएगी, बाद में उसका पाट बालुकामय दीखेगा। इसलिए यह बाँध बड़ा उपयोगी है।

कोयना सतारा जिले में हेलवाक गाँव के पास देशमुख वाडी के बने कोयना जल विद्युत गृह एक महत्वपूर्ण योजना है। इसके प्रवाह क्षेत्र में मानसून के दिनों में अपार जल आता है। जनता की भलाई में इसका उपयोग करने, यह योजना बनी है। ३४३ वर्गमील प्रवाह क्षेत्र से १४०,००० मिलियन क्यूब्रिक फुट आनी आता है तो आप इसकी जल संपत्ति की कल्पना कर सकते हैं। अलावा सख्त उतारों से पानी का बह आने से विद्युत उत्पत्ति के लिए अनुकूल है। अरब सागर के निकट रहना एक और फायदा है। पहाड़ी के तीखी व सख्त ढलान की ओर कोयना की रुख बदलकर गिरा देने से अधिक खर्च के बिना बिजली का उत्पादन संभव हुआ है। अलावा इसके, बिजलीघर से निकलता पानी वसिष्ठा नदी के नहर से मिलकर अरब सागर में गिरती है। समुद्र तल से यह १९५० फुट की ऊँचाई पर है। १९५४ में शुरू होकर यह १९६३ में पूरा हुआ। हेलवाक गाँव से तीन मील आगे जहाँ कोयना पूरब की तरफ मुड़ती है वहीं बाँध वना है। इसके जलाशय का नाम है शिवाजी सागर। यह ११५ वर्ग किलोमीटर है। ९८५०० मिलियन क्यूबिक फुट पानी को इसमें जमा सकते हैं। इसके नहरें द्वारा सतारा, सांगली जिलों में एक लाख एकड़ जमीन की सिंचाई हो सकती है। कराड, सतारा, लोनाडे, वाई, किरलोस्कर वाडी, पंचगनी, पण्डरपुर, शोलापुर, पूना, बम्बई, कोलापुर जिलों को विद्युत शक्ति मिली है।

नागार्जुन सागर योजना बहुमुखी योजना है। नलकोण्डा जिले में मिरिचकुडा तालूके, नन्दिकोण्डा नाम के गाँव के निकट ११७०मीटर लम्बा तथा ९० मीटर ऊँचा बाँध बना है। इसके जलाशय का नाम नागार्जुन सागर है। इसका क्षेत्रफल १८५ वर्ग किलोमीटर है। सारे भारत में यह सबसे बड़ा जलाशय है। इसके दाएँ तरफ की नहर २७६ मील की है। यह गुण्टूर, करनूल, नेल्लूर जिलों को पानी देती है। बाएँ तरफ का किनारा २१८मील लम्बा है। यह तो नलकोण्डा, कम्मम, कृष्णा जिलों को पानी देती है। यहाँ का विद्युत उत्पादन गृह भी सबसे शक्तिशाली है। ५०००० किलोवाट बिजली यहाँ से उत्पन्न होती है। आवागमन के योग्य जलमार्ग होने से तटीय व्यापार खूब चलता है।

